भिक्षु वाङ्मय-१०

आचार्य भिक्षु आख्यान साहित्य

१

भरत चरित

प्रवाचक

गणाधिपति तुलसी

आचार्य महाप्रज्ञ

प्रधान संपादक

आचार्य महाश्रमण

आचार्य भिक्षु एक कुशाग्र चर्चावादी भी थे। उनका अनेक उद्भट लोगों से चर्चा करने का काम पड़ा। यह सौभाग्य की बात है कि उन चर्चा-वार्ताओं को संकलित कर एक दूरदर्शिता का परिचय दिया गया। पर उन्होंने तत्त्वज्ञान को पद्यों में बांधने का जो प्रयत्न किया, वह अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। गद्य साहित्य पढ़ने में तो सरल रहता है पर उसे अविकल रूप से स्मृति में संजो पाना अत्यंत कठिन होता है। आचार्य भिक्षु ने पद्य साहित्य की रचना लोक गीतों की शैली में की, इसलिए आज भी अनेक लोग अपने अधरों पर उन गीतों को गुनगुनाते रहते हैं। गीत याद करने में भी सुगम होते हैं। इसलिए अपढ़ लोगों के लिए भी वे परम्परित बन जाते हैं।

आचार्य भिक्षु का कवित्व अत्यन्त प्राञ्जल एवं रससिद्ध था। उन्होंने दार्शनिक साहित्य के साथ-साथ आख्यान साहित्य लिख कर भी अपनी लेखनी की कुशलता का परिचय दिया है। उनके आख्यानों में तत्कालीन लोक संस्कृति के सुघड़ बिम्ब उभरे हैं। मानव मन की अतल गहराइयों को छूने में वे सिद्धहस्त कवि थे। उनके कवित्व पर विस्तार से चर्चा करने के लिए एक पूरे ग्रंथ की आवश्यकता है।

भिक्षु वाङ्मय–१०

आचार्य भिक्षु आख्यान साहित्य

१

भरत चरित

प्रवाचक

गणाधिपति तुलसी

आचार्य महाप्रज्ञ

प्रधान सम्पादक

आचार्य महाश्रमण

सम्पादन सहयोगी

मुनि सुखलाल

मुनि कीर्ति कुमार

अनुवादक

मुनि सुखलाल

जैन विश्व भारती प्रकाशन

प्रकाशक : जैन विश्व भारती
पोस्ट : लाडनूं-३४१३०६
जिला : नागौर (राज.)
फोन नं. : (०१५८१) २२२०८०/२२४६७१
ई-मेल : jainvishvabharati@yahoo.com

© **जैन विश्व भारती, लाडनूं**

आर्थिक सौजन्य : स्व. पृथ्वीराजजी एवं स्व. विजयचंदजी छाजेड़ की पुण्य स्मृति में
धर्मपत्नी : ईलायची देवी छाजेड़
सुपुत्र एवं पुत्रवधु : अजय-स्मिता छाजेड़
पौत्री : सुलसा छाजेड़, पौत्र : मुदित छाजेड़
(सुजानगढ़-कोलकाता)

प्रथम संस्करण : २०११

मूल्य : ३००/- (तीन सौ रुपया मात्र)

मुद्रक : पायोराईट प्रिन्ट मीडिया प्रा. लि., उदयपुर 0294-2418482

सम्पादकीय

सत्य एक अगम विस्तार है। उसे अविकल रूप से समझ पाना सर्वज्ञता का ही विषय है। सर्वज्ञता एक अतीन्द्रिय अनुभूति है। उसे बौद्धिक या तार्किक दृष्टि से समझ पाना असंभव है। जब हम भगवान महावीर की वाणी का अनुशीलन करते हैं तो लगता है आगमों का ज्ञान एक अपार पारावार है। मैंने स्वयं भी आगमों की अनुप्रेक्षा की है तथा गुरुदेव आचार्यश्री तुलसी एवं आचार्यश्री महाप्रज्ञ की सन्निधि में आगम-सम्पादन के कार्य में भी मेरी भागीदारी रही है। इस सिलसिले में मैं आगमों की अपार ज्ञानराशि से अत्यन्त प्रभावित हुआ। मुझे ज्ञान के आनंत्य की एक झलक मिली। मैं केवल भगवती सूत्र की ओर दृष्टिपात करता हूं तो मुझे लगता है वह ज्ञान का विशाल खजाना है। उसमें अणु-परमाणु से लेकर समूचे लोक पर विस्तार से विचार किया गया है।

भगवान महावीर की वाणी प्राकृत भाषा में निबद्ध है। आचार्यश्री तुलसी ने उसे हिन्दी में अनूदित करने का बीड़ा उठाकर एक भागीरथ प्रयत्न किया है। आज प्राकृत को समझने वाले लोगों की संख्या अत्यंत अल्प है। सचमुच उसके हार्द को समझ पाना तो आचार्य महाप्रज्ञ जैसे कुछ विरले ही लोगों के लिए संभव है।

तेरापंथ परम्परा में पलने के कारण मैंने आचार्य भिक्षु के साहित्य को भी पढ़ा है। मैं उनकी प्रतिभा से भी अत्यन्त अभिभूत हूं। उन्होंने आगमों का मन्थन कर उसे अत्यंत कुशलता से राजस्थानी भाषा में गूंथ दिया। निश्चय ही महावीर को समझने में उन्होंने जो अर्हता प्राप्त की वैसी बहुत कम लोग कर पाते हैं। उनकी वाणी सहज ज्ञानी की वाणी है। वह स्वयं स्फुरित है। उसमें निर्मल रश्मियों एवं अनुभवों का प्रकाश है। उनकी दृष्टि स्पष्ट और सही सूझ-बूझ वाली है। उसमें जैन दर्शन के मौलिक स्वरूप पर दिव्य प्रकाश है तथा क्रांत वाणी की तीव्र भेदकता और उद्बोध है। स्व-समय और पर-समय का सूक्ष्म विवेक उनकी लेखनी के द्वारा जैसा प्रकट हुआ है, वैसा अन्यत्र दुर्लभ है। मिथ्या मान्यताओं पर उन्होंने करारा प्रहार किया है। संस्कृत व्याख्या साहित्य की बात तो दूर है उन्हें

मूल आगम भी बड़ी दुर्लभता से प्राप्त हुए होंगे। फिर भी थोड़े से समय में आगमों का गहन अध्ययन कर उन्होंने अपनी क्षीर-नीर बुद्धि का अप्रतिम परिचय दिया है।

आचार्य भिक्षु एक कुशाग्र चर्चावादी भी थे। उनका अनेक उद्भट लोगों से चर्चा करने का काम पड़ा। यह सौभाग्य की बात है कि उन चर्चा-वार्ताओं को संकलित कर एक दूरदर्शिता का परिचय दिया गया। पर उन्होंने तत्त्वज्ञान को पद्यों में बांधने का जो प्रयत्न किया, वह अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। गद्य साहित्य पढ़ने में तो सरल रहता है पर उसे अविकल रूप से स्मृति में संजो पाना अत्यंत कठिन होता है। आचार्य भिक्षु ने पद्य साहित्य की रचना लोक गीतों की शैली में की, इसलिए आज भी अनेक लोग अपने अधरों पर उन गीतों को गुनगुनाते रहते हैं। गीत याद करने में भी सुगम होते हैं। इसलिए अपढ़ लोगों के लिए भी वे परम्परित बन जाते हैं।

आचार्य भिक्षु का कवित्व अत्यन्त प्राञ्जल एवं रससिद्ध था। उन्होंने दार्शनिक साहित्य के साथ-साथ आख्यान साहित्य लिख कर भी अपनी लेखनी की कुशलता का परिचय दिया है। उनके आख्यानों में तत्कालीन लोक संस्कृति के सुघड़ बिम्ब उभरे हैं। मानव मन की अतल गहराइयों को छूने में वे सिद्धहस्त कवि थे। उनके कवित्व पर विस्तार से चर्चा करने के लिए एक पूरे ग्रंथ की आवश्यकता है।

फिर भी यह सही है कि आज राजस्थानी भाषा भी दुर्गम होती जा रही है। आचार्य भिक्षु निर्वाण द्विशताब्दी के अवसर पर १५ अक्टूबर २००४ को सिरियारी में आचार्यश्री महाप्रज्ञजी ने मुझे फरमाया कि मैं भिक्षु वाङ्मय का हिन्दी में अनुवाद करूं। मेरे लिए उनकी आज्ञा अत्यन्त आह्लादक थी। उसे शिरोधार्य कर मैंने उसी वर्ष दीपावली के दिन शुभ मुहूर्त्त देखकर अपराह्न में भिक्षु वाङ्मय के अनुवाद को प्रारंभ करने के लिए मंगल पाठ सुना। मेरे साथ कुछ और भी संत थे। मैंने संतों के साथ बैठकर एक रूपरेखा बनाई। तदनुसार मैंने कुछ साधु-साध्वियों को भी इस कार्य में जोड़ा। यह निर्णय किया कि अनुवाद की अंतिम निर्णायकता मेरी रहेगी। मेरे अवलोकन के बाद अनुवाद को अंतिम रूप दिया जा सकेगा।

आचार्य भिक्षु ने लगभग ३८ हजार पद्य परिमाण साहित्य लिखा है, ऐसा आकलन है। द्वितीय आचार्य भारमलजी ने अपने हाथ से उस साहित्य का लेखन किया। हमने उसे ही प्रमाणभूत माना है। उस समय राजस्थानी में एक ही शब्द

के अनेक पर्याय प्रचलित थे। उदाहरण के लिए हम आश्रव शब्द को लें। भिक्षु वाङ्मय में आश्रव के आसरव, आसवर, आसव, आश्व आदि अनेक रूप स्वीकृत किए गए हैं। हमने भी उस मौलिकता की सुरक्षा करते हुए उन रूप पर्यायों को उसी रूप में मूल पाठ के रूप में स्वीकार किया है।

इसी प्रकार तात्कालीन राजस्थानी में अक्षरों के साथ बिन्दुओं का भी प्रयोग बहुलता से होता था। हमने भी मूल पाठ की इस मौलिकता को यथावत् स्वीकार किया है। हो सकता है वर्तमान में ऐसा प्रचलन नहीं है पर हमने उस समय की लिपि—रूढ़ि तथा इतिहास को सुरक्षित रखने की दृष्टि से तथा मूल पाठ की सुरक्षा के लिए उसमें कोई परिवर्तन नहीं किया।

कुछ लोग राजस्थानी को एक बोलचाल की भाषा मानते हैं। पर इस भाषा के संपूर्ण वाङ्मय को देखा जाए तो लगेगा कि इसमें अभिव्यक्ति की अनुपम क्षमता है। जैनाचार्यों ने तमिल, तेलगु, कन्नड़, शूरसेनी, मराठी, गुजराती की तरह राजस्थानी भाषा में भी विपुल साहित्य लिखा है। यदि कोई विद्वान केवल तेरापंथी साहित्य का भी सम्यग् अनुशीलन करले तो उसे लगेगा कि राजस्थानी एक समृद्ध एवं समर्थ भाषा है। तेरापंथ के अनेकों आचार्यों तथा साधु-साध्वियों ने भी राजस्थानी भाषा में अपनी लेखनी चलाई है। निश्चय ही वह राजस्थानी भाषा की महत्त्वपूर्ण सेवा है।

भिक्षु वाङ्मय को हम चार भागों में बांट सकते हैं—१. तत्त्वदर्शन २. आचार दर्शन ३. औपदेशिक ४. आख्यान साहित्य।

आचार्य भिक्षु ने प्रभूत आख्यान साहित्य लिखा है। वह सारा पद्यमय है। उनके द्वारा लिखे गए आख्यानों की कुल संख्या इक्कीस है। कुछ आख्यान छोटे हैं तो कुछ बड़े। कुछ आगमाधारित हैं तो कुछ परम्परागत। उनमें तत्कालीन कला, संस्कृति, जन-जीवन आदि का सुघड़ चित्रण किया गया है। उनके द्वारा लिखित आख्यानों की समीक्षा में अनेक पुस्तकें लिखी जा सकती है। प्रस्तुत प्रसंग में भरत-चरित्र के विषय में संक्षिप्त चर्चा कर रहे हैं।

यह आख्यान आकार में आचार्य भिक्षु रचित आख्यानों में सबसे बड़ा है। आचार्य भिक्षु ने इसका मूलाधार जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति को माना है। कथा-सूत्र को जोड़ने के लिए उन्होंने अन्य स्रोतों का तथा अपनी स्वयं की मेधा का भी उपयोग किया है। इस आख्यान में भरत के ऐश्वर्य पर जितना प्रकाश डाला गया है, वह अद्भुत है। एक चक्रवर्ती होने के नाते कुछ ऐश्वर्य उन्हें सहज प्राप्त होता है तो कुछ ऐश्वर्य वे अपने भुजबल से अर्जित करते हैं। भरत के लम्बे जीवन का साठ

हजार वर्ष का काल तो युद्ध में ही गुजरता है। इस लम्बे समय में वे कहां-कहां से गुजरे हैं, उसका विस्तृत विवरण है। और तो क्या चक्रवर्तित्व को प्राप्त करने के लिए वे अपने भाई बाहुबल को ललकारने से भी नहीं चूकते। यद्यपि बाहुबल के साथ किए जाने वाले युद्ध में उनकी जीत नहीं होती, पर युद्ध का जो वर्णन किया गया है वह अत्यंत रोमांचकारी है। वैताढ्यगिरि के उस पार जाने के लिए तामस गुफा से होकर गुजरना तथा आपात-चिलातियों-आदिवासियों के साथ युद्ध करना भी अत्यंत रोमांचकारी है। इसी प्रकार गंगा और सिन्धु नदी के पार की विजय यात्रा भी अत्यंत विस्मयकारी है। इस प्रकार छह खंडों को जीतकर जब भरत विनीता में लौटते हैं तो उनका ऐश्वर्य पराकाष्ठा पर पहुंच जाता है। आचार्य भिक्षु ने उस चरम ऐश्वर्य को शब्दों में समेटने का गुरुतर सफल प्रयत्न किया है।

चवदह रत्न तथा नौ-निधान भरत के ऐश्वर्य की झबाकेदार चमक तो है ही पर १६ हजार देवता भी निरंतर उनकी सेवा में तत्पर रहते हैं। ६४ हजार राजे-महाराजे उनके अधीन हैं। उनकी सेना में ८४-८४ लाख हाथी-घोड़े और रथ तथा ९६ करोड़ पैदल सैनिक हैं। ७२ हजार नगर, ९६ करोड़ पुर, ४८ हजार पाटण, ३२ हजार जनपद ११ हजार द्रोणामुख, २४ हजार कवड़, २४ हजार मडंब तथा २० हजार सोने-चांदी के खाने उनके अधीन हैं।

उनके ४२ भौमिक महल हैं। उनमें स्त्री रत्न श्री देवी आदि ६४ हजार रानियों का अंतःपुर रहता है। प्रसंगवश उनके रूप-लावण्य की अनिंद्य चर्चा भी हुई है। एक दासी के बल का वर्णन करते हुए बताया गया है कि वह अपनी चिमटी से हीरे को चूर-चूर कर उनका तिलक करती है। ३२ हजार नर्तक यथावसर उनके सामने नृत्य करते हैं। उनके ३६० चतुर रसोइए हैं। उनके रसोड़े में प्रतिदिन ४ करोड़ मन अन्न पकता है। प्रतिदिन १० लाख मन नमक लगता है।

यह सारा वर्णन तो संकेत मात्र है। अपार वैभव का जो चित्रण किया गया है वह इस ग्रंथ को पढ़ने से ही ज्ञात हो सकता है। फिर भी ग्रन्थ का मूल लक्ष्य यह है कि भरत उस अथाह ऐश्वर्य में आसक्त नहीं हैं। यद्यपि स्वयं आदिनाथ भगवान् ने भरत की अनासक्ति का रहस्योद्घाटन किया है। पर जब लोगों को उस कथन पर सन्देह हुआ तो भरत ने बड़े ही कौशल से उसका समाधान दिया है। आचार्य भिक्षु ने भी भरत-चरित्र की ७४ ढालों में से कम से कम ४२ ढालों में भरत की अनासक्त भावना का भिन्न-भिन्न शब्द बिम्बों में इस प्रकार अनावृत चित्रण किया है–

एहवो पुन तणो छे प्रताप ए, त्याने पिण जाणे छे भरतजी विलाप ए।
ज्यांने पिण छोड देसी तत्काल ए, मोख जासी सुध संजम पाल ए।।

यह सब पुण्य का प्रताप है। भरतजी इसे भी विलाप जानते हैं। वे इसका भी तत्काल त्याग कर शुद्ध संयम का पालन कर मोक्ष जाएंगे। (ढाल २९।२९)

सांसारिक सुखों की नश्वरता का भरत चरित्र बहुत ही सम्यग् रूप से निरूपण हुआ है। वहां कहा गया है—जो पुरुष-पुण्य की कामना करता है, वह कामभोगों की कामना करता है। जिसने संसार को सारपूर्ण समझा है उसके मिथ्यात्व का महारोग है (ढाल १-२४)

जब आदर्श भवन में भरत को केवल ज्ञान होता है और वे वस्त्राभूषणों का त्याग करते हैं उसका भी बड़ा सजीव वर्णन किया गया है। उस समय अंतःपुर में किस तरह विलाप का वातावरण बनता है तथा भरतजी उसकी किस प्रकार उपेक्षा करते हैं वहां भी अनासक्त भावना का सुन्दर निदर्शन हुआ है। और जब ७०वीं ढाल में वे राजा-महाराजाओं को भौतिक सुखों की क्षणभंगुरता तथा मोक्ष सुखों का परिचय देते हैं, वह तो बहुत ही वैराग्यपूर्ण है। वे कहते हैं—

तिहां अजरामर सुखसासता, सदा अविचल रहणो तिण ठाम।
तीन काल रा सुख देवता तणां, त्यांसूं अनंत गुणा छे ताम।।

मोक्ष के सुख अजर-अमर और शाश्वत हैं। देवताओं के तीन काल के सुखों से भी वे अनंत गुण अधिक है। उस स्थान में जीव अविचल रहता है।

सचमुच आचार्य भिक्षु की लेखनी का चमत्कार आश्चर्यजनक है। यहां जो थोड़ी चर्चा की गई है वह तो केवल नमूना है। असल में तो भरत चरित्र भोग पर त्याग की विजय की अपूर्व गाथा है। उसे इस ग्रंथ रत्न को पढ़कर ही समझा जा सकता है। वैराग्य रस का इसमें अत्यंत प्रभावकता के साथ मार्मिक वर्णन किया गया है।

आचार्य भिक्षु द्वारा रचित आख्यान साहित्य का प्रथम खंड प्रकाश में आ रहा है। उसका अनुवाद अणुव्रत प्राध्यापक राजस्थानी भाषाविज्ञ मुनिश्री सुखलालजी ने किया है। इसके प्रूफरिडिंग के कार्य में मुनि कीर्तिकुमारजी व मुनि भव्यकुमारजी का भी काफी श्रम लगा है। मैं मंगलकामना करता हूं कि इस कार्य में रत सभी साधु-साध्वियों के कदम निरंतर इस दिशा में उठते रहें।

लाडनूं **आचार्य महाश्रमण**
२० फरवरी २०११

प्रकाशकीय

भिक्षु वाङ्मय का तेरापंथ के लिए आगम तुल्य महत्त्व है। आचार्य भिक्षु स्वयं आगमों को ही अपने विचार-चिन्तन का उत्स मानते हैं, पर कालक्रम से भगवान महावीर की विचार-धारा पर जो एक प्रकार की धुंध छा गई थी, उसे दूर करने में आचार्य भिक्षु का बहुत बड़ा योगदान है। इसीलिए उनका वाङ्मय तेरापंथ के लिए आगम साहित्य से कम नहीं है। वह तेरापंथ के रथ की धूरी के समान है।

एक संत—दार्शनिक के रूप में आचार्य भिक्षु को जगत् के सामने लाने का श्रेय आचार्यश्री तुलसी और आचार्यश्री महाप्रज्ञ को है। यद्यपि चतुर्थ आचार्य जयाचार्य भी आचार्य भिक्षुमय ही थे। इसलिए उन्हें दूसरा भिक्षु भी कहा जा सकता है। पर उन्होंने आचार्य भिक्षु पर जो कुछ लिखा वह केवल राजस्थानी में था तथा उसका यथेष्ट प्रचार-प्रसार भी नहीं हो सका। आचार्य तुलसी और आचार्य महाप्रज्ञ ने आचार्य भिक्षु को पुनर्जन्म दिया। आपके प्रयासों से दार्शनिक जगत् में आचार्य भिक्षु के प्रति एक नया श्रद्धा भाव जागा। आचार्य भिक्षु की वाणी केवल वाङ्मय नहीं है अपितु अनुभवों का अखूट खजाना है। पर राजस्थानी भाषा में होने के कारण वह वर्तमान लोगों के लिए अगम्य बनती जा रही है। आचार्यश्री महाश्रमणजी ने अपने गुरुदेव के इंगित की आराधना करते हुए भिक्षु वाङ्मय का हिन्दी में अनुवादन करने का जो कार्य अपने हाथ में लिया वह अत्यंत सामयिक है। हम उनको शत-शत श्रद्धा नमन करते हैं।

राजस्थानी भाषा को राज्य मान्यता देने का एक प्रयास भी यदा-कदा होता रहता है। भिक्षु वाङ्मय इस प्रयास में एक मजबूत कड़ी बन सकता है। आचार्य भिक्षु को राजस्थानी के एक प्रबल संरक्षक के रूप में प्रस्थापित करने का भी यह एक महत्त्वपूर्ण अवसर है। हमें आशा ही नहीं विश्वास है कि संपूर्ण भिक्षु वाङ्मय का हिन्दी अनुवाद सामने आने से राजस्थानी भाषा का भी गौरव बढ़ेगा।

आचार्यश्री ने भिक्षु वाङ्मय के प्रकाशन के लिए जैन विश्व भारती को अवसर प्रदान किया यह हमारे लिए सौभाग्य की बात है। जैन विश्व भारती तेरापंथ की तो एक प्रतिनिधि संस्था है ही, जैन समाज में भी इसका अपना महत्त्वपूर्ण स्थान है। विश्व भारती के अनेकविध गतिविधियां हैं। आगम साहित्य का प्रकाशन भी जैन विश्व भारती द्वारा हो रहा है। विश्व भारती द्वारा प्रकाशित आगमों को विद्वानों ने एक महार्घ्य महत्त्व प्रदान किया है। अन्य साहित्य का भी काफी समादर हुआ है। अब आचार्य भिक्षु के आख्यान साहित्य का प्रथम खंड प्रकाशन में आ रहा है। यह बहुत प्रसन्नता की बात है।

भिक्षु वाङ्मय के सम्पादन में परम पूज्य आचार्यश्री महाश्रमणजी का अमूल्य समय तो लगा ही है पर उनके निर्देशन में मुनिश्री सुखलालजी एवं मुनिश्री कीर्तिकुमारजी ने भी श्रम किया है। उसके लिए हम उनके प्रति श्रद्धानत हैं।

प्रस्तुत भिक्षु वाङ्मय की साहित्य शृंखला तेरापंथ के अनुयायियों के लिए तो उपयोगी सिद्ध होगी ही पर अन्य जिज्ञासुजनों के लिए भी तत्त्व दर्शन में सहायक बनेगी। यही मंगलभावना है।

वाङ्मय प्रकाशन में आर्थिक सहयोगदाता व मुद्रक के प्रति भी हार्दिक आभार।

२७ फरवरी २०११

सुरेन्द्र चोरड़िया
अध्यक्ष
जैन विश्व भारती

आमुख

आगम साहित्य को चार अनुयोगों में विभक्त किया गया है। द्रव्यानुयोग, गणितानुयोग, चरणकरणानुयोग तथा कथानुयोग। द्रव्यानुयोग—दार्शनिक दृष्टि है, गणितानुयोग—विस्तार दृष्टि है। चरणकरणानुयोग—आचार-शास्त्रीय दृष्टि है। धर्मकथानुयोग घटना परक दृष्टि या जीवन-परक दृष्टि है। सभी अनुयोगों का अपना-अपना सापेक्ष महत्त्व है।

द्रव्यानुयोग को समझना हर आदमी के लिए सहज नहीं है। इसीलिए द्रव्य तत्त्व को समझाने के लिए प्रमाण शास्त्र में प्रतिज्ञा, हेतु, दृष्टांत, उपनय तथा निगमन के रूप में पंचावयव की व्यवस्था है। विज्ञ लोगों के लिए प्रतिज्ञा और हेतु ही पर्याप्त हैं। पर सामान्य आदमी को समझाने के लिए दृष्टांत, उपनय तथा निगमन का प्रयोग भी तर्कशास्त्र में अपेक्षित माना गया है। दृष्टांत को ही हम कथा आख्यान कह सकते है। इसी दृष्टि से सभी धर्म परम्पराओं में पुराण साहित्य का विस्तार हुआ है। पुराण साहित्य मुख्यतः जीवन चरित्र या कथा-भाग ही है। मूलतः वह प्राकृत और संस्कृत में है। यों आगमों में भी कथानकों की सरस व्यवस्था है। ज्ञाताधर्मकथा में कथानकों का जिस प्रकार रुचिर ग्रंथन किया गया है वह अत्यन्त प्रबोधक तो है ही पर साहित्य की दृष्टि से भी उसका लालित्य अतुल है।

पर धीरे-धीरे प्राकृत और संस्कृत का स्थान अपभ्रंश तथा देसी भाषाओं ने ले लिया। जैन मुनियों ने भी अनेक क्षेत्रीय भाषाओं में आख्यान साहित्य की रचना की है। जन साधारण को प्रतिबोध देने के लिए जैन संतों ने विपुल मात्रा में राजस्थानी साहित्य की भी संरचना की है। यद्यपि राजस्थानी जैन साहित्य की पहुंच अन्य विद्वानों तक नहीं बन सकी। इसलिए अब तक जैन राजस्थानी साहित्य का यथार्थ मूल्यांकन नहीं हो पाया। पर जैन साहित्यकारों ने राजस्थानी में जो साहित्य लिखा है वह गुणात्मक तथा संख्यात्मक दोनों ही दृष्टियों से अत्यन्त महत्त्व पूर्ण है।

उन्नीसवीं शताब्दी में तेरापंथ के प्रवर्तक आचार्य भिक्षु ने द्रव्यानुयोग, चरणकरणानुयोग तथा कथानुयोग की दृष्टि से प्रभूत साहित्य लिखा है। द्रव्यानुयोग की दृष्टि से उनकी नौ पदार्थ, अनुकम्पा चौपई, श्रद्धा की चौपई आदि अनेक रचनाएं

अत्यंत महत्त्वपूर्ण हैं। चरणकरणानुयोग की दृष्टि से आचार की चौपई, बारहव्रत चौपई आदि रचनाएं प्रमुख मानी जाती हैं।

गणितानुयोग पर उनकी कोई कृति उपलब्ध नहीं होती। पर यह सही है कि उनका गणित का ज्ञान प्रौढ़ था। स्वर-विज्ञान तथा शकुन विज्ञान से तो वे परिचित थे ही। पर उनका ज्योतिष विज्ञान भी निर्मल था। उन्होंने संवत् १८१७ में आषाढ़ शुक्ला पूर्णिमा के सूर्यास्त के आसपास ७ बजकर २५ मिनट पर तेरापंथ की नींव डाली थी, यह एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण काल-गणना का प्रतीक है। ज्योतिष के ज्ञान के बिना ऐसा मुहूर्त्त निकाल पाना बहुत कठिन है। यह मुहूर्त उन्होंने स्वयं निकाला या किसी गणितज्ञ से निकलवाया यह कहना कठिन है, पर ज्योतिर्विदों का फलादेश बताता है कि इस घड़ी पल में स्थापित होने वाला संघ हजारों वर्ष तक अविकल-अविचल रूप से चलेगा।

यह सुनिश्चित है कि उन्होंने कथानुयोग पर सर्वाधिक पद्य साहित्य की रचना की है। प्रस्तुत भरत चरित्र उनकी महत्त्वपूर्ण कृति है।

आचार्य भिक्षु का सारा आख्यान साहित्य संगीतमय है। वैसे सृष्टि की समस्त रचना भी संगीतमय ही है। जिसे अनहदनाद कहा जाता है। शब्द में दो प्रकार की क्षमता होती है। एक अर्थ-अभिव्यक्ति की तथा दूसरी ध्वनि-प्रकंपन की। पहली क्षमता भावात्मक है। वह हमारे भावतंत्र को प्रभावित करती है। दूसरी क्षमता भौतिक है। वह हमारे शरीर तंत्र से गुजर कर भावतंत्र को भी प्रभावित करती है। आचार्य भिक्षु ने अपने काव्य से भावतंत्र को तो प्रभावित किया ही है पर उसका अपना साहित्यिक मूल्य भी है। साथ ही साथ उसमें ध्वनि तत्त्व की भी एक गहरी संयोजना है।

वैज्ञानिकों का अभिमत है कि संगीत का स्वर शरीर में एक प्रकार का प्रकंपन पैदा करता है, जिससे रक्त संचार तेज होता है। उससे विषैले तत्त्व निवारित होकर निसर्ग मार्गों से बाहर प्रवाहित हो जाते हैं। असल में ध्वनि तरंगों की विशेष आवृत्ति से मानव मस्तिष्क की रासायनिक-विद्युतीय संरचना प्रभावित होती है। इससे एंडोरफीन तत्त्व का स्राव शुरू हो जाता है। उससे सुख-दुख, उन्माद-शोक आदि भावनाओं का केन्द्र लिम्बिक सिस्टम के न्यूरोन एंडोरफीन को संग्रहित कर लेता है। फलतः मानसिक रोग के कारण अव्यवस्थित जैव विद्युतीय परिपथ सामान्य परिस्थिति में आ जाता है। संगीत के माध्यम से इलेक्ट्रोमेग्नेटिक क्षमता उत्पन्न होती है जो स्नायुजाल पर वांछनीय प्रभाव डाल कर उसकी सक्रियता को ही नहीं बढ़ाती अपितु विकृत चिंतन को रोक कर मनोविकार को भी मिटाती है।

आचार्य भिक्षु के जमाने में भले ही यह वैज्ञानिक शोध प्रस्तुत नहीं हुई हो पर वे

इस तथ्य से परिचित थे कि संगीत का मनुष्य के मन पर गहरा प्रभाव होता है। भले ही उन्होंने संगीत का विधिवत् प्रशिक्षण नहीं लिया हो पर उनकी ग्रहण शक्ति इतनी प्रबल थी कि लोक गीतों को सुन-सुन कर उन्होंने अपने अभ्यास को प्रगुणित कर लिया। उनकी विपुल संगीतमय रचनाएं केवल उनके संगीत-प्रेम को ही नहीं दर्शाती हैं अपितु यह भी पता चलता है कि वे एक अच्छे गायक थे। उनका स्वर मधुर और संगीत प्रभावी था। संगीत उनके लिए मनोरंजन का विषय नहीं था अपितु वह उनकी साधना का एक अंग था। अपनी साधना से दूसरों को विभोर करने में भी उन्होंने सफलता प्राप्त की थी। जब आदमी संगीत की गहराई में उतर जाता है तो न केवल स्वयं ही लीन हो जाता है अपितु दूसरों को भी उसमें लीन बना देता है।

यह सच है कि दुनियां में कवित्व बहुत दुर्लभ है। वह आदमी को एक प्राकृतिक वरदान के रूप में उपलब्ध होता है। अभ्यास से भी आदमी का कवित्व पुष्ट होता है, पर जो प्रकृति से प्राप्त होता है उसकी महिमा कुछ अलग ही होती है। आचार्य भिक्षु एक रससिद्ध कवि थे। पद्य साहित्य की अनेक विशेषताएं होती हैं। पहली बात तो यह है कि पद्य में थोड़े में बहुत कुछ संकेत भर दिए जा सकते हैं। दूसरी बात यह है कि वह न केवल सुग्राह्य होता है अपितु उसके याद रखने में भी सुविधा रहती है। जिस बात को लोक-चेतना में स्थापित करना हो उसके लिए पद्य रचनाएं सशक्त माध्यम बनती हैं। बहुत सारे संतों ने वाणियां बोली हैं, वे अधिकांश पद्य में ही हैं। महावीर-बुद्ध से लेकर कबीर, तुलसी, सूरदास तक अनेक संत इसके प्रबल साक्ष्य हैं। आचार्य भिक्षु भी उसी संत-परम्परा के एक अंग हैं। सचमुच उनके विचार-प्रचार में उनकी संगीत रुचि ने बहुत बड़ा योग दिया है। लोक चेतना को पकड़ पाने में उनके काव्य का अकृत्रिम होना भी बहुत बड़ी बात है। गहन से गहन तथ्य को भी इतने साफ, सरल और बेधड़क रूप से प्रकट करते हैं कि वह अपने आप सुगम बन जाता है। अनेक लोगों ने उनके पद्य साहित्य को कंठस्थ कर लोक चेतना को जागृत करने की परम्परा को आगे बढ़ाया है।

भरत चरित्र की रचना विवेचनात्मक है। चूंकि संतजनों को अपने श्रोताओं को निरंतर बांधे रखने के लिए कथा सूत्र को इस तरह लम्बाना पड़ता है जिससे वे अपने आपको अपने आसपास के वातावरण से जुड़े हुए अनुभव कर सकें। भरत चरित्र में गांव, नगर, भवन, शरीर, रथ, घोड़े, शास्त्र आदि अनेकों प्रसंगों का विस्तार से वर्णन किया गया है। यहां हम उनके द्वारा किए गए अश्व-रत्न का हूबहू वर्णन प्रस्तुत करते हैं—

'वह कमलामेल (जिसके दोनों खड़े कान आपस में मिलते हैं) अश्वरत्न अस्सी

अंगुल प्रमाण ऊंचा, एक सौ साठ अंगुल लम्बा, मध्य भाग परिधि निन्यानवें अंगुल, गर्दन (मस्तक से घुटने तक) बीस अंगुल, घुटने चार अंगुल, घुटने के ऊपर जंघा सोलह अंगुल, खुर चार अंगुल हैं। उसके समस्त अंग हृष्ट-पुष्ट, सुन्दराकार, प्रशस्त, मनोहर, विशिष्ट एवं सुलक्षण गुणों को धारण करने वाले हैं। वह जातिवान, निर्दोष , विनीत एवं आज्ञाकारी है। उसने कभी चाबुक का प्रहार नहीं सहा। उसका शरीर दोनों पार्श्व में ऊंचा, मध्य भाग में संकड़ा तथा अत्यन्त सुदृढ़ है। उसका तेज, पराक्रम, धैर्य-साहस अत्यन्त गाढ़ है।

उसकी आंखें नींद में भी बंद नहीं होती। वे कमलपत्र की तरह सुशोभन हैं। उसका चंचल शरीर अपने स्वामी का कार्य करने में पूर्ण समर्थ है।

उसके खुर सुन्दर तथा चच्चर पुट चरण धरती तल पर आघात करते हुए चलते हैं। वह दोनों पैर एक साथ उठाता है। पैरों से धरती का खनन एवं गड्ढा नहीं करता। वह कमल नाल एवं पानी पर भी अपने बल-पराक्रम से चलता है।

माता की जाति और पिता के कुल–इन दोनों पक्षों से पूर्ण निर्मल है। शुक्ल पिता पक्ष के कारण वह अत्यंत मेधावी, बुद्धिमान एवं स्वामीभक्त है। वह दुर्बुद्धि नहीं अपितु भद्र स्वभाव वाला है। उसकी रोमराजि, अत्यंत पतली, सुकुमार एवं स्निग्ध है। उसकी छवि, कांति मनोहर है। वह देवता के मन एवं पवन की गति को भी अपनी गति से पराजित कर देता है। वह ऋषीश्वर की तरह क्षमावान है। वह पानी, अग्नि, रेणु, कर्दम-कीचड़, धूलभरी राहों, नदी तट, पर्वत शिखर, गिरि-कन्दराओं आदि अनेक सम-विषम स्थानों को लांघने में जरा भी हिचकिचाहट नहीं करता। वह सवार के इशारे से चलता है। वह यथावसर हिनहिनाता है। उसे आलस्य, नींद, शीत-ताप नहीं घेरते। वह स्थान की मर्यादा देखकर ही मलमूत्र का विसर्जन करता है।

जातिवान मातृपक्ष से उत्पन्न होने के कारण उसकी घ्राणेन्द्रिय-नासापुट अत्यन्त सुगंधित हैं। उसके श्वासोच्छ्वास से कमल के फूल जैसी सुवास आती है। वह युद्धभूमि में सुदक्ष सुभट पर भी दंड की तरह अचानक प्रहार करता है। खेद-खिन्न होने पर भी अश्रुपात नहीं करता। उसका रक्त तालुआ निर्दोष है। इस तरह उसके गुण अगणित हैं।'

सामान्य आदमी क्या घुड़सवार को भी घोड़े का तथा उसके गुणसूत्रों का इतना सूक्ष्म ज्ञान होना कठिन है। आचार्य भिक्षु ने इसका बड़ी सुघड़ता से वर्णन किया है। घोड़े के आभूषणों का भी अति विस्तृत वर्णन है। (ढाल. ४१-४२)

यह तो घोड़े का एक उदाहरण है, पर आचार्य भिक्षु ने रथ, चक्र, वज्र आदि

अनेकानेक वस्तुओं का यथा प्रसंग इतना हूबहू विवरण प्रस्तुत किया है कि वह दृश्य सामने खड़ा होता हुआ सा प्रतीत होता है।

इसी प्रकार जहां भरत के राज्याभिषेक का वर्णन आता है उसे इतना विस्तार से बताया गया है कि पाठक चकित रह जाता है। मंच की संरचना एवं साज-सज्जा के साथ-साथ इस नयाचार (प्रोटोकोल) का भी बड़ी शालीनता से वर्णन किया गया है कि मंच पर कौन व्यक्ति किस दिशा की सीढ़ियों से आकर कहां आसन ग्रहण करता है तथा वह किस प्रकार चक्रवर्ती भरत का वर्धापन करता है।

बतीश सहंस राजा तिण अवसरे, आया अभिषेक मंडप मांहि।
अभिषेक पीढ रे प्रदक्षिणा करे, चढिया उत्तर पावडिया ताहि।।

(ढाल ५९ दोहे)

उस अवसर पर बत्तीस हजार राजे अभिषेक मंडप में आये और अभिषेक पीढ की प्रदक्षिणा कर उत्तर दिशा की सीढ़ियों से ऊपर चढ़े।

सेनापति, गाथापति, बढ़ई तथा पुरोहित—ये चारों रत्न तथा शेष राजा आदि दक्षिण दिशा की सीढ़ियों से अभिषेक पीढ पर चढ़ते हैं। अन्य सब लोगों का भी अपना-अपना नयाचार नियत है।

इस प्रकार भरत चरित्र में तात्कालिक राज्य व्यवस्था एवं नयाचार पर भी बहुत ही सुन्दर एवं सविस्तार वर्णन किया गया है।

सामान्यतया कवि और संत दो भिन्न दिशाएं मानी जाती हैं। कवि रसराज श्रृंगार का वाहक माना गया है। संत अध्यात्म वादी होते हैं। पर आचार्य भिक्षु सभी रसों के उद्गाता हैं। यद्यपि उनका मुख्य प्रतिपाद्य शांत रस ही रहा है। पर यथास्थान उन्होंने श्रृंगार रस पर भी चर्चा की है। उन्होंने स्वयं कहा है—

बिन कारण कहणो नहीं नारी रूप श्रृंगार।
यथातथ्य कहतां थकां, दोष नहीं छे लिगार।।

अर्थात्—संत को बिना प्रयोजन नारी-रूप श्रृंगार की बात नहीं करना चाहिए। पर प्रसंगोपात्त यथार्थ वर्णन करने में कोई दोष नहीं है।

भरत चरित्र में स्त्रीरत्न श्रीदेवी आदि नारी पात्रों के शरीर, रूप, लावण्य, वस्त्राभूषणों की भरपूर चर्चा की गई है। पर उसमें कहीं भी श्रृंगार की मादकता नहीं है अपितु यथार्थ का चित्रण है।

भरत चरित्र में भरत का पूरा चरित्र तो चित्रित है ही उनके पिता ऋषभदेव, माता

मरुदेवा, बाहुबली आदि ९९ भाई, ब्राह्मी-सुंदरी बहनों तथा श्रीदेवी आदि ६४ हजार रानियों के अन्त:पुर का भी विशद वर्णन है।

इसी प्रकार छह खंड पर विजय यात्रा के साथ सैन्य बल एवं बाहुबल के साथ युद्ध का रोमांचक वर्णन।

चौदह रत्न तथा नौ निधान का लोमहर्षक वर्णन।

१६ हजार देवता ६४ हजार राजे-महाराजे तथा विराट् सैन्य परिवार के साथ विनीता में पुनरागमन।

राज्य संचालन करते हुए भी विरक्ति के उपाय।

भगवान् ऋषभ द्वारा भरत की अनासक्ति की घोषणा, नागरिकों का उस पर संदेह तथा भरत द्वारा समुचित समाधान।

चक्रवर्ती के रूप में भव्य–राज्याभिषेक।

आदर्श भवन में अनित्य भावना भाते हुए केवलज्ञान।

राजाओं को धर्मोपदेश तथा धर्मप्रचार करते हुए मोक्ष का भी विशद वर्णन। आदि-आदि।

भिक्षु चरित्र की कुल ७४ ढालें व दोहे हैं। वे सब वैराग्य भाव से परिपूर्ण हैं।

भरत चरित

भरत चरित

दुहा

१. भरत चक्रवत नी वारता, जंबूदीप पन्नंती माहि।
तिण अनुसारे हूं कहूं, ते सुणजों चित ल्याय।।

२. तिण कालें ने तिण समें, तीजा आरा नी वात।
वनीता नगर रलीयांमणी, ते प्रसिध लोक विख्यात।।

३. ते लांबी जोजन बारें तणी, पहली नव जोजन जांण।
अर्धभरत रे मझ भाग छें, तिणरा जिणवर कीया छें वखांण।।

४. धनपती नामें देवता, ते सक्रइंद्र नो लोकपाल।
तिण नीपजाइ आपरी बुधकरी, वनीता नगरी विसाल।।

५. तिण दोलों कोट सोवन तणों, ते सोभ रह्यों छें अनूप।
अनेक मणी रत्नां रा कांगरा, पांचवर्णा छें इधिक सरूप।।

६. गढ ऊपर त्यां कांगरा करी, परिमंडत छें अभिराम।
ते दीपतों दहदीपमांन छें, झिगझिगाट रही छें तांम।।

७. ते नगरी अलकापुर सारिखी, जांणें प्रतख देवलोक।
प्रमोद हरख कीला करे, सूखी घणा छें लोक।।

८. रिध भवनादिकें संयुक्त छें, ते निरभय छें भय रहीत।
समिरिध लोक वसें सहु, धन धानादिक सहीत।।

भरत चरित्र

दोहा

१. जंबूद्वीप प्रज्ञप्ति में भरत चक्रवर्ती की वार्ता है। मैं उसी के अनुसार कह रहा हूं। उसे चित्त लगा कर सुनें।

२. तीसरे आरे की बात है। उस काल और उस समय में विनीता नाम की रमणीय नगरी थी। वह लोक में प्रसिद्ध-विख्यात है।

३. वह बारह योजन लंबी और नौ योजन चौड़ी है। अर्ध भरत क्षेत्र के मध्य भाग में बसी उस नगरी का स्वयं जिनेश्वर ने वर्णन किया है।

४. शक्रेन्द्र के लोकपाल धनपति नामक देवता ने अपने बुद्धि-कौशल से विशाल विनीता नगरी की रचना की।।

५. विनीता के चारों ओर अनुपम स्वर्णमय परकोटा शोभित हो रहा है। अनेक पंचवर्णी मणि-रत्नों के कंगूरों से वह अधिक सुरूप दिखाई दे रही है।

६. उसका किला अभिराम कंगूरों से परिमंडित है। वह अपनी जगमगाहट एवं दिव्यता से दीप्तिमान लग रहा है।

७. विनीता नगरी अलकापुरी के समान है। मानो देवलोक प्रत्यक्ष हो गया हो। वहां के लोग प्रमोद, हर्ष और क्रीड़ा करते हुए सुखपूर्वक रहते हैं।

८. वे ऋद्धि, भवन आदि से संयुक्त हैं, निर्भय हैं। धन और धान्य आदि से समृद्ध हैं।।

९. वनीता नगरी दीठां थकां, परमोद हरखवंत हुवैं लोग।
तिण दीठां चित्त प्रसन हुवे, वारुंवार छें देखवा जोग।।

१०. देखणवाला ना जूजूआ, प्रतिबंब दीसे तिण माहि।
तिणरों विस्तार छें अति घणो, ते पूरों केम कहवाय।।

११. तिण नगरी रों अधिपती, रिषभ जिणेसर जांण।
त्यांरो थोडों सों वर्णव करुं, ते सुणजो चुत्तर सुजांण।।

ढाळ : १

(लय : मम करो काया माया कारमी)

पुन तणा फल एहवा।।

१. ते रिक्षभ जिणंद मोटा राजवी, हेमवंत ज्यूं प्रसिध विख्यात रे।
ते पुत्र छें नाभराजा तणों, मोरादेवी रांणी रों अंगजात जी।।

२. इण अवसरपणी काल में, हूआ छें प्रथम राजांन जी।
ते प्रथम तीर्थंकर दीपता, गुणरतनां री छें खांन जी।।

३. त्यांरो मात-पिता रो कुल निरमलो, ते जुगलीयां तणी छें ओलाद जी।
ते चव आया स्वार्थ सिध थकी, त्यांरे सरीर रे परम समाध जी।।

४. एक सहंस नें आठ लखणां करी, सरीर सोभे छें अनूप जी।
सोवनवरणी काया तेहनीं, त्यांरो इचर्यकारीयो रूप जी।।

५. रिषभदेव कुमरपणें रह्या, वीस लाख पूर्व लग जांण जी।
पछें जुगलीया धर्म दूरों करे, राज बेठा छें मोटे मंडाण जी।।

६. ते राज करें छें रूडी रीत सूं, खोटी नहीं छें त्यांरी नीत जी।
ते रेंत रिख्या सावधांन छें, त्यांमें असल राजा तणी रीत जी।।

७. कला बोहीत्तर पुरुष नीं, चोसठ महिला ना गुण ताहि जी।
वळे विगनांन कर्म एकसों, ए तीनूं दीया लोकां नें सीखाय जी।।

९. विनीता नगरी को देखकर लोग प्रमुदित एवं हर्षित हो जाते हैं। उसे देखकर चित्त प्रसन्न हो जाता है तथा बार-बार देखने की इच्छा होती है।

१०. दर्शक को वहां अपने भांति-भांति के प्रतिबिंब दिखाई देते हैं। उसका विस्तार बहुत अधिक है। उसे पूरा कैसे कहा जा सकता है?।

११. जिनेश्वर ऋषभ उस नगरी के अधिपति हैं। मैं उनका थोड़ा-सा वर्णन कर रहा हूं। चतुर लोग उसे ध्यानपूर्वक सुनें।

ढाळ : १

ऐसे होते हैं पुण्य के फल।

१. जिनेश्वर ऋषभ बड़े राजा हैं। हेमवंत पर्वत की तरह विख्यात हैं। नाभि राजा एवं मोरा देवी रानी के अंगजात पुत्र हैं।

२. इस अवसर्पिणी काल में वे पहले राजा तथा पहले तीर्थंकर हुए हैं। वे दीप्त गुण रूपी रत्नों की खान हैं।

३. उनके माता-पिता का कुल निर्मल है। वे यौगलिकों की संतान हैं। वे सर्वार्थ सिद्ध देवलोक से च्युत होकर आए हैं। उनके शरीर में परम समाधि है।

४. उनकी अनुपम कंचनवर्णी काया एक हजार आठ शुभ लक्षणों से सुशोभित है। उनका रूप आश्चर्यकारक है।

५. ऋषभ सम्राट् बीस लाख पूर्व वर्ष तक युवराज रहे। फिर यौगलिक परंपरा से हटकर ठाठ-बाट से राज्यासीन हुए।

६. वे कुशलता से राज्य करते हैं। उनकी नीति में कोई खामी नहीं है। वे अपनी प्रजा की सुरक्षा के प्रति सावधान हैं। वे राजधर्म का सम्यग् अनुपालन करते हैं।

७. उन्होंने पुरुषों की बहोत्तर कलाओं, महिलाओं की चौसठ कलाओं तथा कथनी-करणी की समानता का सभी लोगों को प्रशिक्षण दिया।

८. वळे असी मसी नें कसी तणों, ए तीनूंइ सीखाया छें कांम जी।
लोकां नें करवा चलू कीया, तिणसूं करवा लागा ठांम ठांम जी।।

९. तिण रिखभ राजा रे दोय रांणीयां, सुनंदा सुमंगला जांण जी।
ते रूप में अपछरा सारिखी, डाही घणी चुतर सुजांण जी।।

१०. ते लावण जोवन करे सोभती, चोसठ कला तणी जांण जी।
अस्त्रीना सर्व गुणां सहीत छें, त्यांरा जिणवर कीया बखांण जी।।

११. छ लाख पूर्व वरसां तणा, ॠक्षभ जिणंद हूवा ताहि जी।
जद सुमंगला रांणी री कूख में, भरत चक्रवत उपना आय जी।।

१२. सवा नवमास पूरा हूआं, भरतजी जन्मीया ताहि जी।
व्राहमी जन्मी त्यरि जोडलें, वनीता राजध्यांनी रे माहि जी।।

१३. त्यांरा जन्म महोछव कीया घणा, अनुक्रमें दीयों त्यांरो नांम जी।
सुखे समाधे मोटा हुआ, चंपक वेल ज्यूं गिरी गुफा तांम जी।।

१४. अनुक्रमें अठांणू पुत्र जन्मीया, रांणी सुमंगला तांम जी।
ते सहोदर भाइ भरतजी तणा, त्यांरों पिण जूआ-जूआ नांम जी।।

१५. एक जोडलो सुनंदा राण जन्मीयों, बाहुबल नें सुंदरी तांय जी।
पछें सुनंदा राणी तणी, कूख खुली नहीं कांय जी।।

१६. एक सो पुत्र नें दोय पुत्रीयां, रिषभ देव जी रे हुआ तांम जी।
ते सगलाइ उत्तम जीव छें, ते रूप में छें अभिरांम जी।।

१७. मोक्षगामी सारा इण भवे, साल रूंख रे साल परिवार जी।
आठुइ कर्म खपाय नें, सगला जासी मोख मझार जी।।

८. उन्होंने असि, मषि एवं कृषि इन तीनों कर्मों का भी लोगों को प्रशिक्षण दिया। उसी के अनुसार स्थान-स्थान पर लोगों ने कार्य करना शुरू कर दिया।

९. ऋषभ राजा के सुनंदा और सुमंगला नाम की दो रानियां हैं। वे रूप में अप्सरा सरीखी तथा अत्यंत कुशल, चतुर एवं प्रवीण हैं।

१०. वे लावण्य तथा यौवन से सुशोभित, चौसठ कलाओं में कुशल एवं समस्त स्त्री-गुणों से संपन्न हैं। जिनेश्वर ने उनका विस्तार से वर्णन किया है।

११. ऋषभ की आयु जब छह लाख पूर्व हुई तब सुमंगला रानी की कुक्षि में भरत चक्रवर्ती उत्पन्न हुए।

१२. सवा नौ महीनों के पूर्ण होने पर विनीता नगरी में भरतजी का जन्म हुआ। ब्राह्मी उनके युगल के रूप में पैदा हुई।

१३. बड़ी धूमधाम से उनका जन्मोत्सव तथा अनुक्रम से नामकरण किया गया। वे वैसे ही सुख-समाधिपूर्वक बड़े हुए जैसे चंपक लता गिरि गुफा में विकसित होती है।

१४. सुमंगला ने क्रमशः अट्ठानवें अन्य पुत्रों को भी जन्म दिया। वे सब भरत के सहोदर भाई हैं। उनके अलग-अलग नाम हैं।

१५. सुनंदा ने बाहुबल (पुत्र) तथा सुंदरी (पुत्री) के रूप में एक युगल को जन्म दिया। उसके बाद सुनंदा के कोई संतान नहीं हुई।

१६. इस प्रकार ऋषभ राजा के सौ पुत्र एवं दो पुत्रियां पैदा हुईं। वे सब रूप में सुंदर एवं उत्तम जीव हैं।

१७. शाल वृक्ष का परिवार शाल ही होता है, उसी प्रकार ऋषभ के सारे पुत्र-पुत्रियां इसी भव में आठों कर्मों का क्षय कर मोक्षगामी होंगे।

१८. तेसठ लाख पूर्व वरसां लगें, श्रीरिखभदेवजी कीयो राज जी।
भोगावली कर्म पूरा हूआं, काम भोग सूं गयो मन भाज जी।।

१९. सो पुत्रां ने राज बांटे दीयो, पछें लीधों छें संजम भार जी।
भरतजी राज वनीता रों करे, तिणरों सांभलजो विसतार जी।।

◆

१८. ऋषभ ने तरेसठ लाख पूर्व वर्षों तक राज्य किया। फिर जब भोगावली कर्मों का अंत हो गया तो उनका मन कामभोगों से विरक्त हो गया।

१९. उन्होंने सौ पुत्रों को राज्य बांटकर संयम ग्रहण कर लिया। विनीता पर भरत जी राज्य करने लगे। उसका विस्तार सुनें।

◆

दुहा

१. वनीता राजध्यांनी में ऊपनों, ते करें छें वनीता में राज।
भरत चक्रवत राजा मोटकों, वेरी दुसमण गया सर्व भाज।।

२. मोटो हेमवंत परवत सारिखों, वळे मेरू परबत समांन।
त्यांरी जस कीरत घणी लोक में, बहु गुण रत्नां री खांन।।

३. त्यांरा लखण बंजण गुण भला, ते पूरा केम कहवाय।
थोडा सा परगट करूं, ते सुणजो चित्त ल्याय।।

ढाळ : २

(लय : डाभ मूंजादिक नी डोरी)

१. भरत नांमें छें मोटो राजांन, तिणरो पुन घणों असमांन।
ते तो हुओ छें चक्रवत पहिलों, तिणरी जस कीरत रही फेलों।।

२. ते तो उत्तम पुरुष साख्यात, ते प्रसिध लोक विख्यात।
ते सतव करनें साहसीक, मरजादा मांहे रहे ठीक।।

३. बल प्राकम छें त्यांरो पूरो, यां सूं इधिको नही कोइ सूरो।
त्यांरा बल रो घणो इधकार, ते सांभलजो विसतार।।

४. तुरणों पुरष छें पूरो जुवांन, ते उतकष्टो छें बलवांन।
एहवा बलवंत पुरष छें बार, इतरो बल छें एक वृक्षभ मझार।।

५. बारें वृक्षभ रा बल जितरों, एक घोडा में बल छें इतरों।
बारें घोडा में बल छें अतंत, इतरो एक भेंसो बलवंत।।

दोहा

१. विनीता राजधानी में उत्पन्न भरत विनीता पर राज करने लगे। चक्रवर्ती भरत इतने शक्तिशाली हैं कि सारे वैरी-दुश्मन दूर भाग गए।।

२. वे उत्तुंग हेमवंत ही नहीं बल्कि मेरु पर्वत के समान हैं। वे अनेक गुण-रत्नों की खान हैं। लोक भर में उनकी यश-कीर्ति फैली हुई है।

३. उनके शरीर के शुभ लक्षण और व्यंजनों का पूरा वर्णन असंभव है। मैं उनमें से थोड़ों का वर्णन करता हूं। उन्हें सभी ध्यान से सुनें।

ढाळ : २

१. भरत महान् राजा हैं। उनके पुण्य अतुल हैं। वे पहले चक्रवर्ती हैं। चारों ओर उनकी यश-कीर्ति फैल रही है।

२. वे प्रत्यक्ष उत्तम पुरुष हैं। वे लोक में विख्यात हैं। वे शौर्य से अत्यंत साहसी हैं। राज-मर्यादा का सम्यग् अनुपालन करते हैं।

३. उनका बल पराक्रम परिपूर्ण है। वे अद्वितीय शौर्यशाली हैं। उनके बल का बहुत विस्तार से वर्णन किया गया है। उसे सुनें।

४. युवा, तरुण-पुरुष उत्कृष्ट बलवान् होता है। उस जैसे बारह बलवान् पुरुषों में जितना बल होता है उतना बल एक वृषभ में होता है।

५. बारह वृषभों में जितना बल होता है उतना बल एक घोड़े में होता है। बारह घोड़ों में जितना बल होता है उतना बल एक भैंसे में होता है।

६. पांच सों भेंसा रो बल ताहि, इतलो बल एक हस्ती माहि।
पांच सों हाथ्यां रो बल सारो, इतलो बल एक सीह मझारो।।

७. दोय सहंस सीह में बल जितरों, एक अष्टापद में बल इतरों।
दसलाख अष्टापद में ताहि, इतरो बल एक बलदेव माहि।।

८. बीसलाख अष्टापद जितरो, वासुदेव माहे बल इतरो।
अष्टापद चालीसलाख में ताहि, इतरों बल एक चक्रवत माहि।।

९. कोड चक्रवत रो बल सारो, एक सामानीक इंद्र मझारो।
कोड इंद्र समानीक माहि, जितरो बल एक इंद्र ने माहि।।

१०. अनंता इंद्रां नों बल सारों, एक तीर्थंकर देव मझारो।
अठें सगलां रो बल वखांण्यों, भरतजी ना इधकार में आंण्यों।।

११. सार पुदगल लागा अडाभीड, ज्यांसूं नीपनों दढ शरीर।
शरीर रो तेज उद्योत, जांणे लागी झिगामिग जोत।।

१२. थिर संघयण छें त्यांरो गाढो, घणा चिगटा छें त्यांरा हाडो।
अंग उपंग छें त्यांरा पूरा, संठाण सर्व आकार रूडा।।

१३. रूडो वर्ण शरीर नी क्रांत, रचे रह्यों छें भली भ्रांत।
त्यांरो मीठो सुर मीठी वांणो, ते पाम्यां छें पुन्न प्रमाण।।

१४. परकत सभाव छें त्यांरो चोखों, सील आचार छें निरदोखो।
मोटा राजादिक देवे सनमांन, छोडेनें निज अभिमांन।।

१५. रोग रहीत छें त्यांरी छाया, शरीर सोभाग सहीत छें काया।
अनेक वचन बोलवा परधांन, चुतराइ जुगत बुधवांन।।

६. पांच सौ भैंसो में जितना बल होता है उतना बल एक हाथी में होता है। पांच सौ हाथियों में जितना बल होता है उतना बल एक सिंह में होता है।

७-८. दो हजार सिंहों में जितना बल होता है उतना बल एक अष्टापद में होता है। दस लाख अष्टापदों में जितना बल होता है उतना बल एक बलदेव में होता है तथा बीस लाख अष्टापदों जितना बल एक वासुदेव में होता है। चालीस लाख अष्टापदों जितना बल एक चक्रवर्ती में होता है।

९. एक करोड़ चक्रवर्ती में जितना बल होता है उतना बल एक सामानिक इंद्र में होता है। एक करोड़ सामानिक इंद्रों में जितना बल होता है उतना बल एक इंद्र में होता है।

१०. अनंत इंद्रों में जितना बल सत्त्व होता है उतना एक तीर्थंकर में होता है। यहां भरतजी के प्रकरण में सबका बल बताया गया है।

११. सार पुद्गलों से ठसाठस भरा उनका शरीर अत्यंत सुदृढ़ है। उनके शरीर का तेज-उद्योत ऐसा है जैसे जगमग ज्योति जल रही हो।

१२. उनका स्थिर संहनन अत्यंत गाढ है। उनकी हड्डियां अत्यंत स्निग्ध हैं। उनके अंगोपांग परिपूर्ण हैं। उनका संस्थान एवं आकृति अत्यंत सुरूप सुंदर है।

१३. उनके शरीर का रंग एवं कांति भली भांति रुचिकर लगती है। पुण्य के प्रमाण स्वरूप उनका स्वर एवं वाणी मधुर है।

१४. उनकी प्रकृति-स्वभाव अच्छा है। उनका शील-आचार निर्दोष है। बड़े-बड़े राजा अपना अभिमान छोड़कर उन्हें सम्मान देते हैं।

१५. उनका आभामंडल रोग रहित है। उनकी काया भी सौभाग्यमयी है। उनके वचन प्रधान, चातुर्य, युक्ति और बुद्धिमता से परिपूर्ण हैं।

१६. बल तेज प्राक्रम सारा, आउखा लग रहें एक धारा।
कदे हीण पडें नही त्यांरो, पूरो पुन संचो छें ज्यांरो।।

१७. छिद्र रहीत गाढो जिम घन, एहवो गाढो शरीर काया तन।
ते सरीर छें दोष रहीत, रूडा रूडा लखणां सहीत।।

१८. मछ झूसरो लोटों भिंगार, एहवा सरीर लखण श्रीकार।
व्रधमांन भद्रासण जांण, संख छत्र वीजणो बखांण।।

१९. पताका चक्र हल मूसल ताहि, रथ साथियो शरीर माहि।
आंकुस चंद्रमा सूर्य आकार, अगन यज्ञ थांनक श्रीकार।।

२०. सागर इंदरधज्वा प्रथवी जांण, पदमकमल नें कुंजर बखांण।
सिंघासण दंड काछवो चंग, गिर परबत घोड़ो तुरंग।।

२१. मुगट कुंडल नंदावर्त्त जांण, धनुष भालों नें भवन विमांण।
इत्यादिक रूडा लखण अनेक, त्यांमें दोष न लाभे एक।।

२२. सहंस नें आठ लखण मंगलीक, ठांमो ठांम रह्या छै ठीक।
प्रगट जूआ जूआ दीसे तांम, जांणें चित्रकारी चित्रांम।।

२३. इचर्यकारी छें हाथ नें पाय, रूडा लखण छें त्यां माहि।
ऊर्धमुख आंकुरा जिम जांण, रोम जाल ना समूह बखांण।।

२४. श्रीवछ साथीया रे आकार, गंगा आवर्त्तन ज्यूं विसतार।
मांखण जिम छें घणु सुकमाल, चीगट सहीत छें लोम जाल।।

२५. विपुल हीयों छें श्रीकार, हीए श्रीवछ लखण आकार।
हिरदा ऊपर रूड़ा थण जांणो, ते पिण लखणां सहीत पिछांणो।।

२६. उपनो आर्य खेत्र में नरेस, वनीता नगरी कोसल देश।
रूडा लखणां सहीत देह धारी, तिणरा पुन घणा छें भारी।।

१६. उनका बल, तेज, पराक्रम जोवनपर्यंत एक जैसा रहेगा। उसमें हीनता नहीं आएगी। उनके पुण्य का संचय परिपूर्ण है।

१७. उनका शरीर छिद्र रहित घन की तरह सघन है, दोष रहित है। वह अनेक शुभ लक्षणों से युक्त है।

१८-२२. उसमें मत्स्य, झूसर, भृंगार, कलश, वर्धमान, भद्रासन, शंख, चमर, पंख, पताका, चक्र, हल, मूसल, रथ, स्वस्तिक, अंकुश, चंद्रमा, सूर्य, यज्ञाग्नि, सागर, इन्द्रध्वज, पृथ्वी, पद्म-कमल, हाथी, सिंहासन, दंड, कछुआ, चंग, पर्वत, घोड़ा, मुकुट, कुंडल, नंद्यावर्त, धनुष, भाला, भवन-विमान आदि एक हजार आठ शुभ लक्षण यथास्थान विद्यमान हैं। उसमें किसी प्रकार का दोष नहीं मिलता है। वे ऐसे ऐसे अलग-अलग दीखते हैं जैसे किसी चित्रकार ने चित्र उकेरे हों।

२३. उनके हाथ-पैर आश्चर्य कारक हैं। उनमें सभी शुभ लक्षण समाए हुए हैं। उनका रोम-जाल ऊर्ध्वमुख अंकुरों के समान है।

२४. उनका रोम-जाल मक्खन जैसा सुकुमार और चिकना है। उनका आकार श्रीवत्स स्वस्तिक जैसा है। गंगा के आवर्त्तन जैसा उसका विस्तार है।

२५. उनकी छाती चौड़ी और श्रेयस्कर है। उस पर श्रीवत्स लक्षण का आकार है। उस पर सुरूप स्तन भी शुभ लक्षण युक्त हैं।

२६. भरत नरेश आर्यक्षेत्र में कौशल देश की विनीता नगरी में पैदा हुए। शुभ लक्षणों के साथ उन्होंने देह को धारण किया।

२७. ऊगा सूर्य री किरण जांण, वळे कमलगर्भ समांण।
लेप रहीत सरीर बखांण, सार पुदगल मिलीया छें आंण।।

२८. पदम कमल सुगंधे करे पूरो, कुंदग वनसपती फूल रूड़ों।
जाय जुही चंपग फूल जांण, वळे नाग केसर ना फूल बखांण।।

२९. सारंग कसतुरी गंध समांण, त्यांरा उतकष्टा गंध पिछांण।
एतला सारा सुगंध होई, एहवी सरीर नी सुगंध कसबोई।।

३०. प्रस्त छत्तीस गुण करे जुगता, दर पीढ्यां लगे राज भुगता।
छेंदाणो नहीं राज अखंड, मात पिता प्रसिध इण मंड।।

३१. निज पोतानो कुल छें चोखो, पुनमचंद ज्यूं चावो निरदोखो।
चंद्रमा नीं परें सोमकारी, दीठां नयण मन ने हितकारी।।

३२. समुद्र नी परे अखोभ छें राय, सर्व भय करनें रहीत छें ताहि।
धनपती जिम उदें हुवा भोग, आय मिलीयो छें सर्व संजोग।।

३३. अपराजित छें संग्राम मांही, किणही आगें भागें नांही।
परम विक्रम गुण अनूप, इंद्र सरीखो छें त्यांरो रूप।।

३४. दिख्या लेवा रा छें कांमी, इणहीज भव छें सिवगांमी।
चारित लेनें कर्म खपाय, अें तो जासी मुगत गढ माहि।।

३५. एहवो नरपती भरत राजांन, सर्व कार्य में सावधांन।
करे छ खंड नों राज अखंड, ते चावो छें ब्रहमंड।।

३६ त्यांरा वेंरी गया सर्व भाज, छांडे छांडे सरम नें लाज।
पुन उदे रिध संपत पाई, त्यांरी वार्ता सुणो चित्त ल्याई।।

◆

२७. ऊगते हुए सूर्य की किरण एवं कमलगर्भ के समान उनका शरीर सभी प्रकार से निर्लेप है। वह सार पुद्गलों से निर्मित है।

२८-२९. उनके शरीर में पद्म-कमल, कुंदग, जाही, जूही, चंपक, नागकेसर के फूलों तथा कपूर एवं कस्तूरी जैसी उत्कृष्ट सुगंध फूट रही है।

३०. वे छत्तीस प्रशस्त गुणों से युक्त हैं। वे वंश परंपरा से अविच्छिन्न-अखंड राज्य का उपभोग कर रहे हैं। उनके माता-पिता भी भूमंडल में प्रसिद्ध हैं।

३१. उनका कुल पूनम के चांद की तरह निर्दोष एवं लोकप्रिय है। चंद्रमा की तरह सौम्य है। उनका दर्शन ही मन और आंखों के लिए हितकारी है।।

३२. भरतजी समुद्र की तरह अक्षुब्ध एवं सब प्रकार के भय से निर्भय हैं। कुबेर की तरह भोग उनके उदय में आए हैं। सभी संयोग अपने आप जुड़ गए हैं।

३३. युद्ध में वे अपराजेय हैं। किसी के सामने वे पग पीछे नहीं देते। उनका पराक्रम अनुपम है तथा रूप इंद्र के समान है।

३४. वे इसी भव में दीक्षा ग्रहणकर शिवगामी होने वाले हैं। वे चारित्र ग्रहणकर कर्मों को क्षीण कर मुक्तिगढ़ में पहुंचने वाले हैं।

३५. ऐसे भरत राजा सब कार्यों में सावधान हैं। वे छह खंडों का अखंड राज्य करते हैं। वे पूरे ब्रह्मांड में प्रिय हैं।

३६. उनके सारे दुश्मन लज्जा और शर्म को छोड़कर भाग गए। पुण्योदय से उन्होंने ऋद्धि-संपदा प्राप्त की। उनकी कहानी दत्तचित्त होकर सुनें।

◆

दुहा

१. सितंतर लाख पूर्व नीकल्या, जब बेठा भरतजी राज।
जद पिण था पुन अति घणा, वेरी दुसमण गया सर्व भाज।।

२. सुखे समाधे राज करतां थकां, नीकल्या वरस हजार।
मंडलीक मोटों राजवी, तिणरी रिध रो घणों विसतार।।

३. एकदा प्रस्तावे राजा भरत रें, आवधसाला रे माहि।
चक्ररत्न आय ऊपनों, पूर्व पुन्य पसाय।।

४. ते चक्ररत्न अति दीपतो, दीठां नयण ठराय।
तिणरा करें महोछव किण विधें, ते सुणजो चित्त ल्याय।।

ढाळ : ३

(लय : परम सयाणी हो राणी तास गुणावली)

१. पुन प्रमाणें हो चक्र रत्न ऊपनों, तिणरो नाम सुदंसण जांण।
जोत नें कांत्र छें हो अति रलीयांमणी, तिणरा जिणवर कीया बखांण।।

२. भरत चक्री छें हो राजेसर भरत खेतनो, ज्यांरें भाग में हुंतो थो ताहि।
पुन उदेंसु हो इसरी चीजां नीपजें, तिण दीठां ई नयण ठराय।।

३. आवध घर रुखवालो हो आयो छें तिण अवसरें, तिण दीठों छें चकर रतन।
हरष संतोष हो पाम्यों तिण अति घणों, वळे अणंद पांम्यों तन मन।।

४. परम उतकष्टों हो भलों मन थयों तेहनों, प्रीत उपनी मन कोड।
हिवडो उलसी हो हरष रें वस करी, हेज भरांणो हो जोड।।

दोहा

१. सितत्तर लाख पूर्व बीतने के बाद भरतजी राज्यासीन हुए। उस समय भी उनके पुण्य प्रबल थे। उनसे सभी वैरी-दुश्मन भाग खड़े हुए।

२. सुख-समाधिपूर्वक राज्य करते हुए एक हजार वर्ष व्यतीत हो गए। बड़े मांडलिक राजा के रूप में उनकी संपदा अपार है।

३. पूर्व पुण्य के प्रसाद स्वरूप एक बार भरतजी के शस्त्रागार में चक्ररत्न उत्पन्न हुआ।

४. वह चक्ररत्न अत्यंत दीप्तिमान् था। उसे देखकर आंखें ठंडी हो जाती हैं। भरत उसका महोत्सव किस प्रकार करता है इस बात को चित्त लगाकर सुनें।

ढाळ : ३

१. पुण्य के प्रमाण के रूप में भरत को सुदर्शन चक्र की प्राप्ति हुई। उसकी ज्योति तथा कांति अत्यंत रमणीय है। जिनेश्वर ने भी उसकी प्रशंसा की है।

२. भरतजी भरतक्षेत्र के चक्रवर्ती राजेश्वर हैं। इसीलिए चक्र उनके भाग्य में था। पुण्य के उदय से ही ऐसी चीजें निष्पन्न होती हैं। उसके देखने मात्र से आंखें ठंडी हो जाती हैं।

३. शस्त्रागार का सुरक्षा अधिकारी जब शस्त्रागार में आया तो उसने चक्र-रत्न को देखा। उसके तन मन को बहुत ही हर्ष, संतोष और आनंद हुआ।

४. उसका मन अत्यंत प्रसन्न हुआ। उसमें प्रीति और उत्कृष्ट आनंद का संचार हुआ। हृदय हर्षोल्लास के कारण आनंद से भर गया।

५. ते हरष सू आयो हो चकररत्न छें तिहां, प्रदिखणा दीधी तीनवार।
दोनूं हाथ जोडी हो मस्तक चढायनें, चक्ररत्न नें कीयो नमसकार।।

६. चक्ररत्न नें हो नमण करे हरष सूं, आयो आवधसाला बार।
उवठांण साला हो भरत रे छें बारली, तिहां बेठा भरत तिणवार।।

७. ते आय ऊभा छें हो भरत जी बेठा तिहां, हाथ जोडी मस्तक चढ़ाय।
विनय करेनें हो भरतेसर राय नें, जय विजय करनें वधाय।।

८. भरत नरिंद नें हो रूडी रीत वधायनें, बोल्यों मीठी वांण।
आवधसाल में हो एक चीज अमोलक ऊपनी, चक्ररत्न परगटीयो आंण।।

९. जेहवों नें दीठो हो चक्र रत्न दीपतो, ते मांड कही सर्व वात।
ते अतंत हितकारी हो प्रथवीपति होसी आपनें, इणमें कूड नही तिलमात।।

१०. ए वचन सुणेनें हो भरतजी अति हरख हुआ, पांम्यों उतकष्टों आणंद।
कमल ज्यूं विकस्या हो वदन नयन तेहना, तन मन परमाणंद।।

११. ए चक्ररत्न उपनों हो भरत नरिंद नें, पूर्व तप ना फल जांण।
वळे संजम लेनें हो तपसा थी कर्म खपायनें, इण भव जासी निरवांण।

◆

५. वह प्रसन्नतापूर्वक चक्ररत्न के पास आया। तीन प्रदक्षिणा देकर, प्रांजली मस्तक पर रखकर चक्ररत्न को नमस्कार किया।

६. चक्ररत्न को नमस्कार कर हर्षोत्फुल्ल होकर वह शस्त्रागार से बाहर आया और भरतजी की बाहरी उपस्थान शाला में पहुंचा जहां भरत बैठे हैं।

७. उपस्थान शाला में जहां भरतजी बैठे हैं, वहां आकर उसने बद्धांजली को मस्तक पर रखकर जय-विजय कर भरतजी को बधाई दी।

८. भरतजी को सम्यग् रूप से बधाई देकर वह मधुर वाणी में बोला– शस्त्रागार में आज एक अमूल्य वस्तु के रूप में चक्ररत्न प्रकट हुआ है।

९. उसने विस्तारपूर्वक जैसा देखा वैसा बतलाया कि वह चक्ररत्न कैसा दीप्तिमान् दिखाई देता है। हे पृथ्वीपति! वह आपके लिए अत्यंत हितकारी होगा। इसमें तिलमात्र भी मिथ्या नहीं है।

१०. यह बात सुनकर भरतजी अत्यंत हर्षित हुए। उन्हें उत्कृष्ट आनंद की प्राप्ति हुई। उनका मुख और आंखें कमल की तरह विकसित हो गईं। उनका तन और मन परमानंदित हुए।

११. पूर्व तप के फल के रूप में भरत नरेंद्र की आयुधशाला में यह चक्ररत्न उत्पन्न हुआ। भरत संयम लेकर तपस्या कर कर्मों का क्षय कर इसी जन्म में मुक्ति को प्राप्त करेंगे।

◆

दुहा

१. चक्ररत्न उपनों श्रवणे सुणी, हरष सुं हाल्या आभरण अनेक।
कडग तुडिय नें केउरों, हाल्यो मस्तक मुगट वसेख।।

२. कांनां तणा कुंडल हालीया, वळे चाल्या हीया ना हार।
चाल्या पलब लांबा झूंबणा, हखत हुवो तिणवार।।

३. ऊठ्यों सिंघासण सुं उतावलों, हेठों उतरीयों राय।
पग नी पाउडी मूंकनें, कीयों उत्तरासंग ताहि।।

४. अंजली जोड मस्तक चढायनें, सात आठ पग सनमुख जाय।
डावों गोडों थोडो सो ऊंचो राखनें, जीमणो गोडों धरती लगाय।।

५. अंजली जोड मस्तक चढायनें, नमसकार कीयो परणांम।
आउधसाल रुखवाला पुरष नें, दीयें वधाइ तांम।।

६. मुगट वर्जे मस्तक तणों, आभरण दीया सर्व ऊतार।
खाअें खरचें जीवें ज्यां लगें, प्रीतदांन दीयों तिणवार।।

७. सीख देइ पाछो मोकल्यो, घणों देइ सनमांन सतकार।
हिवें बेठों सिघासण ऊपरें, किण विध करें विचार।।

ढाळ : ४

(लय : सोरठ देस मझार दुवारिका)

१. हिवें चक्ररत्न राजांण, महोछव रा करें मंडाण। आज हो।
कुण कुण विध करी ते सांभलो जी।।

दोहा

१. चक्ररत्न उत्पन्न होने की बात कानों से सुनकर भरत के कटिसूत्र, हार, कुंडल तथा मस्तक का मुकुट तक हिलने लगे।

२. हर्षित होने पर कानों के कुंडल, हृदय का हार तथा प्रलंब झूंबणे भी हिलने लगे।

३. वे फूर्ती से सिंहासन से उठ कर नीचे उतरे। पैरों से पगरखी निकाल कर उत्तरासंग किया (दुपट्टे से मुंह को ढांक लिया)।

४. बद्धांजली मस्तक पर रखकर, सात-आठ कदम सामने जाकर, बायां घुटना धरती से थोड़ा ऊपर रखकर, दायां घुटना धरती पर रखा।

५,६. बद्धांजली मस्तक पर रखकर नमस्कार कर बधाई के रूप में शस्त्रागार के आरक्षक पुरुष को अपने मस्तक के मुकुट के अतिरिक्त सारे आभूषण उतारकर दे दिए। उसे आजीवन खाए-खर्चे इतना प्रीतिदान दिया।

७. उसे पूरा सत्कार-सम्मान देकर विदा किया। सिंहासन पर बैठकर विचार कर रहे हैं।

ढाळ : ४

१. अब भरतजी चक्ररत्न के महोत्सव का आयोजन किस प्रकार से करते हैं उसे सुनें।

२. कोडंबी पुरुष बोलाय, तिणनें कहें भरतेसर राय। आज हो।
कार्य करो एक वेग सताबसूं जी।।

३. वनीता नगर मझार, अभिंतर नें बाहर।
कचरो काढो थे सगलों बूहारनें जी।।

४. मांचा ऊपर मांचा मंड, ऊंचा करो प्रचंड।
दीसत दीसें छें अति रलीयांमणा जी।।

५. वस्त्र रूडा श्रीकार, पंचवरणा विविध प्रकार।
ध्वजा नें पताका करजो तेहना जी।।

६. ध्वजा ऊपर धजा करो तास, ते उडती गगन आकास।
पताका ऊपर पताका बांधजो जी।।

७. ते धजा पताका तांम, ते करजो ठांम ठांम।
गगन आकासें सोभें लहकता जी।।

८. ध्वजा चंद्रवा चूप, त्यांमें विविध भांतरा रूप।
झूबक लटकंता त्यारिं सोभता जी।।

९. चंदण गोसीस वखांण, वळे रातो चंदण आंण।
थापानें देजो पांचूं अगल तणा जी।।

१०. चंदण कलस अनेक, वळे न्हांना घड़ा विशेख।
भर भर मूकजों रसतें सेरीयां जी।।

११. गंध सुगंध वर आंण, सेलारस अगर वखाण।
अबीर कसतुरी आंण उखेवजो जी।।

१२. इत्यादिक गंध अभिरांम, उखेवजों ठांम ठांम।
सगंध करजो सगली नगरी मझे जी।।

२. भरतजी ने अपने कौटुम्बिक पुरुष को बुलाकर कहा–तुम इस प्रकार तत्काल तेजी से कार्य शुरू करो।

३. विनीता नगरी के अंदर और बाहर के सारे कूड़े-कचरे को बुहार कर बाहर फेंको।

४. देखने में मनोरम लगने वाले ऊंचे-ऊंचे प्रचंड मंचों का निर्माण करो।

५. उन पर विविध प्रकार की पंचरंगी श्रेष्ठ और श्रेयस्कर वस्त्रों की ध्वजा-पताकाएं फहराओ।

६. आकाश में ऊंची उड़ने वाली ध्वजा पर ध्वजा एवं पताका पर पताकाएं बांधो।

७. ध्वजा-पताकाओं को स्थान-स्थान पर इस तरह लगाओ कि वे आकाश में लहर लहर कर सुशोभित हों।

८. दक्षतापूर्वक विविध प्रकार की ध्वजा-मंडपों में झाड़ लटकते हुए सुशोभित हों।

९. गोशीर्ष एवं रक्त चंदन के पांच अंगुलियों सहित हाथों के छापे लगाओ।

१०. चंदन कलश तथा छोटे-छोटे घड़े भर-भर कर राहों एवं गलियों में छिड़काव करो।

११. सेला रस, अगर, अबीर, कस्तूरी की सुरभित गंध वहां उछालो।

१२. इस प्रकार पूरी विनीता नगरी में स्थान-स्थान पर अभिराम गंध फैलाओ।

१३. तूं वेग सताब सू जाय, ए कार्य करे कराय।
आगना पाछी सूपे तूं माहरी जी।।

१४. इम सुणे भरत नी बांण, तिण कर लीधी परमाण।
हरष संतोष पामे नें नीकल्या जी।।

१५. ते नगर वनीता आय, सर्व कार्य करे कराय।
आगना तिण पाछी सूपी आयनें जी।।

१६. इम सुणी सेवग री वाय, हरष हुआ मन माहि।
भरतजी आया मंजण घर तिहां जी।।

१७. ए सावद्य कांम पिछांण, ते करें करावें जांण।
सगला छोडेनें जासी मुगत में जी।।

◆

१३. तुम तत्काल जाकर यह कार्य पूरा कर मेरी आज्ञा मुझे प्रत्यर्पित करो।

१४. भरतजी की यह बात सुनकर उसे स्वीकार कर सेवक हर्षित-संतुष्ट होकर वहां से निकला।

१५. विनीता नगरी में आकर सारे कार्य पूर्ण कर-करवाकर भरतजी को उनकी आज्ञा प्रत्यर्पित की।

१६. सेवक की बात सुनकर भरतजी मन में हर्षित हुए और वहां से उठकर अपने स्नानागार में आए।

१७. ये सारे कार्य सावद्य हैं यह जानकर भी भरतजी इन्हें करते-करवाते हैं। पर अंत में इन्हें त्यागकर मुक्ति में जाएंगे।

◆

दुहा

१. ते मंजण घर अति रलीयांमणों, मोती जाल्यां छें ठांम ठांम।
गवाख घणा ते सोभता, ते पिण घणो अभिरांम।।

२. विचित्र प्रकार ना मणीरत्न सूं, भूमितलों बांध्यों छें ताहि।
ते सूहालों अति माखण जिसों, ते पिण दीठां नयण ठराय।।

३. वळे सिनांन करवा रो मांडवों, ते पिण घणों अभिरांम।
नाणा परकार ना मणीरत्न सूं, रूडी रीत कीया चित्रांम।।

४. सिनांन करवा पीढ बाजोट छें, तिणरो विविध प्रकारनो रूप।
सिनांन करवा तिण अवसरें, बेठा भरतेसर भूप।।

५. सुखकारी पांणीये करी, वळे सुगंध पांणी असमांन।
पुफोदक सुध उदकें करी, कीयो भरतजी सिनांन।।

६. वळे मंगलीक किलांण कारणें, विघन निवारवा काज।
ए पिण सिनांन तिण अवसरें, कीधो भरत महाराज।।

७. सुखमाल सुगंध सुंदर घणों, ते रातो वस्त्र वखांण।
तिण करे लूह्यों सरीर नें, डाहे पुरुषचुतर सुजांण।।

ढाळ : ५

(लय : नाटक रचणो मांडियो रे लाल)

करें महोछव चक्र रतना रे लाल।।

१. सरस सुरभी गंध अति घणो रे, ते गोसीस चंदण विख्यात रे। राजेसर
ते आलो ततकालनो नीपनो रे लाल, तिण चंदण सूं चरच्यो गात रे। राजेसर

दोहा

१. भरतजी का स्नानागार अत्यंत मनोहारी है। उसमें अनेक जगह मोतियों की जालियां बनी हुई हैं। उसके गवाक्ष भी अत्यंत शोभाप्रद एवं अभिराम हैं।

२. विचित्र मणिरत्नों से उसका आंगन जड़ा हुआ है। वह मक्खन की भांति अति चिकना है। उसे देखने मात्र से आंखें ठरने लग जाती हैं।

३. उनका स्नान-मंडप भी अत्यंत अभिराम है। भांति-भांति के मणिरत्नों से उस पर चित्र अंकित हैं।

४. वहां स्नान करने के लिए जो पीढ-पट्ट है वह भी विविधतापूर्ण है। भरत भूपति वहां स्नान करने के लिए बैठे।

५. भरतजी ने सुखदायक, विशिष्ट, सुगंधित, शुद्ध, पुष्पोदक से स्नान किया।

६. भरतजी ने यह स्नान मंगल, कल्याण व विघ्न-निवारण के लिए स्नान किया।

७. कुशल पुरुष ने कोमल, सुगंधित एवं सुंदर लाल वस्त्र से उनके शरीर को पोंछा।

ढाळ : ५

भरतजी इस प्रकार चक्ररत्न का महोत्सव कर रहे हैं।

१. तत्काल निष्पन्न आर्द्र, सरस, सुरभित, सुगंधित गोशीर्ष चंदन से शरीर को चर्चित किया।

२. निरदोष वस्त्र रत्न ने र, रूडी रीत सुं पेंहस्या जांण रे।
ते मोल कर मूहघों अति घणो रे लाल, तोल में हलका वखांण रे।।

३. सुची पवित्र माला फूलां तणी रे, ते पांचूं वर्णां श्रीकार रे।
वळे वणक वळेपण रूपना रे लाल, रूडी रीत सूं कीयो अलंकार रे।।

४. आभरण मणी सोवन तणा रे, ठांम ठांम कीया अलंकार रे।
हार अर्धहार नें तिसरीया रे लाल, ते तिण पेंहस्या छें गला मझार रे।।

५. कडियां कणदोरों बांधीयो रे, लांबा झूंबणो सोभें लहकंत रे।
ललति सुकमाल अति सोभता रे लाल, मस्तक केस महकंत रे।।

६. नाना प्रकारना मणी रत्न में रे, कडा पेंहस्या दोनूं हाथां माहि रे।
वळे बाह्यां में पेंहस्या बहिरखा रे लाल, त्यांसु भूजा थंभी रही ताहि रे।।

७. कानें कुडल पेंहरीया रे, ते करता अतंत उद्योत रे।
मस्तक मुगट अति दीपतो रे लाल, जांणे लागी झिगामिग जोत रे।।

८. हारें करी ढांक्यो रूडी परें रे, हिवडों तेहनों भली भांत रे।
एकपटों रूडो वस्त्र तेहथी रे लाल, उत्तरासंग कीयो कर खांत रे।।

९. मुद्रिका करनें पांचूं आंगली रे, पीली दीसे छें तांम रे।
वळे आभरण पेंहस्या छें अति घणा रे लाल, त्यांरा पूरा न कह्या छें नांम रे।।

१०. कहि कहि नें कितरो कहूं रे, कल्पविरख तणी परें जांण रे।
अलंक्रत विभूषत एहवो रे लाल, अति श्रेष्ट सिणगार वखांण रे।।

११. मस्तक छत्र धरावता रे, सकोरंट फूलमाला सहीत रे।
वळे च्यार चमर वीजावता रे लाल, वळे जय जय शबद वदीत रे।।

१२. एहवा मंगलीक शब्द बोलावतो रे, अनेक गणनायक तिणरे साथ रे।
वळे दंडनायक साथे घणा रे लाल, दूतपाल संधपाल विख्यात रे।।

२. मूल्य में महंगे, पर तोल में अत्यंत हल्के, निर्दोष वस्त्ररत्न को उन्होंने सुघड़ रूप से धारण किया।

३. पंचरंगी शुचि, पवित्र फूलमाला पहनी तथा अपने शरीर को रंग-बिरंगे वणग विलेपन से अलंकृत किया।

४. स्वर्ण तथा मणियों के आभूषणों से यथास्थान अंगों को अलंकृत किया। हार, अर्द्धहार तथा त्रिसर गले में पहने।

५. कटि भाग पर कणदोरा तथा लंबा झुमका लहरा रहा है। मस्तक के केश अत्यंत ललित, सुकुमाल और महक रहे हैं।

६. विविध मणि-रत्नों वाले कड़े दोनों हाथों में पहने। बाहों में भुजबंध पहने जिससे वे स्थिर हो गईं।

७. आभा मंडल को उद्योतित करने के लिए कानों में कुंडल और मस्तक पर प्रदीप्त मुकुट पहना। जगमग ज्योति-सी जलने लगी।

८. हार से अपने हृदय को सुशोभन रूप से ढंका और एक पट वस्त्र को चतुराई से उत्तरासंग के रूप में धारण किया।

९. पांचों अंगुलियां मुद्रिकाओं से पीत दीखने लगीं। अनेक प्रकार के आभरण पहने। उनके पूरे नाम भी कहना कठिन है।

१०. मैं कह-कहकर कितनी बात कह सकता हूं। भरतजी ने कल्पवृक्ष की तरह श्रेष्ठ शृंगार से अपने आपको अलंकृत-विभूषित किया।

११. सकोरंट की फूलमाला सहित अपने मस्तक पर छत्र धारण किया। चार चमर डोलने लगे और जय-विजय के घोष गूंजने लगे।

१२. दंडनायक, संधिपाल और दूतपाल द्वारा इस प्रकार के मांगलिक शब्दों की के उच्चारण के साथ अनेक राजा उसके साथ चलने लगे।

१३. मित्री महामित्री साथे घणा रे, इसर राजादिक साथे अनेक रे।
त्यां साथे निरंद परवर्‍यों थको रे लाल, मन में हरष विशेख रे।।

१४. सरीर कीयों अति सोभतो रे, त्यांनें दीठां पांमें आणंद रे।
जांणें वादल मां सूं नीकल्यों रे लाल, रज रहीत पुनम रो चंद रे।।

१५. वळे सोम चंदरमा सारिखो रे, छ खंड तणों सिरदार रे।
धूपणों फूल गंध माला फूल नी रे लाल, तिण लीधी छें हाथ मझार रे।।

१६. महोछव करे छें चक्र रत्न तणा रे, संसार नो कारण जांण रे।
ते छोडसी सर्व सावद्य जांणनें रे लाल, इणहीज भव जासी निरवांण रे।।

◆

१३. अनेक मंत्री, महामंत्री, ईश्वर, राजाओं से परिवृत्त नरेश अत्यंत हर्ष से चलने लगे।

१४. अपने शरीर को ऐसा सुशोभित कर लिया जैसे पूनम का नीरज चांद बादलों से निकला है। उसे देखने से ही मन आनंदित हो जाता है।

१५. छह खंड के स्वामी भरतजी चंद्रमा के समान सौम्य हैं। उन्होंने धूप, फूल तथा फूलों की गंध माला हाथों में ली।

१६. सांसारिक कर्तव्य समझ कर चक्ररत्न का महोत्सव कर रहे हैं। इन सबको सावद्य समझ छोड़कर वे इसी भव में मुक्ति जाएंगे।

◆

दुहा

१. इण विध मंजणसाल थी, बारें नीकलीयों राय।
जिहां आउधसाल चक्ररत्न छें, तिण दिशि चाल्यों जाय।।

२. जब सेवग भरत राजा तणा, इसर युगराजादिक जांण।
ते पिण साथे चालीया, कर मोटें मंडांण।।

ढाळ : ६

(लय : जंबूदीप मझार रे)

१. केइ पदम कमल ले हाथ रे, वळे केयक सेवगां।
उतपल कमल नें लीया ए।।

२. एकेक हस्त मझार रे, कमल सों पत्र ना।।
गंध सुगंध तिणरो घणों ए।।

३. केकां लीया हस्त मझार रे, कमल ततकाल नों।
सहंस पत्र नो नीपनों ए।।

४. ते घणा नरा रा वृंद रे, कमल ले हाथ में।
भरत राजा पूठें चालीया ए।।

५. वळे भरतेसर लार रे, पूठें चालती।
अठारें देस री दासीयां ए।।

६. त्यांरों रूप घणों श्रीकार रे, तुरणी वय तणी।
घणी डाही चुतर छें दासीयां ए।।

दोहा

१. इस प्रकार स्नानागार से बाहर निकलकर वे जहां चक्ररत्न है उस शस्त्रागार की दिशा में चल रहे हैं।

२. भरत नरेश के सेवक, ईश्वर, युवराज आदि सज-धज कर साथ चल रहे हैं।

ढाळ : ६

१. कुछ सेवकों ने अपने हाथ में पद्‌म कमल ले रखा है तो कुछ सेवकों ने उत्पल कमल हाथ में ले रखा है।

२. कुछ लोगों के हाथ में शतपत्र कमल है। उसकी गंध अत्यंत महक रही है।

३. कुछ लोगों ने ताजे सहस्त्र पत्र निष्पन्न कमल हाथ में ले रखे हैं।

४. इस प्रकार अनेक लोग कमल हाथ में लेकर भरत राजा के पीछे चल रहे हैं।

५. अठारह देशों की दासियां भरत नरेश्वर के पीछे चल रही हैं।

६. उन तरुणी दासियों का रूप अत्यंत मनोहर है तथा वे अत्यंत कुशल एवं चतुर हैं।

७. केइ चंदण कलस ले हाथ रे, मंगलीक कारणें।
लारें लगी जाअें चली ए।।

८. इम लोटा आरीसा जांण रे, थाल कटोरीयां।
वळे केकां लीया छें वीजणा ए।।

९. वळे रत्न करंडीया जांण रे, फूल चंगेडीयां।
गूंथी माला फूलां तणी ए।।

१०. वळे चूर्ण डाबडा हस्त रे, वणक वळेपण।
गंध कसबोइ नां डाबडा ए।।

११. आभरण बहु मोला जांण रे, वळे लोम पूंजणी।
पुफ पाडल भरी चंगेडीयां ए।।

१२. केकां लीया सिंघासण हाथ रे, ते रत्नां जड्या।
छत्र चमर केकां लीया ए।।

१३. तेल कोष्ट पुडा अनेक रे, चोवा मलीयागर।
त्यांरा पुडा केकां हाथे लीया ए।।

१४. मणोसिल हींगलूं हरताल रे, वळे सरसव तणा।
त्यांरा लीया डाबडा हाथ में ए।।

१५. केकां ताल वीजणा तांम रे, हस्ते झालीया।
केकां धूप कुडछा हाथे लीया ए।।

१६. इत्यादिक बोल अनेक रे, ते सारा जूजूआ।
त्यांनें दास्यां लीया छें हाथ में ए।।

१७. ते भरत नरिंद नें पूठ रे, केरें चालती।
त्यांरी चाल घणी सुहांमणी ए।।

७. कुछ मांगलिक रूप म चंदन का कलश हाथ में लेकर राजा के पीछे चल रही हैं।

८. कुछ दासियों ने लोटा, दर्पण, थाल, कटोरियां तथा पंखे हाथ में ले रखे हैं।

९-१२. कुछ ने रत्न कटोरे, फूलों की डालियां, गूंथी हुई फूलों की माला, सुगंधित चूर्ण के डिब्बे, वणग विलेपन, सुरभित गंध के डिब्बे, बहुमूल्य आभरण, रोमों की पूंजणी, पुष्प-पाटल भरी डालियां, रत्नजड़ित सिंहासन, छत्र, चामर आदि हाथों में ले रखे हैं।

१३. कुछ ने तेलकोष्ट, चोवा मलयागर के पुड़े हाथ में ले रखे हैं।

१४. कुछ ने मणिशिल, हींगलू, हडताल सरसव के डिब्बे हाथ में ले रखे हैं।

१५. कुछ ने तालवृंत्त तथा कुछ ने धूप के कुडछे हाथ में ले रखे हैं।

१६. इस प्रकार अनेक दासियां अलग-अलग चीजें हाथ में लेकर चल रही हैं।

१७. वे सब भरत नरेन्द्र के पीछे, आस-पास चल रही हैं। उनकी गति अत्यंत सुहावनी है।

१८. हिवें भरत राजांन रे, सघली रिध जोतसूं।
बल समुदाय सहीत सूं ए।।

१९. पूजें छें चक्ररत्न रे, मोह तणें वसें।
पिण मोखगामी छें इण भव ए।।

◆

१८-१९. अब भरत नरेन्द्र समस्त ऋद्धि-संपदा, सेना-समुदाय के साथ मोह वश चक्ररत्न की पूजा कर रहे हैं। पर वे इसी जीवन में मुक्त होने वाले हैं।

◆

दुहा

१. वळे सर्व वाजंत्र वाजता थका, महा मोटी रिध सहीत।
प्रधांन वाजंत्र वाजें घणा, समकालें जुगत सहीत।।

२. संख पडह भेरी नें झलरी, मृदंग मादल विशेख।
खरमूही नें देव दुदभी, इत्यादिक वाजंत्र अनेक।।

३. निरघोष वाजंत्र वाजता, त्यांरा ऊठें शबद रसाल।
इण विध मोटें मंडाण सूं, आया आउधसाल।।

४. देखत परमांणे चक्ररत्न नें, प्रणांम कीयो तिणवार।
हिवें चक्ररत्न तिहां आयनें, पूंजणी लीधी हस्त मजार।।

५. तिण पूंजणी कर चक्ररत्न नें, प्रमार्जै चक्ररत्न।
हिवें पूजा करें चक्ररत्न री, ते सुणजों एक मन।।

ढाळ : ७

(लय : धर्म आराधीए)

पूजें चक्ररत्न नें ए।।

१. सुगंध उदक पांणी करी ए, चक्ररत्न नें करायो सिनांन।
आलो चंदण बावनों ए, तिणरो लेप लगायो राजांन।

२. गुथ्या फूलां री माला करी ए, अरचा पूजा करी राय।
वळे फूल चढावीया ए, गंध घणी त्यां माहि।।

३. ओर माला गंध चढावीया ए, वर्ण चूर्ण वस्त्र चढाय।
पछें आभर्ण चढावीया ए, विनो करे सीस नमाय।।

दोहा

१–३. इस प्रकार अनेक शंख, पडह, भेरी, झल्लरी, मृदंग, मादल, खरमुखी, देवदुंदुभि, निर्घोष आदि अनेक प्रमुख वाद्ययंत्रों के एक साथ बजते हुए रसाल निनाद एवं महान सिद्धि के साथ राजा आडंबरपूर्वक शस्त्रागार में आते हैं।

४–५ चक्ररत्न को देखते ही उसे प्रणाम कर और उसके निकट आकर हाथ में पूंजणी लेकर उसकी प्रमार्जन तथा पूजा कर रहे हैं, इसे एकाग्र होकर सुनें।

ढाळ : ७

चक्ररत्न की पूजा कर रहे हैं।

१. सुरभित पानी से चक्र को स्नान करवाया, गीले बावने चंदन से उस पर लेप लगाया।

२. फूलों की गूंथी हुई माला से अर्चा-पूजा कर अत्यंत सुगंधित फूल उस पर चढ़ा रहे हैं।

३. माला और गंध चढ़ाने के बाद वर्ण, चूर्ण, वस्त्र, आभरण आदि चढ़ाकर शीस झुकाकर उसका विनय करते हैं।

४. निरमल पातला नें स्वेत उजला ए, रूपा में चावल तांहि।
तिणसूं चक्र आगलें ए, आठ मंगलीक आलेखों राय।।

५. साथीयो नें श्रीवछसाथीयो ए, नंदावर्त्त साथीयो बखांण।
वरधमांन साथीयो ए, पांचमों भद्रासण जांण।।

६. मछ कलस आरीसो आठमों ए, ए आठोइ आलेख्या मंगलीक।
वळे उपचार पूजा करें ए, ते सुणजो राखे चित्त ठीक।।

७. फूल पाडल नें मालती तणा ए, वळे चंपा नें आसोग फूल जांण।
पुणाग अंब मंजरी ए, नवमालती फूल बखांण।।

८. धोबो भर भर फूल विखेरीया ए, चक्ररत्न रे चोफेर।
पंचवर्णा फूलां तणा ए, जांणू प्रमांणे कीया ढेर।।

९. चंदप्रभ वैडूरज रत्न में ए, कुडछा तणो डंड जांण।
कंचण मणी रत्न री ए, तिणरें भ्रांत चित्रांम वखांण।।

१०. कुडछो वैडूरज रत्न में ए, तिणमें घाल्यों किस्नागर धूप।
सुगंध तिणरो घणो ए, वळे सेहलारस धूप अनूप।।

११. इत्यादिक जात अनेक रा ए, धूपणो उखेव्यो राजांन।
त्यांरी वासावली ए, हुइ छें मघमघायमांन।।

१२. सात आठ पग पाछों आयनें ए, हेठों बेठों छें तिणवार।
आगें कीयो तिण विधें ए, तीन वार कीयो नमसकार।।

१३. नमसकार करे चक्ररत्न नें ए, नीकल्यों आउधसाला बार।
उवठांण साला आयनें ए, बेंठो सिघासण मझार।।

१४. अठारेंश्रेण प्रश्रेणी बोलायनें ए, बोल्या भरतजी आंम।
अठांही महोछव करों ए, चक्ररत्न रा ठांम ठांम।।

४-६. फिर निर्मल, पतले-पतले, चांदी जैसे श्वेत, उज्ज्वल चावल से चक्ररत्न के आगे स्वस्तिक, श्रीवत्स, नंद्यावर्त, वर्धमान, भद्रासन, मत्स्य, कलश तथा दर्पण, इन आठों ही मांगलिकों का आलेखन करते हैं तथा औपचारिक पूजा करते हैं-उसे एकाग्र होकर सुनें।

७-८. पाटल, मालती, चंपा, अशोक, पुन्नाग, नवमालती के पंचरंगे फूल अंजलि में भर-भर कर बिखेरते हुए घुटने-घुटने तक चक्ररत्न के चारों ओर ढेर लगाते हैं।

९. कुड़छे का दंड चंद्रप्रभ, वैडूर्य रत्नों का है। कंचनमणि रत्न से उस पर विभिन्न चित्र उकेरे हुए हैं।

१०. वैडूर्य रत्न के कड़छे में कृष्णागार, सेलारस आदि अनुपम सुगंधित धूप हैं।

११. इस प्रकार भरत राजा ने अनेक प्रकार के धूपों का उत्क्षेपन किया। उनकी सुरभि तरंगों से वातावरण महकने लगा।

१२. फिर सात-आठ पैर पीछे लौटकर नीचे बैठे और पहले की तरह ही तीन बार नमस्कार किया।

१३. चक्ररत्न को नमस्कार कर आयुधशाला से बाहर आए और उपस्थान शाला में आकर सिंहासन पर बैठे।

१४. अठारह श्रेणि-प्रश्रेणि के लोगों को बुलाकर भरतजी ने सबको स्थान-स्थान पर चक्ररत्न प्राप्ति का अष्ट दिवसीय महोत्सव मनाने का आदेश दिया।

१५. दांण गवादिक नों कर मूंकीयो ए, वळे मूक्यों करसण भाग।
मूंक्यों वळे दांण नें ए, वळे मूक्यों कुंदंड कुमाग।।

१६. राय सेवग म जांओ केहनें घरे ए, कोइ धरणो म पाडो लिगार।
लेहणों नही मांगणो ए, इण वनीता नगर मझार।।

१७. वळे गणका अनेक नगरी मझे ए, नाटक करों ठांम ठांम।
गीत गावती थकी ए, मोटें मंडाण कके हगांम।।

१८. वळे नाटकीया नाटक करो ए, ते देता तालोटा तांम।
मुखसूं पद बोलता ए, नगरी माहे ठांम ठांम।।

१९. ठांम ठांम बांधो माला फूल री ए, वळे दडा फूलां रा जांण।
कीला करो हर्ष सूं ए, मन माहे उजम आंण।।

२०. धजा पताका ऊंचा करो ए, धजा विजय विजयंती तांम।
पंचवर्णी सोभती ए, ते पिण बांधो ठांम ठांम।।

२१. वाजंत्र सर्व चालू करो ए, वजावो रूडी रीत।
कांनां नें सुहामणा ए, ते पिण मीठां शब्दां सहीत।।

२२. इणविध चक्ररत्न तणा ए, करो महोछव जांण।
आठ दिवस लगें ए, म्हारी आगना सूंपो पाछी आंण।।

२३. ए वचन भरतेसर नो सुणी ए, श्रेणी प्रश्रेणी कीयो प्रमांण।
हरष सहीत सुणी ए, विने सहीत बोल्या वांण।।

२४. भरतजी रा समीप थी नीकल्या ए, कह्या ते सर्व करेय कराय।
पाछी सूंपी आगना ए, भरतजी बेंठा तिहां आय।।

२५. महिमा चक्ररत्न तणी ए, कीधी कराइ दिन आठ।
पिण जांणें छें माया कारमी ए, पिण मुगत जासी कर्म काट।।

◆

१५. गौ आदि का कर माफ कर किसानों का लगान माफ कर दिया। कुदंड और कुमार्ग का त्याग कर दिया।

१६. विनीता नगरी में कोई भी राजकर्मचारी किसी के घर न जाएं, किसी घर में छापा न मारें, न लगान मांगें।

१७. नगरी में स्थान-स्थान पर नृत्यांगनाएं सज-धजकर उत्साहपूर्वक गीत गाती हुई नृत्य करो।

१८. नगरी में स्थान-स्थान पर नर्तक तालियां बजाकर मुंह से गीत-पद बोलते हुए नृत्य करो।

१९. स्थान-स्थान पर फूलों की माला, पुष्प-गुच्छ बांधो। मन में हर्ष उत्साह से क्रीड़ा करो।

२०. स्थान-स्थान पर ऊंची से ऊंची पंचवर्णी शोभनीय विजय, वैजयंती ध्वजा-पताकाएं फहराओ।

२१. सब जगह कौशल से वाद्ययंत्र बजाने शुरू करो। उनकी मधुर ध्वनि कानों को सुखदायक प्रतीत हो।

२२. इस प्रकार आठ दिनों तक चक्ररत्न का महोत्सव करो और मेरी आज्ञा मुझे प्रत्यर्पित करो।

२३. श्रेणि-प्रश्रेणि के सभी लोगों ने प्रमुदित होकर भरतेश्वर के वचनों को सुन कर उन्हें मान्य किया और विनयपूर्वक वचन बोले।

२४. भरतजी के पास से निकलकर ऊपर जो कहा वैसा किया-कराया। पुनः भरतजी के पास आकर उनकी आज्ञा उन्हें प्रत्यर्पित की।

२५. आठ दिनों तक चक्ररत्न की महिमा करी-कराई। पर वे जानते हैं कि यह सब माया कारमी है। भरतजी सब कर्मों का नाश कर अंत में मुक्त होंगे।

◆

दुहा

१. महामहिमा महोछव पूरों हुवों, आठ दिवस मझार।
चक्ररत्न तिण अवसरें, नीकल्यों आउधसाला बार।।

२. आउधसालां थी नीकल्यों, रह्यो आकास रे माहि।
सहंस जक्ष देवता परवर्यों थकों, सोभ रह्यों सूर्य जिम ताहि।।

३. परधांन वाजंत्र वाजतां थकां, निरघोष शब्द छें तास।
समक परकारें पूरतों थकों, सोभें अतंत आकास।।

४. वनीता नगरी नें मध्ये मध्य थई, चालें छें गगन आकास।
लोक नरनारी चालतों देखनें, पांमें हरष हुलास।।

५. गंगा नदी थी जीमणें कुलें, मागद तीर्थ छें ताहि।
तिण तीर्थ दिस चक्र चालीयों, धुरसु पूर्व सनमुख जाय।।

६. पूर्व सनमुख जातों देखनें, हरख्यो भरत नरिंद।
हिवडों हुलस्यों अति घणों, पांम्यों अधिक आणंद।।

७. ते चक्ररत्न छें रलीयांमणों, तिणरों रूप घणों असमांन।
ते थोडों सों परगट करूं, ते सुणो सुरत दे कांन।।

ढाळ : ८

(लय : अणंद समकत उचरे रे लाल)

चक्ररत्न रलीयामणो रे लाल।।

१. चक्ररत्न चक्र सारिखों रे लाल, तिणरी वज्ररत्न में नाभ। सुवीचारीरे।
तिणरा अरा लोहीताख रत्न में रे, ते सोभ रह्यों छें आभ। सुवीचारीरे।

दोहा

१-२. इस प्रकार आठ दिनों तक महामहिमा महोत्सव संपन्न हुआ। अब चक्ररत्न आयुधशाला से बाहर निकल एक हजार यक्ष देवताओं से घिरा हुआ आकाश में सूर्य की तरह सुशोभित हो रहा है।

३. विशिष्ट वाद्ययंत्रों की प्रतिध्वनि पूरे आकाश में परिव्याप्त हो रही है। उससे आकाश भी सुशोभित हो रहा है।

४. नगरी के बीचों बीच होकर वह आकाश में चल रहा है। सभी नर-नारी उसे देख कर उल्लसित हो रहे हैं।

५. गंगा नदी के दायें तट पर मागध तीर्थ है। सबसे पहले चक्र उस तीर्थ की दिशा में चलने लगा।

६. उसे पूर्व दिशा की ओर जाते देख भरत नरेन्द्र का हृदय अत्यंत उल्लसित होने लगा। वह बडा आनंदित हुआ।

७. वह चक्ररत्न अत्यंत रमणीय है। उसका रूप अद्वितीय है। मैं संक्षेप में प्रकट कर रहा हूं। उसे रुचिपूर्वक कान खोलकर सुनें।

ढाळ : ८

वह चक्ररत्न अत्यंत रमणीय है।

१. चक्ररत्न चक्र जैसा गोल है। उसके केंद्र में वज्ररत्न है। उसके अरों में लोहिताक्ष रत्न लगे हुए हैं। वह आकाश में सुशोभित हो रहा है।

२. जंबूनंद पीला सोना तेहमें रे लाल, चक्ररत्न री धारा वखांण।
नाणा प्रकारना मणीरत्न में रे लाल, माहिली परिध रूप पिछांण।।

३. मणी चंद्रकांतादिक रत्न री रे लाल, तिणरी जालीयां कर कीधी खांत।
वळे जालीयां मोत्यां तणी रे लाल, तिणसूं सिणगार्यों छें भली भांत।।

४. भंभा भेरी मृदंग आदि दे रे लाल, बारें वाजंत्र वाजें निरदोष।
एक वाज्यां बारोइ वाजा वाजता रे लाल, त्यांरा सबदां री पड रही निरघोष।।

५. वळे न्हांनी न्हांनी घूघरी रे लाल, तिण करनें सहीत।
त्यांरा मींठा शब्द सुहांमणा रे लाल, ते पिण वाज रह्या छें रूडी रीत।।

६. उगंता सूर्य जेहवो रे लाल, इसडो छें रूप तेजवांन।
वळे सूर्य मांडला सारिखो रे लाल, गोल आकार छें परधांन।।

७. नाणा प्रकारना मणी रत्न में रे लाल, घंटा अनेक वखांण।
तिण करनें वींट्यो अछें रे लाल, त्यांरा मींठा शब्द पिछांण।।

८. सर्व रितुना सुरभीगंध फुलडा रे लाल, त्यांरी माला बांधी ठांम ठांम।
ठांम ठांम दडा बांध्या फूलना रे लाल, लहक रह्या छें तांम।।

९. ते अधर रह्यों छें आकास में रे लाल, जांणें दूजों सूर्य आकास।
सहंस देवतां सूं परवर्यों थकों रे लाल, ते देवता अदिष्ट छें तास।।

१०. प्रधांन वाजंत्र वाजता रे लाल, मोटा शब्दां री धुन धुंकार।
लघु शब्दां री धुन नीकले घणी रे लाल, एहवों चक्ररत्न श्रीकार।।

११. ते शबद आकासें पूरतो रे लाल, तिणसूं अंबर रह्यों छें गाज।
तिण सुदंसण चक्ररत्ननों रे लाल, अधिपती भरत माहाराज।।

१२. एहवो चक्ररत्न रलीयांमणों रे लाल, गुणां सूं पूरण निरदोख।
तिणनें छोड देसी जांणे कारमो रे लाल, जासी अविचल मोख।।

२. जाम्बूनद के पीले सोने की उसकी धार है। उसकी भीतरी परिधि में भांति-भांति के मणिरत्न लगे हुए हैं।

३. चंद्रकांत आदि मणिरत्नों से चतुराई से जालियां की गई हैं। जालियों को मोतियों से कुशलतापूर्वक सजाया गया है।

४. भंभा, भेरी, मृदंग आदि बारह वाद्ययंत्र एक साथ समुचित रूप से बज रहे हैं। उनकी प्रतिध्वनि हो रही है।

५. उनके साथ छोटी-छोटी घुंघरियां भी बज रही हैं। उनकी मधुर ध्वनि अत्यंत सुहावनी लग रही है।

६. नवोदित सूर्य के मंडल की तरह वह गोलाकार एवं तेजस्वी है।

७. विभिन्न प्रकार के मणिरत्नों में अनेक घंटियों से घिरा हुआ है। उनकी ध्वनि अत्यंत मधुर है।

८. स्थान-स्थान पर सभी ऋतुओं के सुगंधित फूलों की माला तथा गुलदस्ते लहरा रहे हैं।

९. वह आकाश में निरालंब ऐसा लग रहा है जैसे कोई दूसरा सूर्य ही चमक रहा है। वह हजार देवताओं से अधिष्ठित है।

१०. प्रधान वाद्ययंत्र बज रहे हैं। उनसे तेज तथा मंद स्वरों की श्रीकार धुन निकल रही है।

११. वह स्वर आकाश में व्याप्त हो गया। उससे आकाश ही गूंजने लगा। भरत महाराज सुदर्शन चक्ररत्न के स्वामी हैं।

१२. इस प्रकार का मनोहारी चक्ररत्न गुणों से पूर्ण और दोषरहित है। भरतजी अंत में उसे भी असार समझकर छोड़ देंगे तथा अविचल मोक्ष में जाएंगे।

दुहा

१. अठां पेंहली कही ते वारता, सुतर रें अणुसार।
हिवें कथा अणुसारें हूं कहू, ते सुणजों इधिकार।।

२. अठांणु भायां नें भरत कहवाडीयो, म्हारों वचन कीजों परमांण।
चक्ररत्न ऊपनों म्हारें, तिणसूं मांनजों म्हारी आंण।।

३. अठाणु भाइ सुणे इम बोलीया, किण लेखें मांनां म्हे आंण।
म्हांनें राज बेंटी दीयो बापजी, म्हारा पुन तणें परमांण।।

४. तिणसूं आंण न मांनां म्हें थांहरी, थे मत करो कजीयो कूड।
थे जोरी करसों म्हां ऊपरें, तो म्हें जासां रिक्षभ हजूर।।

५. ए वचन न मांन्यों भरतजी, जब भेला होय तिणवार।
आय ऊभा रिक्षभ देव आगलें, करवा लागा छें पुकार।।

६. थे राज दीयों म्हांनें वांटनें, सगलां नें जूओं-जूओं तास।
ते राज खोसें म्हारों भरतजी, तिणसूं आया तुम तणें पास।।

७. आप समझावो भरत नें, ज्यूं खोसें नहीं म्हांरो राज।
राज तणा दुखीया थका, आप कनें आयां छां आज।।

८. जद रिक्षभ जिणेसर तेहनों, त्यांसूं राग नही लवलेस।
समझता जांण सारां भणी, देवा लागा उपदेस।।

दोहा

१. उपर्युक्त सारी बात सूत्र के अनुसार बताई गई है। आगे मैं जो कुछ कह रहा हूं वह कथा के अनुसार है। उस प्रकरण को सुनें।

२. भरत ने अपने सभी अट्ठानवें भाइयों को कहलवाया कि मेरी आयुधशाला में चक्ररत्न पैदा हुआ है। मेरे इस वचन को प्रमाण मानकर सब मेरी आज्ञा अनुशासन को स्वीकार करें।

३. अट्ठानवे ही भाई यह सुनकर बोले– हम तुम्हारी आज्ञा को किस हिसाब से स्वीकार करें। पिताजी ने हमारे पुण्य के अनुसार राज्य को बांटकर हमें दिया था।

४. इसलिए हम आपकी आज्ञा नहीं मानेंगे। आप झूठा झगड़ा न करें। यदि दबाव डालकर जबरदस्ती करेंगे तो हम भगवान् ऋषभ के पास जाएंगे।

५. भरतजी ने इस बात को स्वीकार नहीं किया। तब सभी भाई मिलकर ऋषभ देव के सामने आकर खड़े हुए और पुकार करने लगे।

६. आपने हम सब को बंटवारा करके अलग-अलग राज्य दिया था। अब भरत हमारा राज्य छीन रहा है। इसलिए हम आपके पास आए हैं।

७. आप भरत को समझाएं कि वह हमारा राज्य न छीने। राज्य के दुख से दुखित होकर हम आपके पास आए हैं।

८. भगवान् ऋषभ का उनके प्रति किंचित् भी अनुराग नहीं है। फिर भी उन्हें प्रतिबोध योग्य समझकर उपदेश देने लगे।

ढाळ : ९

(लय : विणजारा)

प्रतिबूझो रे, म्हें थांनें दीधों राज।

१. तिण राजसूं काज सीझें नहीं, प्रति बूझो रे।
जिणराज सूं सीझें काज, ते राज न दीयो थांनें सही।।

२. खोस्यों जाअें राज, ते राज म जांणों आपरो।
इण थोथा राज रें काज, यूं ही पचें जीव बापडो।।

३. अविचल मुगत रो राज, ते लीधो न जाअें केहनो।
तिहां भय दुख जाअें सर्व भाज, अनोपम सुख छें जेहनों।।

४. इण थोथा राज रें काज, भाइ भाइ माहो मा लड परें।
वळे छोडे सरम नें लाज, आपस में माहो मा कट मरें।।

५. तन धन नें परिवार, इहां का इहां रहसी सही।
परभव नावें लार, त्यांसूं गरज सरें नही।।

६. पेंहरें सगा नें सेंण, पहरें संचीयों धन हाथ रो।
बंधव त्रिया नें पूत, नही पेंहरें धर्म जगनाथ रो।।

७. जब लग स्वार्थ होय, तब लग मुख जी जी करें।
स्वार्थ सरीया जोय, मुख दीठांइ लड पडें।।

८. इंद्री विषय कषाय, अें अभिंतर भोभीया वस करो।
मेटो त्रिसना लाय, सुमता रस चित्त में धरो।।

९. हिरदे विमासी जोय, तन धन जोवन असासता।
तिणमें म राचो कोय, ज्यूं सुख पांमो सासता।।

१०. एहवो इथर संसार, थिर कोइ वसत दीसें नही।
तिणनें तीन धिकार, जे इणमें राच रह्या सही।।

ढाळ : ९

पुत्रों! तुम प्रतिबुद्ध बनो।

१. मैंने तुम्हें जो राज्य दिया था उससे तुम्हारा काम सिद्ध नहीं होगा। मैंने तुम्हें वह राज्य नहीं दिया जिससे तुम्हारा काम सिद्ध हो अत: प्रतिबुद्ध बनो।

२. उस राज्य को अपना राज्य मत समझो जो छीना जा सके। इस निस्सार राज्य के लिए बेचारे अनेक जीव व्यर्थ ही परेशान होते हैं।

३. मुक्ति का राज्य अविचल है। उसे कोई छीन नहीं सकता। वहां सारे भय भाग जाते हैं। उसके सुख अनुपम हैं।

४. इस थोथे राज्य के लिए भाई-भाई आपस में लड़ पड़ते हैं। लज्जा और शर्म को छोड़कर आपस में कट-मरते हैं।

५. तन, धन और परिवार यहीं के यहीं रह जाएंगे। वे परभव में साथ नहीं आएंगे। उनसे कोई गर्ज नहीं सरती।

६. संचित धन को सगे-स्वजन, भाई, स्त्री-पुत्र आदि छीन सकते हैं पर भगवान् के धर्म को नहीं छीन सकते।

७. जब तक स्वार्थ सिद्ध होता है, तब तक मुंह के सामने हांजी हांजी करते हैं। स्वार्थ सिद्ध हो जाने पर मुंह दीखते ही लड़ पड़ते हैं।

८. इन्द्रिय-विषय एवं कषाय इन आंतरिक स्वामियों को वश करो। तृष्णा के दावानल को बुझाओ। समता-रस को चित्त में रमाओ।

९. हृदय में विमर्श कर देखो। तन, धन और यौवन अशाश्वत हैं, उनमें रंजित मत होओ, जिससे कि तुम शाश्वत सुखों को पा सको।

१०. संसार ऐसा अस्थिर है। यहां कोई चीज स्थिर नहीं दिखाई देती। जो इसमें रंजित हो रहा है उसे वास्तव में तीन बार धिक्कार है।

११. सरधा सेंठी धार, नवतत रो निरणों करों।
साधपणो ल्यों सार, ज्यूं सिवरमणी वेगी वरों।।

१२. रिषभ जिणंद कहें आंम, चारित हिवडां थे आदरो।
तो पांमो अविचल ठांम, ते छें थांनक सदा समाध रो।।

१३. थे आया राज रें काज, ते राज मारग छें नरग रो।
संजम लेवो थे आज, ओ मारग मुगत नें सरग रो।।

◆

११. अपनी श्रद्धा मजबूत बनाकर, नवतत्त्वों का निर्णय करो। सारतत्त्व साधुत्व को स्वीकार करो। जिससे शिवरमणी का शीघ्र वरण कर सको।

१२. ऋषभ जिनेन्द्र यों कहते हैं– अब तुम चरित्र ग्रहण करो। उससे अविचल स्थान मोक्ष को प्राप्त करो। वह स्थान शाश्वत समाधि का है।

१३. तुम जिस राज्य के लिए आए हो वह तो नरक का मार्ग है। आज संयम का मार्ग ग्रहण करो। यह मार्ग स्वर्ग और मुक्ति का है।

◆

दुहा

१. श्री रिषभ तणी वांणी सुणे, आयों घट में ग्यांन।
कांम नें भोग त्यांनें सर्वथा, लागा जेंहर समांन।।

२. हाथ जोडीनें इम कहें, म्हें सरध्या तुमना वेंण।
थे तारक भव जीवना, मोंनें मिलीया साचा सेंण।।

३. म्हें कांम नें भोग थी ऊभग्या, म्हें जांण्यो इथर संसार।
म्हें राज रमण रिध छोडनें, लेसां संजम भार।।

४. रिषभ जिणेसर इम कहें, थारे लेणों संजम भार।
घडी जाऔं ते पाछी आवें नही, तिण सूं मत करों ढील लिगार।।

५. जब अठांणुं भाइ तिण अवसरें, लीधो संजम भार।
राज रमण सर्व छोडनें, हूआ मोटा अणगार।।

ढाळ : १०

(लय : बोल करडा अभिग्रह छ मास)

१. वळे दूजो दूत बोलायनें, कहें छें भरत माहाराय।
बाहुबल भाइ म्हारो, त्यां पासें तूं वेगो जाय। सताब।
तूं कहीजे संदेसों म्हारों।।

२. विनो भगत करे ताहरी, वळे करे घणी नरमाय।
हूं वात कहूं छूं तो भणी, ते तूं सगली दीजे सुणाय। भाइ नें।
ते तूं कहीजें रूडी रीत तेहनें।।

३. चक्ररत्न उपनों माह रे, चक्रवर्त पदवी उदें हुइ आंण।
तिणसूं थें भरत राजा तणी, तिणसूं आंण कीजो परमांण। माहाराजा।
इम कह्यां भरतजी आपनें।।

दोहा

१. श्री ऋषभ की वाणी सुन कर उनके हृदय में ज्ञान आया। काम-भोग उन्हें जहर के समान लगने लगे।

२. वे हाथ जोड़कर कहने लगे, हम आपके वचन पर श्रद्धा करते हैं। आप भव जीवों को तारने वाले हैं। हमें आप सच्चे स्वजन मिले हैं।

३. हम काम-भोग से ऊब गए हैं। संसार को अस्थिर जान लिया है। राज्य, ऋद्धि और रमणियों को छोड़कर संयम भार ग्रहण करेंगे।

४. ऋषभ जिनेश्वर ने कहा- यदि तुम्हें संयम भार ग्रहण करना है तो जरा भी विलंब मत करो। जो घड़ी बीत जाती है, वह लौट कर नहीं आती।

५. उसी समय अट्ठानवे ही भाइयों ने संजम भार ग्रहण कर लिया। राज-रमणियों को छोड़कर महान् मुनि बन गए।

ढाळ : १०

१. फिर भरत महाराज दूसरे दूत को बुलाकर कहते हैं- बाहुबल मेरे भाई हैं। तुम तत्काल उनके पास जाकर मेरा संदेश कहना।

२. उनकी विनय-भक्ति करना फिर अत्यंत नम्रता से कहना। मैं तुम्हें जो बात कहता हूं वह सारी भाई को सुना देना। उन्हें कुशलतापूर्वक कहना।

३. मेरे यहां चक्ररत्न उत्पन्न हुआ है। चक्रवर्ती की पदवी आकर उदित हुई है। इसलिए आप भरत राजा की आज्ञा स्वीकार करें। भरत महाराज ने आपको ऐसा कहलवाया है।

४. इम दीधी सीखावण दूत नें, तिण कर लीधी परमांण।
दूत तिहां थी नीकल्यों, ओं तों कर मोटें मंडांण। तिहां थी।
चाल्यों घणा साथ समान थी।।

५. बाहुबलजी बेंठा तिहां, कर मोटें मंडांण।
तिण अवसर दूत आयनें, विनों कर बोल्यों मीठी वांण। तिण ठांमे।
जय विजय करनें वधावीया।।

६. जब आदर मांन दीयों दूत नें, पूछ्या तिणनें समाचार।
कहो दूत किणरा मेल्या आवीया, जब दूत बोल्यो तिणवार। राजा सूं।
हूं तो आयो भरतजी रो मेलीयों।।

७. कहो भरतजी री वारता, जब दूत बोल्यों तिणवार।
भरतजी कह्यों छें थां भणी, मो साथे आपनें समाचार। माहाराजा।
आप चित्त लगाय नें सांभलों।।

८. चक्ररत्न उपनो माह रे, तिणसूं मांनजो म्हारी आंण।
इम कहे मोंनें मोकल्यों, ए वचन करो परमांण। माहाराजा।
ए वात जुगती छें आपनें।।

९. ए वचन सुणेनें कोपीया, बाहुबल तिणवार।
करडा वचन मुख बोलीया, तीन लीटी चाढे निलाड। नें बोल्यों।
तूं जाय भरत नें इम कहें।।

१०. थे अठाणुं भायां तणो, खोस लीयों छें राज।
इसडो अकार्य थें कीयो, तोनें अजे न आवें लाज। रे भाई।
तूं जाय भरत नें इम कहें।।

११. हूं डरतों आंण मांनूं नही, डरतों नही लेऊ संजमभार।
हूं करसूं संग्रांम तो थकी, तें पिण वेगों होयजे तयार। लडवानें।
तूं जाय भरत नें इम कहें।।

४. इस प्रकार दूत को शिक्षा दी। दूत ने उसको स्वीकार कर लिया। वह बड़े साज-सामान और ठाठबाट से वहां से निकला।

५. ठाटबाट से बाहुबलजी के स्थान पर पहुंचा। वहां आकर विनयपूर्वक मधुर स्वरों में जय-विजय शब्दों से उन्हें वर्धापित किया।

६. बाहुबलजी ने दूत को मान-सम्मान देकर उसे समाचार पूछे- दूत! तुम किसके द्वारा भेजे हुए आए हो। दूत ने कहा- मैं तो भरतजी के द्वारा भेजा हुआ आया हूं।

७. बाहुबलजी ने कहा- भरतजी की बात कहो। तब दूत ने कहा- भरतजी ने मेरे साथ आपके लिए जो समाचार कहे हैं, आप उन्हें ध्यान देकर सुनें।

८. मेरे शस्त्रागार में चक्ररत्न उत्पन्न हुआ है। इसलिए मेरी आज्ञा स्वीकार करें। यों कहकर मुझे भेजा है। आप उनके इस वचन को स्वीकार करें, आपके लिए यही बात उपयुक्त है।

९. यह वचन सुनकर बाहुबलजी कुपित हो गए। उस समय उन्होंने ललाट पर तीन लकीरें चढ़ाते हुए मुख से कठोर वचन कहे। तू जाकर भरत को ऐसे कहना।

१०. तुम जाकर भरत को यों कहना- आपने अट्ठानबे भाइयों का राज्य छीन लिया है। आपने ऐसा अकृत्य किया है। अभी भी आपको लज्जा नहीं आती है।

११. मैं डरकर आज्ञा स्वीकार नहीं करूंगा और डरकर साधु भी नहीं बनूंगा। मैं तुम से संग्राम करूंगा। तुम भी लड़ने के लिए जल्दी तैयार हो जाओ।

१२. दूत नें नही सतकारीयों, वळे दीयों नही सनमांन।
जब दूत रीसाणों अति घणों, धरतों मन में अभिमान। मजग सूं।
ओतो क्रोध करेनें चालीयों।।

१३. दूत तीहां थी नीकल्यों, पाछों आयों भरतजी पास।
विनो भगत करे घणी, ओतों ऊभो करें अरदास। विना सूं।
दोनूं मस्तक हाथे चढायनें।।

१४. बाहुबल वचन कह्या तके, विवरा सुध दीया सुणाय।
ते वचन सुणेनें भरत जी, डेरा बारें दीया छें ताहि। भरतेसर।
कीधी संग्रांम की त्यारीयां।।

१५. संग्राम करवानें सज हुआ, तिणमें जांणें छें बंधता कर्म।
राज तणी जांणे छें विटंबणा, अंत छोडे आराधसी धर्म। भरतेसर।
मोख जासी आठुं कर्म खय करी।।

◆

१२. उन्होंने दूत को सत्कार-सम्मान नहीं दिया। तब दूत अत्यंत रुष्ट होकर, मन में अभिमान धारण करके, कुपित होकर चल पड़ा।

१३. वहां से निकलकर दूत वापिस भरतजी के पास आया और अत्यंत विनय भक्तिपूर्वक बद्धांजली मस्तक पर टिकाकर खड़े-खड़े निवेदन किया।

१४. बाहुबल ने जो वचन कहे विस्तारपूर्वक सुना दिए। वे वचन सुनकर भरतजी ने संग्राम की तैयारी कर बहली के पास अपनी सेना के डेरे लगा दिए।

१५. वे संग्राम करने के लिए सज्ज तो हो गए पर यह जानते हैं कि इससे कर्मों का बंधन होता है। वे राज्य की विडंबना को भी जानते हैं, अंत में इसे छोड़कर धर्म की आराधना कर आठों कर्म खपाकर मोक्ष जाएंगे।

◆

दुहा

१. फोजां मांहोमा भेली हुइ, दोनूंइ भायां री तांम।
त्यांरें बडसाला री नही वारतां, त्यांरी हुवा करवा सग्रांम।।

२. जब सक्रंदर मन जांणीयों, ए रूडो नही छें कांम।
ए ऋषभ जिणंद रा दीकरा, ते करें माहोमा संग्रांम।।

३. अजेस तो आरों तीसरों, नेंडों हुंतो जुगलीया धर्म।
चोथों आरो पिण लागों नही, तठा पेंहली नीपजें ए कर्म।।

४. तो हिवें हूं तिहां जायनें, दोयां नें देऊ समझाय।
इसडी धारेनें इंद्र नीकल्यों, दोयां विचें डेरा दीया आय।।

५. दोनूं भायां नें इंद्र बोलायनें, इंद्र कहें छें आंम।
थे मिनख मरावो किण कारणें, किण कारण करो सग्रांम।।

६. राज चाहीजें थांहरें, ओरां नें मरावो कांय।
जुझ करो माहोमा दोनूं जणां, डरो मती मन मांहि।।

७. राज कीजों जीतो जिको, हूं भरसूं थांरी साख।
बीजा अनेरा लोकां भणी, कांय मरावो अन्हांख।।

८. ए इंदर वचन मांने लीयों, लडवा लागा दोनूं इ भाय।
हिवें हार जीत किणरी हुवें, ते सुणजों चित्त ल्याय।।

ढाळ : ११

(लय : ईडर आंबा आंमली)

लोभ बूरो संसार।।

१. श्री रिषभ जिणंद रा दीकरा रे, भरत बाहुबल तांम।
इण राज लिखमी रे कारणें रे, करवा लागा माहोमा सग्रांम। भवकजन।।

दोहा

१. दोनों भाइयों की सेना आमने-सामने हो गई। उनके सामने छोटे-बड़े की कोई बात नहीं रही। दोनों संग्राम करने के लिए तैयार हो गए।

२. इस समय शक्रेंद्र ने मन में सोचा- ये दोनों भाई ऋषभदेवजी के पुत्र हैं। ये आपस में संग्राम करते हैं यह उचित काम नहीं है।

३-४. अभी तो तीसरा आरा है, यौगलिक धर्म भी ज्यादा दूर नहीं हुआ है। अभी चौथा आरा नहीं लगा है। उससे पहले ही ऐसा कार्य हो रहा है तो अब मैं दोनों को समझाऊं ऐसा निश्चय कर इंद्र आया। दोनों सेनाओं के बीच अपना डेरा लगा दिया।

५. दोनों भाइयों को बुलाकर इंद्र ने कहा- आप मनुष्यों को क्यों मरवा रहे हैं? किस लिए संग्राम कर रहे हैं?।

६. राज तो आपको चाहिए फिर दूसरों को क्यों मरवा रहे हैं। दोनों भयमुक्त होकर परस्पर युद्ध करें।

७. जो जीतेगा वह राज्य करेगा। मैं तुम्हारा साक्षी रहूंगा। व्यर्थ में अन्य लोगों को क्यों मरवाते हैं?।

८. दोनों भाइयों ने इंद्र के वचन को मान्य कर लिया और परस्पर लड़ने लगे। अब किसकी हार-जीत होती है उसे चित्त लगाकर सुनो।

ढाळ : ११

सचमुच संसार में लोभ बहुत बुरा है।

१. ऋषभ जिनेंद्र के पुत्र भरत और बाहुबल राज्य लक्ष्मी के लिए परस्पर संग्राम करने लगे।

२. पेंहलो संग्रांम थाप्यो निजरनो रे, तिणमें गया भरतजी हार।
सूर्य सनमुख आयो तेहनें, तिणसूं आंख्या दीधी मिटकार।।

३. जब फूल विरखा देवता करी रे, कहें जीता बाहूबल तांम।
जब भरतजी वदले गया रे, ओ तों नही मांनूं संग्रांम।।

४. जब बाहुबलजी इम बोलीया रे, फेर बीजो करों संग्रांम।
हूं पहिलो संग्रांम जीतों खरो रे, तो बीजों किम हारसूं तांम।।

५. बीजो संग्रांम पुणचो छोडावणों रे, ते बाहुबल दीयों छुडाय।
भरतसूं पुणचों छूटों नही रे, इहां पिण हार्यों भरत माहाराय।।

६. वळे फूल विरखा देवतां करी रे, कहें जीता बाहुबल राय।
जब फेर भरतजी वदलीया रे, तीजों सग्रांम करसां ताहि।।

७. जब फेर बाहुबल बोलीयों रे, वळे तीजों करों सग्रांम।
वळे जीत हुवे जो मांहरी रे, तो अब कें मत फिरजों तांम।।

८. तीजो संग्रांम बांह नमावणी रे, ते पिण बाहुबल दीधी नमाय।
भरतसूं बांहि नमी नही रे, इहां पिण हार्या भरत माहाराय।।

९. वळे फूल विरखा देवतां करी रे, कहें जीता बाहुबल राड।
जब फेर भरतजी वदलीया रे, राड करसां चोथी वार।।

१०. जब बाहूबलजी फेर बोलीया रे, जोख सू करो चोथो संग्रांम।
ज्यरि भाग में राज लिखीयों हुसी जी, आगों पाछो न हुवें तांम।।

११. चोथो संग्राम वळे थापीयो जी, जल उछालणो माहो माहि।
तिहां पिण भरतजी हारीया रे, जीतो बाहूबल राय।।

२. पहला संग्राम अनिमेष दृष्टि का स्थापित किया गया। उसमें भरतजी हार गए। जब सूर्य सामने आया तो उन्होंने पलकें झपका दीं।

३. देवताओं ने फूलों की वर्षा की और कहा– बाहुबलजी जीत गए। पर भरतजी अपने वचन से बदल गए और कहा– मैं इसे संग्राम नहीं मानता।

४. तब बाहुबलजी बोले– दूसरा संग्राम करो। मैंने पहला संग्राम जीत लिया है तो दूसरा कैसे हारूंगा?।

५. दूसरा संग्राम कलई छुड़ाने का हुआ। बाहुबलजी ने तत्काल अपनी कलई छुड़ाली। भरतजी बाहुबलजी से कलई नहीं छुड़ा सके। यहां भी भरतजी पराजित हो गए।

६. देवताओं ने फिर फूलों की वर्षा की और कहा– बाहुबल राजा जीत गए। पर भरतजी फिर बदल गए। कहने लगे– तीसरा संग्राम करेंगे।

७. बाहुबलजी बोले– चलो, फिर तीसरा संग्राम करो। अब मेरी विजय हो जाए तो बदल मत जाना।

८. तीसरा भुजा झुकाने का संग्राम स्थापित हुआ। बाहुबलजी ने भरतजी की भुजा को झुका दिया। पर भरतजी से बाहुबलजी की भुजा नहीं झुक सकी। यहां भी भरत महाराज पराजित हो गए।

९. देवताओं ने फिर फूलों की वर्षा की और कहा– बाहुबलजी संग्राम जीत गए। भरतजी फिर बदल गए। कहने लगे–चौथी बार संग्राम करेंगे।

१०. बाहुबलजी ने कहा– खुशी से चौथा संग्राम करें, जिसके भाग्य में राज्य लिखा हुआ होगा वह आगे-पीछे नहीं होगा।

११. चौथा संग्राम परस्पर जल उछालने का स्थापित हुआ। यहां भी भरतजी पराजित हुए और बाहुबल राजा जीत गए।

१२. वळे फूल विरखा देवतां करी रे, कहें जीता बाहूबल राड।
जब फेर भरतजी वदलीया रे, राड करसां पंचमी वार।।

१३. जब बाहूबलजी फेर बोलीया रे, जोख सूं करो पांचमो संग्रांम।
ताला माहे आगो पाछों नही रे, थे नचिंत पूरों मन हांम।।

१४. पांचमी राड थापी मुष्ट तणी रे, ते प्रसिध लोक विख्यात।
मुष्ट उपाड दीधी भरतजी रे, करवा बाहुबल री घात।।

१५. मुष्ट लागी भरत रा हाथ री रे, तिणसूं वेदना हुइ अथाय।
जो इसरी लागें ओर पुरष रे रे, तो टूक टूक होय जाय।।

१६. बाहुबल किण विध मरें रे, ते चरम सरीरी साख्यात।
पिण क्रोध ऊपनों अति आकरो रे, जांण्यों करूं भरत नी घात।।

१७. हिवे भरत नरिंद नें मारिवा रे, बाहुबल उपाडी मुष्ट।
तिण अवसर बाहुबल तणा रे, परिणांम घणा छें दुष्ट।।

१८ अें मोख गांमी छें बेहू जणा रे, राजकाजें करें संग्रांम।
ते पिण चारित ले मुगत सिधावसी रे, सारसी आतम काम।।

◆

१२. देवताओं ने फिर फूलों की वर्षा की और कहा– बाहुबलजी लड़ाई जीत गए। भरतजी फिर मुकर गए और कहा– पांचवीं बार लड़ाई करेंगे।

१३. बाहुबलजी ने फिर कहा– खुशी से पांचवां संग्राम करो, भाग्य में आगे-पीछे कुछ भी नहीं है। आप निश्चिंत होकर मन की इच्छा पूरी करें।

१४. पांचवां संग्राम मुष्टि-प्रहार का स्थापित हुआ, यह लोक में प्रसिद्ध है। भरतजी ने बाहुबलजी की घात करने के लिए मुष्टि का प्रहार किया।

१५. भरतजी के मुष्टि प्रहार से बाहुबलजी को असह्य वेदना हुई। यदि ऐसा प्रहार किसी दूसरे पुरुष पर होता तो वह खंड-खंड हो जाता।

१६. पर बाहुबलजी कैसे मर सकते हैं? वे इसी शरीर से मुक्त होने वाले हैं। फिर भी उन्हें अत्यधिक क्रोध पैदा हुआ और सोचा मैं भरत पर प्रहार करूं।

१७. बाहुबलजी ने भरत नरेंद्र को मारने के लिए मुष्टि उठाई। उस समय उनके परिणाम अत्यंत अप्रशस्त हो गए।

१८. दोनों ही मुक्त होने वाले हैं, पर राज्य के लिए आपस में संग्राम कर रहे हैं। पर अंत में दोनों संयम ग्रहण कर मोक्ष जाएंगे और अपनी आत्मा का काम सिद्ध करेंगे।

◆

दुहा

१. भरत नरिंद नें मारवा, खराखरी परिणांम।
पिण मोहकर्म त्यारें पातलों, तुरत सुलट गया तिण ठांम।।

२. जो हूं मारूं इण भरत नें, तो होवूं जगत में भांड।
वडा भाइ नें इण दुष्ट मारीयों, फिट-फिट करें सहु मांड।।

३. एक बाप तणा बेहूं दीकरा, म्हें लडां छां राज रें काज।
राज करूं भरत नें मारनें, ओतों वडों अकाज।।

४. निदांन तों माहरें वेग सूं, लेंणों संजम भार।
जो इणनें मारे चारित लेऊ, तो कुल माहे हुवें छें अंधार।।

५. ओ तों कुल माहे दीपतों, सांप्रत दीवा समांन।
वळे कुण कुण करें छें विचरणा, सुणों सुरत दे कांन।।

ढाळ : १२

(लय : प्रभवो मन में चितवें)

१. म्हें तो राज काजें कजीया कीयां, ते तों करमां रो वंक।
जो घात करूं इण भरत नी, तो लागें कुल नें कलंक।।

२. ओं तो रिषभदेवजी रो दीकरों, अनेरो नही ओर।
वडों भाइ छें म्हारों, निज पिता री ठोर।।

३. आज पहिला इण कुल मझे, इसरों न हूवों अकाज।
वडा भाइ नें मारनें, किणही न कीधों राज।।

दोहा

१. यद्यपि बाहुबलजी का भरत को मारने का सुनिश्चित परिणाम था पर मोहकर्म पतला होने से तत्काल वहीं संभल गए।

२. यदि मैं भरत को मारूंगा तो जगत् में बदनाम हो जाऊंगा। सब लोग मुझे जम कर धिक्कारेंगे कि इस दुष्ट ने अपने बडे भाई को मार दिया।

३. हम दोनों एक ही पिता के पुत्र हैं। हम राज्य के लिए लड़ रहे हैं। मैं भरत को मारकर राज्य करूं यह तो बहुत अकार्य है।

४. अंततः तो मुझे शीघ्र संयम भार लेना है। यदि इसे मारकर चारित्र ग्रहण करूंगा तो कुल में अंधेरा हो जाएगा।

५. भरत आज दीप के समान कुल में दीप्त हो रहा है। बाहुबल आगे कैसे-कैसे विचार करता है उसे कान लगाकर सुनो।

ढाळ : १२

१. मैंने राज्य के लिए झगड़ा किया यह तो कर्मों की वक्रता है। यदि मैं भरत की घात करता हूं तो कुल को कलंक लगेगा।

२. यह कोई दूसरा नहीं है। ऋषभदेव का पुत्र ही है। मेरा बड़ा भाई है। पिता स्थानीय है।

३. आज से पूर्व हमारे कुल में इस प्रकार का अनर्थ नहीं हुआ। बड़े भाई की हत्या कर किसी ने राज्य नहीं किया।

४. म्हां सघलां भायां में ओ पाटवी, रिषभदेवजी रो पाट।
जो घात करूं हिवे एहनी, तो कुल में पड जाय काट।।

५. इणरें चकररत्न उपनों कहें, दीसें छें भागवांन।
म्हां सघलां विचें ओ दीपतो, कुल में दीवा समांन।।

६. इणनें स्वयमेव श्री रिषभदेवजी, दीयों वनीता रो राज।
इणनें मारेनें राज करूं इहां, ओतो मोटों अकाज।।

७. म्हारों धेष हुंतो इण ऊपरें, जब हूं करतों थो घात।
हिवें इण ऊपर म्हारों, धेष नही तिलमात।।

८. इसडों मांनव इण जगत में, म्हे तों नयणां न दीठों।
सोम निजर सीतल अंग छें, मुझ लागें मीठों।।

९. इसडा नरिंद नें मारीयां, बंधें करमां रा जाल।
इण राज काजें इसडों अनर्थ करूं, जीववों किताएक काल।।

१०. इण भरत नेंरिंद नें मारण तणों, ते तों मुझनें छें नेम।
पिण म्हें मूठ उपाडी इणनें मारवा, हेठी मेलूं केम।।

११. भाइ अठाणु म्हारें, त्यां छोड दीयों राज।
संजम पालें छें रूडी रीत सूं, सारें निज काज।।

१२. पिण म्हें तों इण राज रें कारणें, मांड्या कजीया नें राड।
वडा भाइ नें मांड्यों म्हें मारवों, मुझनें छें धिकार।।

१३. हूं सुख जाणतों इण राज में, ते सर्व धूर समांण।
अनोपम एक जिन धर्म विना, जीतब अप्रमांण।।

१४. इण संसार असार में, सुख नही मूल लिगार।
तों हिवें राज रमण रिध छोडनें, लेउ संजम भार।।

४. हम सब भाइयों में ऋषभदेव के पट्ट का यह प्रमुख उत्तराधिकारी है। यदि मैं इसकी हत्या करता हूं तो कुल में छेद पड़ जाएगा।

५. कहा जा रहा है– इसके यहां चक्ररत्न उत्पन्न हुआ है। लगता है भाग्यशाली है। हमारे कुल में हम सबमें यह दीपक के समान दीप्त हो रहा है।

६. स्वयं ऋषभदेवजी ने इसे विनीता का राज्य दिया था। इसको मारकर मैं यहां राज्य करूं यह तो बड़ा अनर्थ है।

७. जब मैं प्रहार कर रहा था तब इस पर मेरा द्वेष था। अब मेरा इस पर तिल मात्र भी द्वेष नहीं है।

८. मैंने अपनी आंखों से ऐसा अन्य मानव जगत् में नहीं देखा। इसकी दृष्टि सौम्य और अंग शीतल है। मुझे यह मधुर–प्रिय लगता है।

९. ऐसे नरेंद्र को मारने से कर्मों के जाल का बंधन होता है। इस राज्य के लिए मैं ऐसा अनर्थ करूं तो फिर मुझे जीना भी कितने समय तक है?।

१०. अब भरत को मारने का मुझे त्याग है। पर मैंने इस पर प्रहार करने के लिए मुट्ठी उठा ली, इसे नीचे कैसे करूं?।

११. मेरे अट्ठानवे भाई थे। उन्होंने राज्य छोड़ दिया। वे अच्छी तरह से संयम का पालन कर रहे हैं। अपना कार्य सिद्ध कर रहे हैं।

१२. पर मैंने इस राज्य के कारण लड़ाई–झगड़ा लगा दिया। बड़े भाई को मैंने मारना शुरू कर दिया। मुझे धिक्कार है।

१३. मैं इस राज्य में सुख जानता था वह तो धूल के समान है। अनुत्तर जैन धर्म के बिना जीना ही निरर्थक है।

१४. इस असार संसार में किंचित् भी सुख नहीं है। अतः अब राज्य, रमणियां और ऋद्धि को छोड़कर संयम भार गहण करूं।

दुहा

१. एहवी करेय विचारणा, छांडी फिकर नें सोच।
गेंहणा वस्त्र उतारनें, पांच मुष्टी कीयो लोच।।

२. अरिहंत सिध साधां भणी, भाव सहीत कीयों नमसकार।
वेंरागें मन आंणनें, लीधों संजम भार।।

३. काउसग ठाय ऊभा तिहां, रह्या धर्म ध्यांन ध्याय।
मन वचन काया वस कीया, एकाएक चित्त लगाय।।

४. सेन्या सारी देखती रही, इचर्य हूआ तिणवार।
तिहां भरतजी इम जांणीयो, इण तों लीधों संजम भार।।

५. इण जीती राड नें छोडनें, लीधों संजम भार।
इसडा विरला मांनवी, इण संसार मझार।।

६. हिवें बाहुबलजी उपरें, भरत रो मोह जाग्यों अतंत।
बाहुबलजी नें घर में राखवा, कुण कुण करें विरतंत।।

ढाळ : १३

(लय : बोले बालक बोलडा रे)

हरषधर बंधव बोलजो जी।।

१. बाहुबल चारित लीयो जी, आंणे मन वेंराग।
भरतेसर इम वीनवें जी, वार वार पाए लाग।।

दोहा

१. इस प्रकार का विचार कर बाहुबलजी ने सारे चिंता-फिक्र को छोड़, वस्त्राभूषण उतार पंचमुष्टि लोच किया।

२. अरिहंत, सिद्ध और साधुओं को भाव सहित नमस्कार किया। मन में वैराग्य प्राप्त कर संयम भार ग्रहण कर लिया।

३. वहीं (रणभूमि-जंगल में) कायोत्सर्ग कर धर्म ध्यान में स्थित हो मन, वचन और काया को वश कर एकाग्र चित्त हो गए।

४. सारी सेना देखती ही रह गई। सबको बड़ा आश्चर्य हुआ। भरतजी भी यह समझ गए कि इसने तो संयम भार ग्रहण कर लिया है।

५. इसने जीती बाजी (लड़ाई) को छोड़कर संयम भार ग्रहण किया है। इस संसार में ऐसे आदमी विरले ही होते हैं।

६. अब बाहुबलजी पर भरतजी का प्रबल मोह जाग्रत हुआ। वे बाहुबलजी को घर में रखने के लिए क्या-क्या उपाय करते हैं, यह वृत्तांत सुनें।

ढाळ : १३

बंधुवर हर्षित होकर बोलो।

१,२. मन में वैराग्य प्राप्त कर बाहुबलजी ने चारित्र ग्रहण कर लिया। भरत नरेंद्र बार-बार पैरों पड़कर इस प्रकार विनती करते हैं-आपको बाबाजी ऋषभदेवजी की शपथ है, आप पंडित, चतुर और सुजान हैं। आप खींचतान मत करो।

२. थांनें बाबाजी री आंण, थांनें रिषभजी री आंण।
थे तो पिंडत चुतर सुजांण, थे तो म करों खांचा तांण।।

३. थे जीता हूं हारीयो जी, देव भरेसी साख।
थां सरीखा जग को नही जी, मुझ शरीखा जग लाख।।

४. आपे हिलमिल दोनूं वातां करी जी, जोवो आंख उंघाड।
बोलो मीठा बोलडा जी, पूरों मन रा लाड।।

५. बहूअर तणा ओलंभडा जी, किम सांभलसूं कांन।
जातां पग वहें नही जी, थांनें मेली रांन।।

६. थेंइज म्हारें आत्मां जी, थेइज म्हारें बांहि।
दिस सूंनी भायां विनां जी, आवो ज्यूं घर जाय।।

७. अठांणूं एकण समें जी, मुझनें लोभी जांण।
सहू दूरे दूर परहर्या जी, जिम वरसालें छांण।।

८. माथें सूर्य आवीयो जी, गरमी भीनो गात।
बेंसी भोजन कीजियें जी, खारक दाखनि वात।।

९. थे चारित ले उभा इहां जी, हिवें हूं किण विध करूं राज।
म्हारी आछी न लागें लोक में जी, तिणसूं राखो थे म्हारी लाज।।

१०. हिवें किरपा करो मो उपरें जी, तो सुखे करो थे राज।
आ अरज मांनो थे माहरी जी, तो चारित मत लो आज।।

११. थे ठाकुर हूं सेवग थको जी, रहसूं आप हजूर।
ए वचन साचो कर मांनलो जी, तिणमें मूल नही छें कूड।।

१२. मोह तणें वस भरत जी रे, कीया विलाप अनेक।
साचें मन कह्यो घणो जी, पिण बाहूबल न मांनी एक।।

३. आप जीते और मैं हारा। देवता इसकी साख भरेंगे। आप जैसा दुनिया में कोई नहीं है। मेरे जैसे लाखों हैं।

४. हम दोनों ने हिल-मिलकर बातें की हैं। आप आंख खोलकर देखो। मधुर वचन बोलो। मेरे मन की चाह को पूरा करो।

५. मैं बहुवरों के उलाहनों को अपने कानों से कैसे सुनूंगा। हे राजन्! आपको छोड़कर जाने के लिए मेरे पैर ही नहीं उठ रह हैं।

६. आप ही मेरी आत्मा हैं और आप ही मेरी भुजा हैं। भाइयों के बिना मेरी दिशाएं ही शून्य हो गई हैं। हम आए थे वैसे ही घर चलें।

७. अट्ठानबे भाइयों ने मुझे लोभी जानकर उसी तरह एक साथ अकेला छोड़ दिया जिस तरह वर्ष ऋतु में गोबर को छोड़ देते हैं।

८. सूर्य सिर पर आ गया है। ताप से शरीर पसीने से भीग गया है। आप बैठकर द्राक्षा-खारक का भोजन करें।

९. आप यहां चारित्र लेकर खड़े हुए हैं। मैं अब राज्य कैसे कर सकता हूं। संसार में मेरी अच्छी नहीं लगेगी। अतः आप मेरी लज्जा रखें।

१०. अब आप मेरे पर कृपा करो, सुखपूर्वक राज करो। मेरी यह प्रार्थना स्वीकार कर आप आज चारित्र न लें।

११. आप मेरे स्वामी हैं। मैं सेवक बनकर आपकी सेवा में रहूंगा। मेरे इस वचन को आप सत्य मानें। इसमें किंचित् भी झूठ नहीं है।

१२. मोहवश भरतजी ने इस प्रकार अनेक विलाप किए। सच्चे हृदय से बहुत कुछ कहा, पर बाहुबलजी ने किसी भी बात को स्वीकार नहीं किया।

१३. बोल घणाइ बोलीया जी, भरतेसर नर राय।
पिण हाथी रा नीकल्या जी, ते किम पाछा थाय।।

१४. साचें मन कीधी वीणती जी, भरतेसर राजांन।
ते पिण मोखगांमी छें इण भवें जी, जासी पांचमी गति परधांन।।

◆

१३. भरतेश्वर नरेंद्र ने अनेक वचन कहे, पर हाथी के दांत निकल जाने के बाद वापिस अंदर कैसे जा सकते हैं?।

१४. भरतेश्वर नरेंद्र ने सच्चे हृदय से बहुत विनती की। ये मोक्षगामी हैं और इसी भव में मुक्त होंगे।

◆

दुहा

१. परपंच कीया अति भरतजी, पिण कारी न लागी काय।
मोह विलाप करे घणा, आया जिण दिस जाय।।

२. भरतजी तिहां थी गयां पछें, बाहुबल विचार्‍यों मन मांहि।
हूं रिषभ जिणंद रें आगलें, किण विध जाउं चलाय।।

३. तिहां छोटा भाइ छें माहरा, म्हां पेंहली लीयों संजम भार।
त्यांरा पग मोंनें वांदणा परें, तो हिवें रहूं एकलों न्यार।।

४. उतकष्टी करणी करे, करे करमां नो सोख।
त्यासूं भेलो हूआं विनां, जाउं परबारो मोख।।

५. एहवी उंधी करेय विचारणा, गया अटवी में चलाय।
निरदोषण जायगा जोयनें, काउसग दीयों छें ठाय।।

६. वळे आहार च्यारूंइ पचखीया, एक वरस हुओं छें ताहि।
तिण नगरी आया ऋृक्षभदेवजी, वाग माहे उतरीया आय।।

७. वांणी सुणनें परषदा, आइ जिण दिस जाय।
तिण काले गणधरां पूछा करी, रिषभ जिणंद पें आय।।

ढाळ : १४

(लय : म्हारा राजा नें धर्म सुणावजो)

म्हे अरज करां छां वीणती।।

१. हाथ जोडी वीणती करे, मसतक नीचो नमाय हो। सांमी।
बाहुबलजी चारित लीयो, ते गया छें किण ठांम हो। सांमी।।

दोहा

१. भरतजी ने अनेक उपाय किए पर कोई सफल नहीं हुआ। अत्यधिक मोह-विलाप करते हुए अंततः जिस दिशा से आए थे उसी ओर लौट गए।

२. भरतजी के चले जाने के बाद बाहुबलजी ने मन में विचार किया कि मैं भगवान् ऋषभदेव के सामने कैसे जाऊं?।

३. वहां मेरे अट्ठानवे छोटे भाई हैं। उन्होंने मेरे से पहले संयम भार ग्रहण कर लिया। वहां मुझे उन सबके पैरों में वंदना करनी पड़ेगी। इसलिए मैं यहां अकेला ही अलग रह जाऊं।

४. मैं उनमें शामिल हुए बिना ही उत्कृष्ट साधना करके कर्मों का नाश कर अकेला सीधा मुक्ति में चला जाऊं।

५. ऐसी उल्टी बात सोचकर वे जंगल में चले गए और निर्दोष स्थान पर जाकर कायोत्सर्ग मुद्रा में स्थित हो गए।

६. उन्होंने चारों ही आहारों का त्याग कर दिया। इस प्रकार पूरा एक वर्ष बीत गया। भगवान् ऋषभदेवजी नगरी में आकर उपवन में ठहरे।

७. अनेक लोग उनका प्रवचन सुनने के लिए जिस दिशा से आये उसी दिशा में लौट गए। उस काल में गणधरों ने भगवान् ऋषभ के पास आकर पूछा।

ढाळ : १४

हम विनयपूर्वक निवेदन करते हैं।

१. हम विनयपूर्वक हाथ जोड़कर, नत-मस्तक होकर आपसे निवेदन करते हैं कि चारित्र ग्रहण कर बाहुबलजी कहां गए?।

२. जब रिषभ जिणेसर इम कहें, सुण तूं चित्त लगाय हो। मुनीवर।
बाहुबल इण अटवी मझे, उभो काउसग ठाय हो। मु०।
ओ चढीयों छें अति अभिमांन में।।

३. उण चारित ले मन चिंतवें, म्हारें छोटा अठांणूं भाय हो। मु०।
त्यां चारित म्हा पेंहली लीयों, त्यांनें किम वांदू जाय हो।। मु०।
इसडों चढीयो अभिमांन में।।

४. एक वरसी तप हुओं तेहनें, ध्यावें निरमल ध्यांन हो। मु०।
मान बडाई रा जोगसूं, अटक्यो केवलज्ञान हो। मु०।।

५. ए वचन ब्रांह्मी सूंदरी सुंणे, आइ रिषभ जिणंद रे पास हो। सांमी।
हाथ जोडे वंदणा करे, बोली वचन विमास हो। सांमी।।

६. जो किरपा कर दो आगना, तो म्हें दोनूं जणी जाय हो। सांमी।
बाहुबल नें समझायनें, आणां मारग ठाय हो। सांमी।।

◆

२. ऋषभ जिनेश्वर ने इस प्रकार कहा– तुम ध्यान लगाकर सुनो। बाहुबल इसी जंगल में कायोत्सर्ग में स्थित है। वह तीव्र अहंकार से ग्रस्त हो गया है।

३. उसने चरित्र लेकर अपने मन में चिंतन किया। मेरे अट्ठानबे छोटे भाइयों ने मेरे से पहले चारित्र ग्रहण कर लिया। मैं उनको वंदना कैसे करूं। वह इस प्रकार के अहंकार से ग्रसित हो गया है।

४. उसके एक वर्ष की तपस्या हो गई है। वह निर्मल ध्यान की आराधना कर रहा है, पर अभिमान के कारण केवलज्ञान अटक गया है।

५. यह वचन सुनकर ब्राह्मी और सुंदरी ऋषभ जिनेंद्र के पास आई। हाथ जोड़कर वंदना कर चिंतनपूर्वक बोलीं।

६. स्वामिन् आप कृपा कर अनुमति दें तो हम दोनों जाएं और बाहुबल को समझा–बुझाकर उसे सन्मार्ग पर ले आएं।

◆

दुहा

१. श्री रिषभ जिणेसर इम कहें, ज्यूं थांनें सुख थाय।
पिण जोयां तों तिणनें न लाभसों, शब्द सुणाय जों ताहि।।

२. ए वचन सुणेनें व्रांह्मी सुंदरी, विनें सहीत कीयो प्रमांण।
चालो बाहुबल नें समझायवा, मन माहे उजम आंण।।

३. व्रांह्मी सुदरी दोनूं जणी, आइ तिण झंगी मझार।
बाहुबल नें समझायवा, ग्यांन गावें तिणवार।।

४. ग्यांन गीत गावें छें किण विधें, किण विध आंणें नें ठाय।
किण विध केवलग्यांन उपजें, ते सुणजों चित्त ल्याय।।

ढाळ : १५

(लय : चंद्रगुपत राजा सुणी)

१. *वीरा म्हांरा गज थकी ऊतरों, बांह्मी सुंदरी इम गावें रे।*
बाहुबल नें समझायवा, आंमी साहमी झंगी माहे धावें रे।।

२. थे राज रमण रिध परहरी, वळे पुत्र त्रीया अनेको रे।
पिण गज नही छूटों ताहरो, तूं मन माहे आंण ववेको रे।।

३. वीरा म्हारा गज थकी उतरों, गज चढीयां केवल न होयो रे।
आपो खोजों आपरों, तो तूं केवल जोयो रे।।

४. बाहुबल नें समझायवा, व्राह्मी सूंदरी इम भासें रे।
मोनें रिषभ जिणेसर मोकली, बाहूबल तो पासें रे।।

दोहा

१. श्री ऋषभ जिनेश्वर ने ऐसा कहा– तुम जैसा चाहो वैसा करो। पर खोजने से बाहुबल तुम्हें नहीं मिलेगा। उसे शब्द सुनाना।

२. यह वचन सुनकर ब्राह्मी-सुंदरी ने उसे विनयपूर्वक स्वीकार किया और मन में उत्साह भरकर बाहुबल को समझाने के लिए चलीं।

३. ब्राह्मी और सुंदरी उस घनघोर जंगल में आई और बाहुबल को समझाने के लिए गीत गाने लगीं।

४. वे किस प्रकार गीत गाती हैं, किस प्रकार बाहुबल को समझाती हैं और किस प्रकार बाहुबल को केवलज्ञान उत्पन्न होता है उसे चित्त लगाकर सुनें।

ढाळ : १५

१. ब्राह्मी-सुंदरी बाहुबल को समझाने के लिए गहन जंगल में इधर-उधर घूम घूमकर गीत गाती हैं– मेरे भाई बाहुबल! हाथी से नीचे उतरो।

२. तुमने विवेकपूर्वक राज्य, समृद्धि, पुत्र-पत्नी आदि सबको छोड़ दिया पर अभी तक हाथी नहीं छूटा।

३. मेरे भाई! हाथी से नीचे उतरो। हाथी पर चढ़े रहने से तुम्हें केवलज्ञान प्राप्त नहीं होगा। अपने स्वत्व को खोजो। तभी तुम्हें केवलज्ञान होगा।

४. बाहुबल को समझाने के लिए ब्राह्मी-सुंदरी कह रही है– ऋषभ जिनेश्वर नें हमें तुम्हारे पास भेजा है।

५. ए वचन बाहुबल सांभले, करवा लागो विचारो रे।
कुण वीरों कुण बेंनडी, कुण कहे छें अटवी मझारो रे।।

६. अें तों बेंन दीसें छें म्हारी, ब्राह्मी नें सुंदरी दोयो रे।
रिक्षभ जिणंद म्हेली कहें, त्यां तो चारित लीधो छें सोयो रे।।

७. त्यरि झूठ बोलण रो त्याग छें, ते इम किम बोलें भासों रे।
कहें छें वीरा मारा गज थी उतरो, तेतो गज नही छें म्हारें पासों रे।।

८. यांनें रिषभ जिणेसर मोकली, मोनें समझावण तांइ रे।
अें पिण झूठ बोलें जिसी नही, कांयक घोचो दीसे मों मांही रे।।

९. ओगुण सूझ्यों आप में, करवा लागों विचारो रे।
म्हें हय गय रथ सव परहस्या, पिण आयो मोनें अहंकारो रे।।

१०. छोटा भाई अठांणूं म्हारा, त्यांनें वांदूं नही सीस नांमो रे।
इसडो अहमेव पणों म्हारों, ओ मोटों गज अभिमांन तांमो रे।।

११. गज बेंठों तों जीवडो, मोख जाअें कर्म कर सोखो रे।
पिण अहंकार गज चढीयो थकों, कोय न पोहतों मोखो रे।।

१२. यां पेंहिला चारित लीयो, त्यांनें वांदणा सीस नमाई रे।
दिख्या वडा छें ते वडा, हिवें छोटा नही म्हारा भाइ रे।।

१३. इतला दिन यांसूं अलगों रह्यों, आ तों म्हारें भोलप मोटी रे।
छोटा भायां नें वंदणा करूं नही, आ पिण विचारी म्हें खोटी रे।।

१४. हिवें तो यां अठांणूं भायां भणी, जाय वांदू सीस नांमी रे।
वारूंवार खमाउ पगां लागनें, ज्यूं मिटें म्हारी सर्व खांमी रे।।

१५. वेंरागें मन वालीयो, मूंकी निज अभिमांनो रे।
पाय उपास्यो वांदवा, जब उपनो केवलग्यांनो रे।।

◆

५,६. ब्राह्मी–सुंदरी के ये वचन सुनकर बाहुबल मन में विचार करने लगे– इस जंगल में कौन भाई है और कौन बहन है? लगता है ये दोनों मेरी बहनें ब्राह्मी और सुंदरी ही हैं। ऋषभ जिनेंद्र ने इन्हें भेजा है। इन्होंने तो संयम ग्रहण कर लिया।

७. इनके असत्य बोलने का त्याग है तब ये ऐसी भाषा कैसे बोल रही हैं? कह रही है भाई! हाथी से नीचे उतरो। पर मेरे पास हाथी कहां है?।

८. इनको ऋषभ जिनेश्वर ने मुझे समझाने के लिए भेजा है। ये भी झूठ बोलें जैसी बात नहीं है। जरूर मेरे अंदर ही कुछ अवरोध है।

९. बाहुबलजी को अब अपने में ही अवगुण दीखने लगा। वे सोचने लगे– मैंने हाथी–घोड़े–रथ आदि का तो परिहार कर दिया है पर मुझे अहंकार आ गया।

१०. मैं अपने अट्ठानवे छोटे भाइयों को सिर झुकाकर वंदना नहीं करूंगा– यह मेरा जो अहंकार है, यह मोटे हाथी के समान है।

११. हाथी पर सवार जीव तो कर्म क्षीण कर मोक्ष में भी चला जा सकता है, पर अहंकार रूपी हाथी पर सवार मोक्ष नहीं पहुंच सकता।

१२. इन्होंने पहले चारित्र लिया, अतः मैं इन्हें सिर झुकाकर नमन करता हूं। दीक्षा में बड़े हैं वे बड़े है। अब ये मेरे भाई छोटे नहीं हो सकते।

१३. मैं इतने दिन इनसे अलग रहा, यह मेरा बड़ा भोलापन है। मैं छोटे भाइयों को वंदना नहीं करूं यह भी मैंने गलत सोचा।

१४. अब मैं जाकर सिर झुकाकर अट्ठानवे भाइयों को नमस्कार करूं, उनके चरणों का स्पर्श कर क्षमा मांगूं जिससे मेरी सारी गलती मिट जाए।

१५. मन को वैराग्य की ओर मोड़कर, अपने अहंकार को छोड़कर ज्योंही वंदना के लिए कदम उठाया तब केवलज्ञान उत्पन्न हो गया।

◆

दुहा

१. बाहुबलजी केवलग्यांन पांमीयों, ते व्रांह्मी सुंदरी नों उपगार।
अें पिण दोनूं सतीयां मोटकी, गुण रतनां री भंडार।।

२. त्यांरो रूप घणों रलीयांमणों, अपछर रें उणीयार।
जब व्राह्मी तणों रूप देखनें, भरतजी कीयों छें मन में विचार।।

३. अस्त्री रत्न थापूं एहनें, सिरें थापूं अंतेवर मझार।
ए वचन सुणे व्राह्मी सती, तपसा करी अंगीकार।।

४. बेलें बेलें पारणों करे, रूप तणी करें छें हांण।
हिवें धुर सूं उतपत तेहनी कहूं, ते सुणजों चुतर सुजांण।।

ढाळ : १६

(लय : समरू मन हरखे तेह सती)

१. रिषभ राजा रें रांणी दोय हुइ, सुमंगला सुनंदा जूइ ए जूइ।
दोनूंइ दोय बेटी जाइ, व्राह्मी नें सूंदरी बेहूं बाइ।।

२. ज्यां पूर्व भव कीनी करणी, बेहूं री काया कोमल कंचण वरणी।
वळे रूप में कमी नहीं कांइ।।

३. ते स्वार्थ सिध थी चव आइ, भरत बाहूबल रें जोडें जाइ।
बेहूं बायां रे हुवा सो भाई।।

४. भरत बाहूबल दोय मोटा, वळे भाइ अठांणूं हूवा छोटा।
चित्त में घणी ज्यारें चतुराई।।

दोहा

१. बाहुबलजी को केवलज्ञान प्राप्त हुआ, यह ब्राह्मी-सुंदरी का उपकार है। ये दोनों सतियां भी बड़ी महान् एवं गुणरत्नों की भंडार हैं।

२,३. उनका रूप बड़ा मनोरम एवं अप्सरा के प्रतिरूप है। ब्राह्मी का रूप देखकर भरतजी ने मन में जब यह विचार किया- मैं इसे स्त्री-रत्न के रूप में अपने अंत:पुर में सर्वोत्तम पद पर स्थापित करूं यह बात सुनी तो ब्राह्मी ने तपस्या स्वीकार करली।

४. वह दो-दो दिनों के अंतराल से खाना खाने लगी और रूप का विनाश करने लगी। अब मैं आदि से इस प्रसंग का उद्‌भव बता रहा हूं। सुधीजन उसे सुनें।

ढाळ : १६

१. राजा ऋषभ के सुमंगला और सुनंदा नाम की दो रानियां थीं। सुमंगला ने ब्राह्मी और सुनंदा ने सुंदरी नाम से दो पुत्रियों को जन्म दिया।

२. दोनों ने पूर्व भव में सत् क्रिया की थी। इससे इनकी काया कोमल एवं सुनहरी थी। इनके रूप में कोई कमी नहीं थी।

३. दोनों सर्वार्थ सिद्ध विमान से च्युत होकर भरत और बाहुबल की युगल बहनों के रूप में पैदा हुईं। इसलिए दोनों बहनों के सौ भाई हुए।

४. भरत और बाहुबल बड़े थे। शेष अट्ठानवे उनसे छोटे थे। वे अत्यंत कुशल थे।

५. व्राह्मी रें हूआ नीनांणू वीरा, जांमण जाया अमोलक हीरा।
भरत चक्रवत्त नी पदवी पाइ।।

६. सूंदरी रे एक जांमण जणीयों, बाहुबल कला बोहीत्तर भणीयो।
पछें सुनंदा री कूख न खुली काइ।।

७. चुतर बायां सीखी चोसठ कला, गुण ज्यांमें पडीया सगला।
त्यांरी अकल में कुमी नहीं काइ।।

८. बेहूं बायां हुइ बतीस लखणी, अठारें लिप एक व्राह्मी भणी।
श्री आदि जिणेसर सीखाइ।।

९. एक सील रों स्वाद वस रह्यों मन में, कदे विषेंरी वात न तेवडी तन में।
छांड दीधी ममता सुमता आइ।।

१०. बेहूं बेटी वीनवें बापजी आगें, मोंनें सील रो स्वाद वलभ लागें।
म्हारी मत करजों कोइ सगाइ।।

११. म्हें तों नारी किणरी नही वाजां, म्हें तों सासरा रो नांम लेती लाजां।
म्हारें पीतम री परवाह नही काइ।।

१२. बापजी बोल्या सुणों बेटी, थे तों मोह जाल ममता मेटी।
थांरी करणी में कसर नही काइ।।

१३. भरत नही लेवण देवे दिख्या, व्राह्मी सील तणी मांडी रिख्या।
रूप देंखी भरत रें वंछा आइ।।

१४. सती बेलें बेलें पारणों कीनों, एक लूखों अन-पांणी में लीनों।
फूल ज्यूं काया परी कुमलाइ।।

१५. भरत री विषें सूं जांणी मनसा, तिणसूं व्रांमी झाली तपसा।
साठ हजार वरस री गिणती आइ।।

५. ब्राह्मी के अमूल्य हीरे के समान निन्यानव सहोदर थे। भरत ने चक्रवर्ती का पद प्राप्त किया।

६. सुंदरी के केवल बाहुबल एक ही सहोदर था। उसने बहत्तर कलाएं सीखीं। उसके बाद सुनंदा के कोई संतान पैदा नहीं हुई।

७. दोनों चतुर बहनों ने चौसठ कलाएं सीखीं। वे सभी गुणों से परिपूर्ण थीं। उनकी बुद्धि में कोई कमी नहीं थी।

८. दोनों बहिनें बत्तीस लक्षणों से संपन्न थीं। ऋषभदेव ने ब्राह्मी को अट्ठारह लिपियां सिखाईं।

९. इनके मन में ब्रह्मचर्य का ही स्वाद बस रहा था। तन में भी कभी विषय को आमंत्रण नहीं दिया। इन्होंने ममता को छोड़कर समता को अपना लिया।

१०. दोनों पुत्रियों ने अपने पिता को निवेदन किया कि हमें तो ब्रह्मचर्य ही अच्छा लगता है, अतः हमारा किसी के साथ रिश्ता न करें।

११. हम किसी की पत्नी कहलाना पसंद नहीं करतीं। ससुराल का नाम लेते ही हमें लज्जा आती है। हमें प्रियतम की कोई चाह नहीं है।

१२. पिताश्री बोले– पुत्रियों! सुनो, तुमने तो मोहजाल–ममता को समेट लिया है। तुम्हारी क्रिया में भी कोई कमी नहीं है।

१३. पर तुम्हारा रूप देखकर भरत की कामना जाग गई। भरत तुम्हें दीक्षा नहीं लेने देता। यह सुन ब्राह्मी अपने शील की रक्षा के लिए डट गई।

१४. वह दो–दो दिन के अंतराल से केवल लूखा–सूखा अन्न–पानी ग्रहण करने लगी। इससे उसकी फूल जैसी काया मुरझा गई।

१५. भरत की उत्कट कामेच्छा को जानकर ब्राह्मी ने तपस्या स्वीकार ली। उसकी गणना साठ हजार वर्ष तक पहुंच गई।

१६. भरत छोड दीनी मन री ममता, सती रो सरीर देखीनें आई सुमता।
पछें दीपती दिख्या दराइ।।

१७. बेहुं बाया रें वेंराग घणों, बेहुं कुमारी किन्या नें लीधों साधपणों।
बेहूं जिणमारग नें दीपाइ।।

१८. बेहू रिषभदेव नी हूइ चेली, प्रभू बाहुबल रें पासें मेली।
सती समझायनें पाछी आइ।।

१९. त्यांरो वचन बाहूबल मांन लीधों, जब मांन तणों मरदन कीधों।
छोटा भाइ वांदण री मन आइ।।

२०. सनमुख पग दीधों छोडी अभिमांन, जब तुरत ऊपनों केवलग्यांन।
दोनूं बेंनां रों गुण जांण्यों भाइ।।

२१. सगली साधवीयां में हुइ रे सिरें, त्यांरा वचन अमोलक रत्न झरें।
त्यांरी बोली सगलां नें सुखदाइ।।

२२. घणा वरसां लगे चारित पाली, त्यां दोषण दूर दीया टाली।
त्यां घणा जीवां नें दीया समझाइ।।

२३. बेहूं बायां री जुगती जोडी, बेहूं मुगत गइ आठु कर्म तोडी।
चोरासी लाख पूर्व आउ पाई।।

◆

१६. ब्राह्मी के कृश शरीर को देखकर भरत की ममता छूट गई। उसमें समता आई। फिर तो उसने ठाट-बाट से उसका दीक्षा महोत्सव कराया।

१७. दोनों बहनों का वैराग्य प्रबल था। दोनों ने कुमारी-कन्या के रूप में साधुत्व स्वीकार किया। दोनों ने जैनधर्म को सुशोभित कर दिया।

१८. दोनों ऋषभदेव की शिष्याएं बनीं। उन्होंने उन्हें बाहुबल के पास भेजा। दोनों साध्वियां उन्हें समझा कर वापस आ गईं।

१९. बाहुबलजी ने उनका वचन मान लिया। अपने मान का मर्दन कर छोटे भाइयों को नमन करने का मन बनाया।

२०. अहंकार को छोड़कर ज्यों ही उन्होंने उस दिशा में कदम बढ़ाया कि तत्काल उन्हें केवलज्ञान उत्पन्न हो गया। भाई ने अपनी दोनों बहनों के गुण को जान लिया।

२१. ब्राह्मी-सुंदरी समस्त साध्वियों में श्रेष्ठ हो गईं। उनकी वाणी सबको प्रिय लगती। ऐसा लगता कि उनके वचन अमूल्य रत्न की तरह झर रहे हैं।

२२. लंबे समय तक दोषों का परिहार कर उन्होंने चारित्र का पालन किया। अनेक जीवों को सन्मार्ग दिखाया।

२३. दोनों बहनों की जोड़ी युक्त थी। चौरासी लाख पूरब की आयु पाकर दोनों आठों कर्मों का क्षय कर मोक्ष में गई।

◆

दुहा

१. हिवें माता श्री रिषभदेव नी, तिण ध्याए निरमल ध्यांन।
हस्ती उपर बेंठा मुगते गया, ते सुणों सुरत दे कांन।।

ढाळ : १७

(लय : स्वार्थ सिध रे चंद्रवे कोइ)

कोड पूर्व लग पांमी साता, मोरादेवी माता जी।।

१. नगरी वनीता भली विराजें, झिगमिग-झिगमिग सोहें जी।
कंचण माहे कोट विराजे, सुर नरना मन मोहे जी।।

२. आदनाथजी आंण उपना, मोरादेवी रे पेटों जी।
जांमण जुगमें हूआ चावा, ज्यां जायों रिषभ जिणेसर बेटो जी।।

३. सेज्या उपर बेंठा सोभें, ताजा तकीया गादी जी।
भरत बाहूबल सरीषा पोता, ज्यांरी जुगमें दीपें दादीजी।।

४. अठांणूं वळे नांहना पोता, लुल-लुल पाए लागें जी।
रूप अनोपम अबल विराजें, मुलकंता मुख आगें जी।।

५. ब्राह्मी सुंदरी दोनूं पोती, रही अकन-कुमारी जी।
मोटी सतीयां मुकत पोहती, ज्यांरी जगमें सोभा भारी जी।।

६. आदनाथजी दिख्या लीधी, पडीयों पुत्र विजोगो जी।
तिण बेटा नें अति दुखीयों जांणी, धरती घट में सोगो जी।।

७. नगर वनीता प्रभू पधारया, जब दीधी भरत वधाइ जी।
हरख थईनें हाथी बेंठा, पुत्र वांदण नें आइ जी।।

दोहा

१. अब ऋषभदेव की माता मोरादेवी हाथी पर बैठे-बैठे निर्मल ध्यान ध्याते हुए मोक्ष में गई वह वर्णन कान लगाकर सुनें।

ढाळ : १७

वहां मोरादेवीजी माता ने करोड़ पूरब तक खूब साता प्राप्त की।

१. झगमग-झगमग करती विनीता नगरी के स्वर्णमय कोट देवताओं के मन को भी मोह लेते हैं।

२. मोरादेवी माता के उदर में आदिनाथजी आकर उत्पन्न हुए। उन्होंने ऋषभदेवजी जैसे पुत्र को जन्म दिया, इसलिए अपने युग में वे माता के रूप में प्रख्यात हुईं।

३. गादी तकियों के बीच शय्या पर विराजमान भरत और बाहुबल जैसे उनके पोते थे। वे उनकी दादी के रूप में शोभित हुईं।

४. भरत-बाहुबल के अतिरिक्त अट्ठानवे छोटे पोते हंसते खिलते उनके चरणों में नमन करते थे। उनका रूप अनुपम और उत्तम था।

५. उनकी ब्राह्मी-सुंदरी पौत्रियां अकन कुमारी रहीं। वे महासतियां मोक्ष में पहुंचीं। उनकी संसार में भारी शोभा हुई।

६. आदिनाथजी के दीक्षा ग्रहण कर लेने पर मोरादेवी को पुत्र-वियोग हो गया। पुत्र को अति दु:खित जानकर घट में शोक धारण करने लगी।

७. आदिनाथजी के विनीता पधारने पर जब भरत ने उन्हें बधाई दी तो वे हर्षित होकर हाथी पर बैठकर पुत्र वंदन के लिए आईं।

८. इंद्र इंद्रांणी देवी देवता, नर-नास्यां ना व्रदो जी।
समोसरण में साहिब बेंठा, जिम तारां में चंदो जी।।

९. तिहां देवदूधवी देव वजावें, मन में हरखज मांनें जी।
मारग में मोरादेवी रें, ते शबद पड्या छें कांनें जी।।

१०. ए शबद सुणीनें मोरादेवीजी, पूछें भरत नें आंमो जी।
ए मीठा शबद गेंहर गंभीरा, वाजा वाजे किण ठांमो जी।।

११. जब कहें भरतजी समोसरण में, देवी देवता आवें जी।
श्री रिखभदेवजी महिमा काजें, देवदूधवभी देव वजावें जी।।

१२. हिवें मोरादेवीजी मन में चिंतवें, म्हें मोह कीयों सर्व कूडो जी।
म्हें जांण्यों रिखभो दुखीयो होसी, पिण ओ सुखीयो दीसे पूरों जी।।

१३. म्हें तों इणरें काजें दुख वेद्यों, इण म्हारी काय न आंणी जी।
जब मा बेटां रो काचों सगपण, जांण लीयो धूरधांणी जी।।

१४. एकंत भावना तिहांइज भाया, आयो मन वेंरागों जी।
गृहस्थ नों भेष विन पालटीयां, कीया सर्व सावद्य ना त्यागों जी।।

१५. जग तारणनें जुगती जांमण, ध्यायो निरमल ध्यांनो जी।
मोहकर्म मोरादेवीजी जीता, पाम्यों केवलग्यांनों जी।।

१६. इण चोवीसी में सगलां पेंहली, सिवनगरी में पेंठा जी।
मोरादेवीजी मुगत पोंहता, हाथी होदें बेंठा जी।।

१७. भावना भाए कर्म काट्या, तपस्या मूल न कीधी जी।
सुखे समाधे मोरादेवी जी, अविचल पदवी लीधी जी।।

१८. आदनाथजी उदर धरेनें, मुगत पोंहती माता जी।
सासता सुखां में जाय विराज्या, करे करमांनी घाता जी।।

◆

८. समवसरण में इंद्र-इंद्राणी, देवी-देवता तथा नर-नारियों के वृंद के बीच प्रभु ऐसे विराजमान थे जैसे तारों के बीच में चंद्रमा विराजमान हो।

९. वहां देवता देवदुंदुभी बजाते हुए मन में अत्यंत प्रसन्नता का अनुभव कर रहे थे। रास्ते चलते हुए मोरादेवी के कानों में वे शब्द पड़ते हैं।

१०. उन शब्दों को सुनकर मोरादेवी ने भरत से पूछा– ये मधुर, गहर-गंभीर वाद्य कहां बज रहे हैं?।

११. तब भरतजी ने कहा– देवता ऋषभ भगवान् की महिमा के लिए समवसरण में आ रहे हैं और देव दुंदुभि बजा रहे हैं।

१२. अब मोरादेवीजी मन में चिंतन करने लगीं– मैं तो समझती थी कि ऋषभ दुःखी होगा, पर यह तो पूरा सुखी दीख रहा है। मैंने उसका मिथ्या ही मोह किया।

१३. मैं तो इसके लिए दुःखी हो रही थी पर इसको मेरी कोई परवाह नहीं है। सचमुच में मां-बेटे का यह संबंध कच्चा है। इसमें कोई सार नहीं है।

१४. इस प्रकार एकत्व भावना भाते हुए वहीं उनके मन में वैराग्य आया और बिना गृहस्थ का वेष बदले ही उन्होंने सर्व सावद्य योगों का त्याग कर दिया।

१५. माताजी ने मुक्ति के लिए उद्यत होकर निर्मल ध्यान ध्याया और मोहकर्म जीतकर केवलज्ञान को प्राप्त कर लिया।

१६. वर्तमान तीर्थंकरों की चौबीसी में मोरादेवीजी ने हाथी के हौदे पर बैठे-बैठे सबसे पहले मुक्ति नगरी में प्रवेश किया।

१७. उन्होंने जरा भी तपस्या नहीं की, केवल भावना से कर्मों को काट डाला। सुख-समाधिपूर्वक मुक्ति पद प्राप्त कर लिया।

१८. ऋषभदेव को अपने गर्भ में धारण कर माताजी मुक्ति में पहुंच गए। कर्मों का नाश कर शाश्वत सुखों में विराजमान हो गए।

◆

दुहा

१. तिण मोंरादेवी माता तणों, श्री रिक्षभदेवजी अंगजात।
त्यांरा पुत्र भरतजी पाटवी, ते प्रसिध लोक विख्यात।।

२. चक्ररत्न भरत रें ऊपनों, ते चाल्यों गगन आकास।
तिणनें भरतजी देखनें, पांम्या छें अतंत हुलास।।

३. भरत नरिंद तिण अवसरें, मन माहे कीयों विचार।
छ खंड माहे आंण मनावणी, हिवें ढील न करणी लिगार।।

४. हिवें तिण अवसर वनीता मझे, कुण कुण साथ समांन।
वळे कुण कुण रिध आवे मिली, ते सुणों सुरत दे कांन।।

ढाळ : १८

(लय : चुतर नर जोवों कर्म विपाक)

पुन तणा फल जांण।।

१. जी हो सोंलें सहंस देवता तिहां, आया भरत नरिंद री हजूर।
जी हो सनाह बंध सजीया थका, आय ऊभा छें कडा चूड। भरतेसर।

२. जी हो दोय सहंस तो देवता, दोनूंइ पासें रहें छें तांम।
जी हो ते रिख्या करें सेवग थका, भरत नरिंद री ठांम ठांम।।

३. जी हो चवदें सहंस देवता, रहें चवदें रत्न रें पास।
जी हो ते रिख्याकारी छें तेहना, त्यांनें साताकारी छें तास।।

४. जी हो चवदें हजार देवता सहू, रहें चवदे रत्न री लार।
जी हो ते सारा सेवग भरतजी तणा, भरतजी रा छें आगनकार।।

दोहा

१. ऋषभदेवज़ी उस मोरादेवी माता के पुत्र थे तथा भरतजी उनके उत्तराधिकारसंपन्न पुत्र हैं। यह बात सब जगह प्रसिद्ध है।

२. भरतजी के चक्ररत्न उत्पन्न हुआ। वह आकाश में चलने लगा। उसे देखकर उन्हें अत्यंत प्रसन्नता हुई।

३. उस समय भरत महाराज ने विचार किया। अब मुझे भरतक्षेत्र के छहों खंडों में अपनी आज्ञा को स्वीकार करवाना है। इसमें तनिक भी शिथिलता नहीं बरतनी है।

४. उस समय विनीता में कौन-कौन साथ-सामान उनके पास था तथा फिर कैसी ऋद्धि प्राप्त हुई उसे कान लगाकर सुनें।

ढाळ : १८

यह पुण्य का फल है।

१. उस समय सोलह हजार देवता भरत नरेंद्र के सामने उपस्थित हुए। वे सब सिर से पैरों तक सज्जित सन्नद्धबद्ध खड़े हैं।

२. दो हजार देवता तो भरत नरेंद्र के दोनों ओर सेवक की तरह रह कर हर स्थान में उनकी रक्षा करते हैं।

३-४. चौदह हजार देवता चौदह रत्नों के रक्षक हैं। वे सब भरतजी के आज्ञाकारी साताकारी सेवक हैं।

५. जी हो चवदें रतनां रे अधिष्टायका, तेतो देवता चवदें हजार।
जी हो ते भरतजी नी आगन थकी, आगन विना न रहें लिगार।।

६. जी हो तेरें रत्न तो आए मिल्यां, वनीता नगर मझार।
जी हो अस्त्री रत्न पिता घरे, वैंताढ नें पेले पार।।

७. जी हो अस्त्री रत्न पिता घरे, त्यां लग देवता नही तिण पास।
जी हो भरत नें आंण सूंप्यां पछें, देवता रिख्या करसी तास।।

८. जी हो वेंताढ पर्वत मूल तेहनें, अश्वरत्न ऊपनों जांण।
जी हो तिण अश्वरत्न नें देवता, हाजर कीधो भरतजी नें आंण।।

९. जी हो गजरत्न पिण उपनो, ते पिण वेताढ नें मूल पास।
जी हो तिण गजरत्न नें देवतां, आंण सूंप्यों भरतजी नें तास।।

१०. जी हो चर्म मणी नें कांगणी, ए तीनोइ रत्न श्रीकार।
जी हो ते उपनां श्रीघरनें विषें, ते घर नव निधांन मझार।।

११. जी हो यां तीनोइ रतन भणी, तिहां थी देवता लेइ आया छें तास।
जी हो ते आंण सूंप्या भरतजी भणी, करे घणी अरदास।।

१२. जी हो चक्ररत्न नें छत्र रत्न, दंड नें असी रत्न वखांण।
जी हो ए च्यारूं रत्न तो ऊपनां, आवधशाला माहे आंण।।

१३. जी हो तेरें रत्न अस्त्री बिना, आपरें वस हूआ जांण।
जी हो वस हूवा सोलें सहंस देवता, ते तों हाजर ऊभा छें आंण।।

१४. जी हो हस्ती घोडा रथ छें जूआ-जूआ, लख चोरासी चोरासी प्रमांण।
जी हो पायक छिनू कोड जेहनें, इतरी सेन्य घराघरू जांण।।

१५. जी हो सुखे समाधे दिन नीकलें, भोग माहे लेहलीन।
जी हो भरत नरिंद राजंद रे, साथे आइ बधाइ तीन।।

५. चौदह रत्नों के अधिष्ठायक सभी चौदह हजार देवता भरतजी की आज्ञा में रहते हैं। बिना आज्ञा के कुछ भी काम नहीं करते।

६. तेरह रत्न तो विनीता नगरी में ही आकर मिल गए। केवल स्त्रीरत्न वैताढ्य गिरि के पार अपने पिता के घर है।

७. जब तक स्त्रीरत्न अपने पिता के घर रहता है तब तक देवता उसके पास नहीं रहते। भरतजी को सौंप देने के बाद वे उसकी रक्षा करेंगे।

८. वैताढ्य गिरि के मूल में अश्वरत्न को उत्पन्न हुआ जानकर देवताओं ने उसे भरतजी के सामने उपस्थित किया।

९. इसी प्रकार जब वैताढ्य गिरि पर्वत के मूल में गजरत्न पैदा हुआ तो देवताओं ने उसे लाकर भरतजी को सौंप दिया।

१०. चर्मरत्न, मणिरत्न तथा काकिनीरत्न ये तीनों ही श्रेष्ठ रत्न हैं। वे श्रीधर पर्वत में नव–निधान में पैदा हुए।

११. देवता इन तीनों रत्नों को वहां से लेकर आए तथा अत्यधिक विनम्रतापूर्वक भरतजी को सौंप दिए।

१२. चक्ररत्न, छत्ररत्न, दंडरत्न तथा असिरत्न– ये चारों आयुधशाला में आकर उत्पन्न हुए।

१३. इस प्रकार स्त्रीरत्न के अतिरिक्त तेरह रत्न अपने आप वश में हो गए। कुल मिलाकर सोलह हजार देवता भरत के वश में होकर हमेशा सामने खड़े रहते हैं।

१४. हाथी, घोडा और रथ प्रत्येक चौरासी–चौरासी लाख प्रमाण हैं। छिनवें करोड़ उनकी अपनी निजी पायक सेना है।

१५. भोग में तल्लीन रहते हुए आराम से उनका समय बीत रहा है। एकबार उनको एक साथ तीन बधाइयां प्राप्त हुईं।

१६. जी हो रिषभदेवजी नें केवल उपनों, चक्ररत्न उपनों आवधसाल।
जी हो पोतों हूवो घरे आप रें, तीनूं आइ बधाइ समकाल।।

१७. जी हो रिषभदेवजी नें उपनों, रूडो केवलग्यांन अनूंप।
जी हो पेंहली बधाइ दीधी तेहनें, घणा महोछव कीया धर चूंप।।

१८. जी हो पोतो हुवो घरे आप रें, तिणनें पछें बधाइ दीध।
जी हो जन्म महोछव तेहना, मोटें मंडांण सूं कीध।।

१९. जी हो चक्ररत्न उपना तणी, सेवग दीधी बधाइ आंण।
जी हो पछें दीधी बधाइ तेहनें, महोछव कीया छें मोटें मंडांण।।

२० जी हो रिध जठी तठी थी आए मिली, ते पुन तणें परमांण।
जी हो भरत नरिंद राजंद नें, पूर्व तप तणा फल जांण।।

२१. जी हो आ रिध संपत भरतजी तणें, मिली छें वनीता में आंण।
जी हो हिवें छ खंड साजवा भणी, नीकलें छें मोटें मंडांण।।

२२. जी हो पोताना बल प्रक्रम करी, लेसी छ खंड नें जीत।
जी हो सेन्यादिक साथे लेजावसी, ते तों मोटा राजा री छें रीत।
भरतेसर पुन तणा फल जांण।।

२३. जी हो पूर्व तप प्रभाव थी, मिलसी सगलाइ थोक।
जी हो वळे संजम ले तपसा करे, इणहीज भव जासी मोख।।

◆

१६. ऋषभ देव को केवलज्ञान उत्पन्न हुआ, आयुधशाला में चक्ररत्न उत्पन्न हुआ और घर में पौत्र उत्पन्न हुआ। एक समय में तीनों बधाइयां मिलीं।

१७. ऋषभदेव को अनुत्तर केवलज्ञान उत्पन्न हुआ। यह पहली बधाई दी गई इसका उन्होंने बड़े उत्साह से महोत्सव किया।

१८. उसके बाद घर में पौत्र उत्पन्न हुआ, यह बधाई दी गई। उसका भी जन्म महोत्सव के रूप में बड़े ठाठ-बाट से महोत्सव किया।

१९. उसके बाद सेवक ने आकर चक्ररत्न उत्पन्न हुआ उसकी बधाई दी। उसका भी बड़े ठाठ-बाट से महोत्सव किया।

२०. पूर्वकृत तप के फल के रूप में पुण्य के अनुसार उन्हें जहां-तहां से सम्पदा एवं ऋद्धियां आकर प्राप्त हुईं।

२१. भरत नरेंद्र को ये सब ऋद्धि-संपदा विनीता में स्वतः मिलीं। अब वे छह खंड साधने के लिए व्यापक तैयारी के साथ विनीता से निकलते हैं।

२२. छह खंड को वे अपने बल-पराक्रम से जीतेंगे। सेना आदि को साथ ले जाएंगे यह तो बड़े राजाओं की परंपरा है। भरतेश्वर के पुण्य के फलों को जानें।

२३. पूर्व तप के प्रभाव से सभी वस्तुएं मिलेंगी, फिर वे संयम ग्रहण कर तपस्या कर इसी भव में मोक्ष जाएंगे।

◆

दुहा

१. हिवें सेनापती नें बोलायनें, कहें छें भरत राजांन।
पटहस्ती रत्न सिणगार नें, सज कर कीजों सावधांन।।

२. वळे घोडा हाथी रथ सुभट नें, सज करो सताब सूं जाय।
चउरंगणी सेन्या सिणगार नें, पाछी आगन सूपो आय।।

३. सेवग सुण तिमहीज कीयों, पाछी आगन सुंपी आय।
जब भरत नरिंद तिण अवसरें, आया मंजण घर माहि।।

४. सिनांन मरदन दोनूं कीया, सर्व आगें कह्यों तिम जांण।
मोलें करे मूहघा घणा, एहवा पेंहरया आभूषण आंण।।

५. मंजण घर थी नीकल्या, लोक दीठां पांमें आणंद।
जांणें बादल मां सूं नीकल्यों, रज रहीत पुनम रो चंद।।

६. घणा सुभट सेन्याकर परवरयों, विरदावलीयां बोलावतो रसाल।
मोटें मंडाणें कर नीकल्यों, आयों छें उवठांण साल।।

ढाळ : १९

(लय : बे बे रें मुनीवर वेहरण पांगरया)

भरतजी चाल्या छें छ खंड साधवा रे।।

१. भरतजी पटहस्ती ऊपर चढ्या रे, छत्र धरावें मसतक तास रे।
ते संकोरंट फूलां री माला सहीत छें रें, चमर बीजावें दोनूं पास रें।।

दोहा

१,२. अब अपने सेनापति को बुलाकर भरत महाराज कहते हैं कि गज-रत्न को साज-श्रृंगार कर सावधान करो तथा घोड़े-हाथी-रथ सुभट आदि चतुरंगिनी सेना शीघ्रता से सज्ज करो और मेरी आज्ञा को प्रत्यर्पित करो।

३. सेवक ने उन्होंने जैसा कहा वैसा ही किया और उनकी आज्ञा को प्रत्यर्पित किया। उसके बाद भरत नरेंद्र स्नानघर में आए।

४. स्नान-मर्दन के बाद जैसे पहले कहा गया है उसी प्रकार सब कुछ किया। अनेक प्रकार के बहुमूल्य आभूषणों को धारण किया।

५. जब वे स्नानघर से बाहर आए तो उन्हें देखकर लोगों को आनंद हुआ। ऐसा लगा जैसे बादलों में से नीरज चंद्रमा बाहर आया है।

६. अनेक सुभट-सेनापतियों से परिवृत्त होकर रसभरी यशोगाथाएं बुलवाते हुए ठाठ-बाट से उपस्थान शाला में आते हैं।

ढाळ : १९

भरतजी छह खंड जीतने के लिए निकले हैं।

१. भरतजी पटहस्ती पर चढ़कर, सिर पर छत्र धराकर, सकोरंट फूलों की माला पहनकर, दोनों ओर चामर डुलाते है।

२. त्यांरो हारां करेनें हिवडों सोभतों रे, कांनां में कुंडल करे उद्योत रे।
मस्तक मुगट छें त्यारें दीपतो रे, जांणें लागे रही झिगामिग जोत रे।।

३. चउरंगणी सेन्या लेइनें नीकल्या रे, मोटा सुभटां नें लीधा साथ रे।
वनीता नगरी विचें होय नीकल्या रें, भरत नरिंद छ खंडरो नाथ रे।।

४. मंगलीक शब्द तिणंनें बोलावता रे, अनेक नर चालें त्यारें लार रे।
वळे जय जय शबद लोक मुख ऊचरें रे, ते घणु हरख छें हीया मझार रे।।

५. त्यारें दोय सहंस अदिष्टत देवता रे, सेवग थका रहें हजूर रे।
त्यां देवता सहीत भरतजी परवस्या रे, त्यारें पुन तणों संचो छें पूर रे।।

६. वेसमण देव तणी परें शोभतो रे, इंद्र सरीखी रिध बखांण रे।
इण लोक में जशकीर्त्त अति विस्तरी रे, बुधवंत डाहो छें चुतर सुजांण रे।।

७. गंगा नदी रा दखिण नें कुल रे, गामां नगरांदिक सगले ठांम रे।
त्यां सगला राजां नें पगे लगायने रे, आंण मनाइ छें सगलां तांम रे।।

८. समक प्रकारे सर्व राजा भणी रे, जीती जीती नें आघो जाय रे।
त्यारों श्रेष्ट रत्नां रो भारी भेटणो रे, ले लेनें आघो चाल्यो ताहि रे।।

९. केडें केडे चक्ररत्न तणें रे, एक एक जोजन आंतरें तांम रे।
कटक रों कूच करें इण रीत सू रे, सुखे सुखे लेता विसरांम रे।।

१०. इण विध चक्र नें सेन्या चालती रे, मागध तीर्थ साहमा जाय रे।
तिण तीरथ सूं नही नेंरा नही ढूकडा रे, चलीया-चलीया आया छें ताहि रे।।

११. लांबपणें बारें जोजन तणो रे, पेंहुलों नव जोजन रे प्रमाण रे।
एहवों कोइ नगर हुवें रलीयांमणो रे, तिम विजय कटक उतर्यों जांण रे।।

१२. वढइरतन बोलावी इम कहें रे, वेगा कर म्हारें आज आवास रे।
पोषधसाल सहीत करनें वेगसूं रे, म्हारी आगन पाछी सूपों मो पास रे।।

२. हारों से उनका हृदय सुशोभित हो रहा है। कानों में कुंडल उद्योत कर रहे हैं, मस्तक पर मुकुट दीप रहा है। ऐसा लगता है जैसे झगमग ज्योति जल रही हो।

३. चतुरंगिनी सेना और प्रधान सुभटों को साथ लेकर छह खंड के स्वामी भरत नरेंद्र विनीता नगरी के बीच से होकर निकल रहे हैं।

४. अनेक लोग मंगलवाचन करते हुए उनके पीछे चल रहे हैं। अनेक लोग जय-जय शब्द का मुख से उच्चारण कर रहे हैं। उनके हृदय में अपार हर्ष है।

५. दो हजार देवता तो अदृष्ट रूप में सेवक बनकर साथ चल रहे हैं। पुण्य के भरपूर संचय से भरतजी उन देवताओं से घिरे हुए हैं।

६. भरत नरेंद्र वैश्रमण देव की तरह सुशोभित हैं। उनकी ऋद्धि इंद्र के समान है। इस लोक में चारों ओर उसकी यशकीर्ति फैली हुई है। वे बुद्धिमान्, चतुर, सज्जन हैं।

७. गंगा नदी के दक्षिणी किनारे के सभी गांवों-नगरों में सभी जगह सभी राजाओं को नत-मस्तक कर अपना अनुशासन स्थापित किया।

८. सुचारू रूप से सब राजाओं को जीतकर उनके श्रेष्ठ रत्नों का गुरुतर उपहार स्वीकार कर आगे से आगे बढ़ते जा रहे हैं।

९. चक्ररत्न के पीछे-पीछे, एक-एक योजन के अंतराल से, सुखपूर्वक विश्राम लेते हुए सेना के साथ कूच करते हैं।

१०. इस प्रकार चक्ररत्न और सेना के साथ चलते हुए मागध तीर्थ की ओर बढ़ते हुए तीर्थ के न अति दूर और न अति निकट आ पहुंचे।

११. बारह योजन लंबा और नौ योजन चौड़ा विजय कटक का पड़ाव इस तरह होता जैसे कोई मनोरम नगर बस गया हो।

१२. अपने बढ़ईरत्न को बुलाकर यों कहते हैं- हमारे लिए पौषधशाला सहित आज का आवास शीघ्र तैयार करो तथा मेरी आज्ञा मुझे प्रत्यर्पित करो।

१३. वढइरतन सुणे हरष्यों घणो रे, वचन कर लीधो तिण प्रमांण रे।
भरतजी कह्यों तिम सगलो करी रे, आगन पाछी सूपी आंण रे।।

१४. जब भरतजी हस्तीरत्न थी उतरी रे, आया छें पोषधसाला माहि रे।
मागध तीर्थ कुमार नें कारणें रे, तेलो कीयों तिण ठांमें आय रे।।

१५. तीन दिन पूरा हूआं थकां रे, नीकल्या छें पोषधसाला बार रे।
उवठांण साला आयनें भरतजी रे, सेवक नें बोलाय कहें तिणवार रे।।

१६. चउरंगणी सेन्या नें तूं सझकरी रे, चउघंट रथ नें सिणगारे जाय रे।
तिण रथ रे घोडा जोतरनें सजकरी रे, म्हारी आगन पाछी सूपे आय रे।।

१७. जे जे हुकम करे सेवग भणी रे, ते सेवग करें हर्षसूं कांम रे।
ते पूर्व तप तणा फल जांणजो रे, वळे तप कर जासी अविचल ठांम रे।।

◆

१३. बढ़ईरत्न यह आदेश सुनकर हर्षित हुआ। उनके वचन को स्वीकार कर जैसा भरतजी ने कहा वैसा कर उनकी आज्ञा को प्रत्यर्पित किया।

१४. तब भरतजी हस्तीरत्न से उतरकर पौषधशाला में आए और मगध तीर्थकुमार के निमित्त वहां तीन दिन की तपस्या शुरू की।

१५. तीन दिन पूरे होने पर भरतजी पौषधशाला से बाहर निकल कर उपस्थान शाला में आकर सेवक को बुलाकर आदेश देते हैं।

१६. तुम चतुरंगिनी सेना को सज्जकर, चतुर्घंट रथ को सजाकर, रथ में घोड़ों को जोतकर सज्ज करो तथा मेरे आदेश की अनुपालना कर मुझे प्रत्यर्पित करो।

१७. भरतजी सेवक को जो जो आज्ञा देते हैं वह उल्लासपूर्वक वह काम करता है। यह पूर्वकृत तपस्या का फल है तथा तपस्या कर वे मोक्ष में जाएंगे।

◆

दुहा

१. इम कहें सेवग पुरष नें, मंजण घर में कीयों परवेश।
सिनांन मरदान करे भरतजी, पेंहर्‍या आभूषण इधिक विशेस।।

२. मंजण घर माहि थी नीकल्यो, मन माहे इधिक आणंद।
जांणें वादल माहि थी नीकल्यों, रज रहीत पुनम रों चंद।।

३. हय गय रथ परवर्‍यों थकों, साथे वड वडा जोध भूपाल।
चउरंगणी सेन्या सहीत सूं, आयो उवठांण साल।।

४. जिहां चउघंटां अश्वरथ तिहां, तिण उपर बेंठों आय।
चउरंगणी सेन्या सहीत सूं, आघा चाल्या भरत महाराय।।

५. वड वडा जोध विरंद सूं, विंट्यो थकों नरिंद।
चक्ररत्न देखालें मारग चालतों, मन माहें इधिक अणंद।।

६. अनेक राजां रा वृंद लारे चालता, सीह जिम नाद करंत।
होय रह्या कल कल शब्द हरषना, समुद्र कलोल जेम गूंजंत।।

७. पूर्व दिस मागध तीर्थ, तिहां, लवण समुद्र में कीयों परवेश।
रथ धुरी भीजें समुद्र में तिहां, रथ ऊभो राख्यों भरत नारस।।

८. मागध तीर्थ कुमार देवता भणी, पाय नमावण काज।
वळे आंण मनावण तेहनें, उदम करें छें भरत माहाराज।।

दोहा

१. सेवक पुरुष को यह कहकर भरतजी ने स्नानघर में प्रवेश किया। स्नानमर्दन के बाद विशिष्ट आभूषण धारण किए।

२. जब वे स्नानगृह से निकले तो अत्यंत आनंदित थे। ऐसा लग रहा था जैसे पूनम का नीरज चंद्रमा बादलों से निकला हो।

३. हाथी, घोड़े, रथ तथा बड़े-बड़े युद्धवीर राजाओं से परिवृत्त चतुरंगिनी सेना के साथ उपस्थान शाला में आए।

४. वहां चतुर्घंट अश्वरत्न तैयार खड़ा था। भरतजी उस पर विराजमान हुए और चतुरंगिनी सेना के साथ आगे बढ़े।

५. भरत नरेंद्र बड़े-बड़े योद्धावृंदों से घिरे हुए हैं। चक्ररत्न उनको मार्ग दिखाता हुआ आगे चल रहा है। वे मन में अत्यंत प्रसन्न हैं।

६. राजाओं के अनेक समूह सिंहनाद करते हुए उनके पीछे चल रहे हैं। खुशियों के कल-कल शब्द ऐसे गूंज रहे थे जैसे समुद्र में लहरें।

७. पूर्व दिशा में जहां मागध तीर्थ था वहां से भरतजी ने लवण समुद्र में प्रवेश किया। रथ की धुरी भीगे वहां तक रथ को समुद्र में खड़ा किया।

८. मागध तीर्थ कुमार देवता को अपने चरणों में झुकाने व उनसे अपना अनुशासन मनवाने के लिए भरत महाराज उद्यम करते हैं।

ढाळ : २०

(लय : भव जीवां तुम्ह जिण धर्म ओलखो)

हिवें भरतजी नमावें देवी देवता।।

१. हिवें भरतजी धनुष हाथे लीयो, मन माहे रें आणीं इधिक हुलास।
उगतों चंदरमा नें इंदर धनुष नो, तिण सरीखो रे धनुष तणों प्रकाश।।

२. जेहवी किरण नवी बिजली तणी, तेहवी किरणां रे तिण धनुष री जांण।
तिणरें तपाया सोवन तणा बंध छें, तिण माहे रे रूडा चेंहन पिछांण।।

३. केसरीसिंघ ना केस जेहवा, वळे चमरी रे गाय ना केस जांण।
एहवा लछण छें तिण धनुष में, तिणरी जीवा रें दिढ अतंत बखांण।।

४. मणी रत्न तणी घंट जालिका, तिण करनें रे धनष विट्यों रह्यों ताहि।
तिणरो विस्तार सुतर में कह्यों घणों, एहवो धनुष रे हाथे लीयों छें राय।।

५. वळे बांण हाथे लीयों भरतजी, तिणरा छेंहडा रे बेहूं वजर में जांण।
वजरसार सारीखों मुख जेहनों, कंचन में रे बांध्यों बांण वखांण।।

६. मणी चंद्रकांतादिक रत्न में, घणु निरमल रे बांण सोभे रह्यों ताहि।
अनेक प्रकारना मणी रत्न में, भांतां चित्री रे तिण बांण रे माहि।।

७. निज नाम चित्र्यों तिण बांण में, तिणनें लीधो रे भरतजी हाथ माहि।
गोडीवाल बेंसीनें बांण तांणीयों, कांनां लग रे आंण्यों तांणीनें ताहि।।

८. हिवें मुख सु कहें छें भरतजी, नाग असुरादिक हो म्हारी सीम रे बार।
जे कोइ बांण अधिष्टायक देवता, तेहनें प्रणमु हो करे नमसकार।।

९. वळे बांण ना अधिष्टायक देवता, नाग असुर हो वळे सोवन कुमार।
म्हारी सीमवासी सर्व देवता, साहज करजों हों मोंनें थे इण वार।।

ढाळ : २०

अब भरतजी देवी देवताओं को अपने अधीन बनाते हैं।

१. अब अत्यंत उल्लास से भरकर भरतजी ने अपने हाथ में धनुष लिया। उस धनुष का प्रकाश ऊगते हुए चंद्रमा तथा इंद्रधनुष जैसा था।

२. धनुष की किरणें बादलों की तेजस्वी विद्युत जैसी हैं। उस पर तपाए हुए सोने के बंध लगाए हुए हैं तथा अनेक आकर्षक चिह्न अंकित हैं।

३. केशरीसिंह तथा चमरी गाय के केशों जैसे लक्षण उस धनुष में अंकित हैं। उसकी जीवा अत्यंत सुंदर है।

४. मणिरत्न की घंट जालिकाओं से वह धनुष लपेटा हुआ है। आगम में उसे विस्तार से बताया गया है। भरतजी ने ऐसा धनुष हाथ में उठाया।

५. भरतजी ने अपने हाथ में जो बाण लिया उसके दोनों किनारे वज्रमय है। उसका मुख वज्रसार जैसा है। बाण सोने के तारों से बंधा हुआ है।

६. वह चंद्रकांत मणिरत्नों से सुशोभित एवं निर्मल है। उसमें विविध प्रकार के मणिरत्न चित्रित हैं।।

७. भरतजी ने उसमें अपना नाम भी चित्रित किया। फिर घुटना नीचे टिका कर बाण को हाथ में लेकर उसे खींच कर कानों तक ले आए।

८,९. अब भरतजी अपने मुंह से कहते हैं– मेरे राज्य की सीमा के बाहर नाग, असुर आदि बाण के कोई अधिष्ठायक देव हों तो मैं उन्हें प्रणाम–नमस्कार करता हूं तथा मेरे राज्य की सीमा के अंदर जो भी नाग, असुर, सुवर्णकुमार आदि बाण के अधिष्ठायक देवता हों वे इस समय मुझे सहयोग प्रदान करें।

१०. धनुष छें पंचमी चंद्रमा जिसों, विजली जिम हो तिणरी क्रांत छें ताहि।
एहवों धनुष छें डावें हाथ तेहनें, बांण मूंक्यो हो मागध तीर्थ स्हांमो राय।।

११. बांण गयों छें सिधर उतावलों, बारें जोजन हों ततकाल में जाय।
मागध तीर्थ ना अधिपती देवता, बांण पडीयो हो त्यांरा भवन रे माहि।।

१२. ते बांण पड्यों देखी देवता, आसूर ते हो कोप चढीयो ततकाल।
तीन लीहटी निलाड रे चाढनें, क्रोध वस रे बोलें वचन विकराल।।

१३. ओं तों अपथ पथीयो दुष्ट कुण अछें, हीण चउदस रें अमावस जायो ताहि।
ते लज्या नें लिखमी रहीत छें, बांण नांख्यों रे म्हारा भवन रे माहि।।

१४. एतो बांण भरतेसर चलावीयों, ते तो जांणें रे संसार नो तमास।
ते पिण छोड चारित चोखों पालनें, मोख जासी रे काटे करमां री रास।।

◆

१०. धनुष का आकार पंचमी के चंद्रमा जैसा है। उसकी कांति विद्युत जैसी है। उसे अपने बाएं हाथ में लेकर मागध तीर्थ की ओर उसे फेंक दिया।

११. बाण त्वरित गति से तत्काल बारह योजन दूर जाकर मागध तीर्थ के अधिपति देवता के भवन में गिरा।

१२. बाण को पड़ा देखकर असुर देवता तत्काल कुपित हुआ। अपने ललाट पर तीन लकीरें चढ़ाकर क्रोधवश होकर विकराल वचन बोलने लगा।

१३. यह अनिच्छित की इच्छा करने वाला अमावस-चतुर्दशी के दिन पैदा होने वाला पुण्यहीन लज्जा और लक्ष्मी से रहित दुष्ट कौन है जिसने मेरे भवन में बाण फेंका है?।

१४. भरतजी ने यह बाण फेंका यह एक प्रकार से संसार का तमाशा ही समझना चाहिए, अंततः वे इसे छोड़ विशुद्ध चारित्र का पालन कर कर्मों का नाश कर मोक्ष में जाएंगे।

◆

दुहा

१. सिंघासण सूं ऊठनें देवता, बांण पर्स्यो तिहां आय।
तिण बांण लीयों छें हाथ में, नाम वाचे निरणों कीयों ताहि।।

२. हिवें अधवसाय मन उपनों, विचार कीयों मन माहि।
जंबूधीप ना भरतखेतर मझे, चक्रवत ऊपनो आय।।

३. तो जीत आचार छें माहरो, तीनोइ काल मझार।
मागध तीर्थ कुमार देवतां तणों, भेटणों देवो छें इण वार।।

४. तिण कारण हूं पिण जाऊ तिहां, भरत राजा रें पास।
भेटणों मुख आगल मूंकनें, विनें सहीत करूं अरदास।।

५. एहवी करेय विचारणा, हार मुगट कुडल लीया हाथ।
हाथां नें कडा बांह्यां नें बहिरखा, वळे वस्त्र आभरण लीया साथ।।

६. नामक्रित बांण लीयो हाथ में, मागध तीर्थ पांणी लीयो तास।
उतकष्टी देव गति चालनें, आयो भरत नरिंद रे पास।।

७. आकासे ऊभों रह्यों, न्हांनी घुघरी करनें सहीत।
रूडा वस्त्र आभूषण पेंहरणें, विनें सहीत बोलें रूडी रीत।।

ढाळ : २१

(लय : मृगा पुतर गोखां रतन जड़ाय हो म्हारा राज कुमर)

रे मुझ पुनवंत राजवी राजंदमोरा, भागवली भूपाल हो।।

१. दोनूं हाथ जोडी आवरतन करी राजंदमोरा, दोनूं मस्तक चढाइ तांम हो।
विनें सहीत सीस नमाय नें राजंदमोरा, करवा लागों गुण ग्रांम हो।।

दोहा

१. देवता अपने सिंहासन से उठकर जहां बाण पड़ा था वहां आया। बाण को हाथ में लिया और नाम पढ़कर निर्णय किया।

२. तदनंतर मन में अध्यवसाय उत्पन्न होने पर विचार किया जंबूद्वीप में भरतेश्वर चक्रवर्ती उत्पन्न हुआ है।

३. मुझे इस समय भरत को उपहार देना चाहिए। मागध तीर्थ कुमार देवता का तीनों ही कालों में यह परंपरागत व्यवहार है।

४. इसलिए मैं भी भरत राजा के पास जाऊं और उपहार उनके सामने प्रस्तुत कर विनयपूर्वक निवेदन करूं।

५. ऐसा सोचकर उसके हार, मुकुट, कुंडल, हाथों के कड़े, भुजबंध आदि वस्त्र–आभरण साथ लिए।

६,७. नामांकित बाण व मागध तीर्थ का पानी हाथ में लेकर तीव्रतम देव गति से चलकर भरत के पास आकर आकाश में खड़ा रहा। नन्हीं घूघरियों सहित रुचिर वस्त्राभूषणों को पहने हुए वह विनयपूर्वक बोला।

ढाळ : २१

हे पुण्यवान् राजेंद्र! मेरा सौभाग्य है कि आप जैसे भूपति प्राप्त हुए।

१,२. दोनों हाथ जोड़, आवर्तन कर, मस्तक पर अंजली रखकर विनयपूर्वक शीश झुकाकर भरतजी का गुणगान करने लगा–जिन शत्रुओं को आपने जीता नहीं है,

२. वेंरी जीता नही त्यांनें जीतजो रा॰, जीतां री कीजों प्रतिपाल हो।
जय विजय होजों सांमी तुम तणी रा॰, करजो थे राज विसाल हो।।

३. जय विजय करे वधायनें रा॰, छ खंड रा सिरदार हो।
वळे विडदावली बोलें घणी रा॰, वेंर्‍यां ना मरदणहार हो।।

४. पूर्व दिस मागध तीर्थ तणों रा॰, तुम देस तणों वसवांन हो।
हूं मागध कुमार छूं देवता रा॰, आयों हूं छोडे अभिमांन हो।।

५. हूं किंकर छूं आपरो रा॰, सेवग छूं आग्याकार हो।
हूं पूर्व दिस ना अंतनो रुखवाल छूं रा॰, विघन निवारणहार हो।।

६. जे केइ दुष्ट छें देवी देवता रा॰, दुख दें लोकां नें आय हो।
मार मिरगी रोगादिक फेंलाय दें रा॰, ते करवा न देसूं अन्याय हो।।

७. उपसर्ग देवादिक ना उपजें रा॰, त्यांरों हूं मेटणहार हो।
हूं तो कोटवाल छूं आपरो रा॰, पूर्व दिस मझार हो।।

८. हूं उत्तम पुरुष आया जांणनें रा॰, भेटणों ल्यायों तुम पास हो।
ते म्हें आप तणें कारणें रा॰, तुम पाय मूंकूं छूं तास हो।।

९. हार मुकट कुंडल कांन नें रा॰, कडा हस्तां ना जांण हो।
बांह्यां नें पेंहरण बेंरखा रा॰, वस्त्र देवदुष वखांण हो।।

१०. ओर आभरण वळे आपीया रा॰, नांमकिरत निज बांण हो।
ओ पांणी छें मागध तीर्थ तणो रा॰, राज अभिक्षेक पिछांण हो।।

११. इतरा वांना सर्व आगल धरी रा॰, बोल्यों छें जोडी हाथ हो।
आप करों अंगीकार तेहनें रा॰, करो मोंनें आप सुनाथ हो।।

उन्हें जीते और जिनको जीत लिया है उनकी प्रतिपालना करें। आपकी जय–विजय हो, आपका राज्य विशाल हो।

३. आप छह खंड के स्वामी हैं। शत्रुओं का मर्दन करने वाले हैं। इस प्रकार प्रशंसा की।

४. मैं पूर्वदिशि में मागध तीर्थ में रहने वाला मागध कुमार देवता हूं। मैं अपना अभिमान छोड़कर आपके पास आया हूं। आपके देश का नागरिक हूं।

५. मैं आपका दास हूं, आज्ञाकारी सेवक हूं। संपूर्ण पूर्व दिशा का रखवाला तथा विघ्नों का निवारण करने वाला हूं।

६. यदि कोई दुष्ट देवी–देवता आकर लोगों को कष्ट देगा, मिरगी आदि रोग या महामारी फैलाएगा तो मैं उसे ऐसा अन्याय नहीं करने दूंगा।

७. किसी देवता ने कोई उपसर्ग किया तो मैं उसे मिटा दूंगा। मैं आपके पूर्वदिशि का कोटपाल हूं।

८. आप जैसे उत्तम पुरुष के आगमन की बात जानकर मैं उपहार लेकर आपके पास आया हूं। उसे मैं आपके चरणों में समर्पित करता हूं।

९,१०. हार, मुकुट, कानों के कुंडल, बाजुबंध, बाहों में पहनने के लिए बहरखा, देवदुष्य आदि वस्त्र–आभरण तथा अपना नामांकित बाण समर्पित किया। यह मागध तीर्थ का जल आपके राज्याभिषेक का परिचायक है।

११. इतनी प्रकार की वस्तुएं सामने रखकर हाथ जोड़कर बोला– आप इन्हें स्वीकार कर मुझे सनाथ करें।

१२. जब भरत नरिंद देवता तणों रा०, भेटणो कीयों अंगीकार हो।
जब मागध तीर्थ कुमार देवता रा०, हूवों छें हरष अपार हो।।

१३. मागध कुमार देव सेवग थयो रा०, पूर्व तप फल जांण हो।
त्यांनें ग्यांन सूं जांणें भरतजी रा०, ए रिध सर्व धूर समांण हो।।

◆

१२. भरत नरेंद्र ने देवता का उपहार स्वीकार किया। मागध तीर्थ कुमार देवता इससे अत्यंत प्रसन्न हुआ।

१३. मागध कुमार देवता भरतजी का सेवक हुआ, यह पूर्वकृत तपस्या का परिणाम है। भरतजी यह अच्छी तरह से जानते हैं, यह सब ऋद्धि धूल के समान है।

◆

दुहा

१. मागध कुमार देवता भणी, घणों सतकार दे सनमांन।
सीख दीधी छें तेहनें, भरतेसर राजांन।।

२. आंण मनाय देवता भणी, रथ पाछों फेर्यों तांम।
लवण समुद पाछा उतर्या, आया विजय कटक तिण ठांम।।

३. उवठांण साला तिहां आयनें, रथ ऊभों राख्यों ताहि।
तिण रथ थी हेठा उतरी, गया मंजण घर माहि।।

४. सिनांन मरदन कियों तिहां, आगें कह्यों तिम सगलोइ जांण।
पछें भोजन मंडप में जायने, पारणों कीधों छें आंण।।

५. भोजन कर तिहां थी नीकल्या, फेर आया उवठांण साल।
तिहां बेंठा सिंघासण ऊपरें, श्रेणी प्रश्रेणी तेर्या तिण काल।।

६. मागध तीर्थ कुमार नामें देवता, ते नमीयो छें मुझ आय।
आठ दिवस महोछव करे, माहरी आग्या पाछी सूंपो ताहि।।

७. ए वचन सुणेनें हरखीयों, श्रेणी प्रश्रेणी तांम।
तिहां थी पाछा नीकल्या, महोछव करें ठांम-ठांम।।

८. अठाइ महोछव पूरा हूआं, चक्ररत्न तिण वार।
आवधसाला थी बाहिर नीकल्यों, चाल्यों नेरतकुण मझार।।

दोहा

१. भरतजी ने मागध कुमार देवता को सत्कार-सम्मानपूर्वक विदा किया।

२. देवता पर अनुशासन स्थापित कर, रथ को मोड़कर, लवण समुद्र से बाहर निकलकर अपने विजयकटक पड़ाव पर पहुंचे।

३. उपस्थान शाला के पास आकर रथ को खड़ा किया। रथ से नीचे उतरे और स्नानघर में गए।

४. जैसा कि पीछे वर्णन किया गया वैसा ही स्नान मर्दन आदि किया, फिर भोजनशाला में जाकर पारणा किया।

५. भोजन कर वहां से निकलकर पुन: उपस्थानशाला में आकर सिंहासन पर बैठकर तत्काल श्रेणि-प्रश्रेणि के लोगों को बुलाया।

६. कहा- मागध तीर्थ कुमार देवता ने मेरी आज्ञा स्वीकार करली है। अत: नगर में आठ दिनों तक महोत्सव कर मेरी आज्ञा मुझे प्रत्यर्पित करो।

७. श्रेणि-प्रश्रेणि के लोग यह वचन सुनकर हर्षित हुए और वहां से निकल करके स्थान-स्थान पर महोत्सव करने लगे।

८. आठ दिनों का महोत्सव पूरा होने पर चक्ररत्न आयुधशाला से बाहर निकलकर नैर्ऋत्य कोण में चलने लगा।

ढाळ : २२

(लय : थे तो जीव दया धर्म पालो)

१. चक्ररत्न नें आकासें देखो रे, भरतजी हुआ हरष विशेखो।
मागध तीर्थ देव नें आंपो रे, तिणनें निज सेवग थापो।।

२. वरदांम तीर्थ साजण कांमो रे, सेवग नें तेडी कहें आंमो।
घोडा हाथी रथ पायक ताह्यो रे, चोरंगणी सेन्या सज जायो।।

३. पटहस्ती सिणगार तूं जायो रे, कहिनें पेंठा मंजण घर माह्यों।
सिनांन करे नीकल्यों नरिंदो रे, जाणें निरमल पुनम रों चंदो।।

४. मस्तक छत्र धरावें रे, दोनूं पासें चमर वीजावे।
पाछें कह्यों छें तिम सर्व जांणो रे, नीकलीयों छें मोटें मंडांणो।।

५. घणा सुभटां रे व्रंदो रे, विट्यों थकों भरत नरिंदो।
केकां रें हस्त छें खडग भारी रे, केकां रे तरवार उघाडी।।

६. केकां रें हस्त में छें बांणो रे, केकां रे हस्त धनुष पिछांणो।
केकां रे हाथ फरसी विख्यातो रे, केकां रे त्रिसुल छें हाथो।।

७. इत्यादिक सस्त्र अनेको रे, तेतो पूरा न कह्या छें विशेखो।
त्यांरो जूआ जूआ वरण पिछांणों रे, जंबूदीप पन्नंति सूं जांणो।।

८. धजा पताका अनेक विख्यातो रे, जूआ जूआ लीया हाथो।
सीहनाद ज्यूं बोलें सूरा रे, ते तो हरष विनोद में पूरा।।

९. घोडा कर रह्या छें हीसारा रे, त्यांरा शबद लगा छें प्यारा।
हस्ती गुलगुलाट करंता रे, ते अंबर जेम गाजंता।।

१०. रथ करे रह्या घणा घणाटो रे, त्यांरा अनेक मिलीया छें थाटों।
वाजा विविध प्रकार ना वाजें रे, जांणें आकासें अंबर गाजें।।

ढाळ : २२

१. चक्ररत्न को आकाश में देखकर भरतजी को विशेष प्रसन्नता हुई। मागध तीर्थ देवता को अपना सेवक स्थापित कर दिया।

२,३. अब वरदाम तीर्थ को अधीन करने के लिए सेवक को बुलाकर कहते हैं– हाथी, घोडा, रथ तथा पैदल– चतुरंगिनी सेना को सज्ज तथा पटहस्ती को सजाओ। यों कहकर भरतजी स्नानघर में प्रवेश कर गए। स्नान करके बाहर निकले तो ऐसा लगा जैसे निर्मल पूर्णिमा का चंद्रमा निकला हो।

४. मस्तक पर छत्र धारण करते हैं, दोनों ओर चमर डुलाते हैं। जैसा कि पहले बताया गया उसी प्रकार ठाठ–बाट से निकलते हैं।

५. भरत नरेंद्र अनेक सुभटों के वृंदों से घिरे हुए हैं। कई सैनिकों के हाथ में भारी खड्ग हैं तो कुछ सैनिकों के हाथ में नंगी तलवारें हैं।

६. कुछ के हाथ में बाण है तो कुछ के हाथ में धनुष है। कुछ के हाथ में फरसा है तो कुछ के हाथ में त्रिशूल है।

७. इस प्रकार अनेक शस्त्र हैं। यहां सबका उल्लेख नहीं किया गया है। उनका अलग–अलग वर्णन जंबूद्वीप प्रज्ञप्ति से जानना चाहिए।

८. अनेक लोगों ने विविध प्रकार की ध्वजा–पताकाएं हाथ में ले रखी हैं। हर्ष–विनोद में मस्त शूरवीर सिंहनाद की तरह बोल रहे हैं।

९. घोड़े हिनहिना रहे हैं। उनकी आवाज प्यारी लगती है। हस्तियों के गुलगुलाट से जैसे बादल गाज रहे हैं।

१०. रथ घनघनाहट कर रहे हैं। विविध प्रकार के वाद्ययंत्र बज रहे हैं। ऐसा लग रहा है जैसे आकाश में मेघ गाज रहे हैं।

११. रूडा रूडा शब्द प्रचंडो रे, ते पूरतो चालें व्रहमंडो।
बल वाहण समुदाय छें वृदो रे, तिण सहीत चालें नरिंदो।।

१२. हजांरां गमे देवता साथतो रे, परिवर्‌यों थकों नरनाथो।
वेसमण देवता ज्यूं रिधवांनो रे, जिम रिधवंत भरत राजांनो।।

१३. सक्रइंद्र तणी रिध भारी रे, जेहवी रिध छें भरत राजा री।
जस कीरत रही छें फेंलों रे, ओं तो हूवों छें चक्रवत पेंहलो।।

१४. गांमां नगरादिक सारांनें रे, आंण मनावतों राजां नें।
त्यांरा भेटणा लेतो लेतों ताह्यों रे, इण रीत सूं चलीयों जायों।।

१५. तिणरें हरष घणों मन माह्यों रे, पूर्व पुन तणें पसायों।
पिण जांणें छें अंतरंग में फोको रे, सर्व छोडेनें जासी मोखो।।

◆

११. भरतजी मोहक प्रचंड शब्दों से ब्रह्मांड को आपूरित करते हुए बल-वाहनों के समुदायों के झुंड साथ चल रहे हैं।

१२. हजारों-हजार देवताओं से परिवृत्त नरनाथ वैश्रवण देवता की तरह राजा भरत ऋद्धिवान् हैं।

१३. शक्रेंद्र की भारी ऋद्धि के समान भरतजी ऋद्धिसंपन्न हैं। यश-कीर्ति चारों ओर फैल रही है। भरतजी इस अवसर्पिणी में पहले चक्रवर्ती हैं।

१४. समस्त गांवों-नगरों के राजाओं को अपनी आज्ञा स्वीकार करवाते हुए, उनके उपहार ग्रहण करते हुए चल रहे हैं।

१५. पूर्व पुण्य के प्रसाद से उनके मन में हर्ष हिलोरें ले रहा है। पर अंतरंग में इन्हें निरर्थक समझते है, इन्हें छोड़कर मोक्ष में जाएंगे।

◆

दुहा

१. इण विध चक्र ने सेन्या चालती, वरदांम तीर्थ स्हांमा जाय।
तिहां थी नही नेंरा नही ढूकडा, चलीया चलीया आयो छें ताहि।।

२. वढइरत्न नें बोलायनें, कहें छें भरत माहाराय।
आवास करो सताब सूं, माहरे पोषधसाल वणाय।।

३. ए कार्य करनें माहरी, आगना सूपो आय।
ते वढइरत्न छें केहवो, ते सुणजों चित्त ल्याय।।

ढाळ : २३

(लय : विनारा भाव सुण सुण गूंजे)

१. गांव नगरादिक सनीवेस, वसावण विधसूं विशेस।
खंधावार कटक नों उतार, त्यांरी विध रो जांणणहार।।

२. घर हाटनी श्रेण सु रीत, त्यांरा विभाग जांणें रूडी रीत।
त्यांरा गुण अवगुण री पिछांण, इक्यासी पद रूप रों जांण।।

३. पेंतालीस देव रा निवेस, त्यांरी भूमका विध विसेस।
निवस ते घर रूप पिछांणों, त्यांरी सघली विध रो छें जांणों।।

४. महल प्रसाद नें आवास, गढ कोटादिक निवास।
रसोडादिक साला अनेक, त्यांरो सगलोइ जांणें ववेक।।

५. काष्टादिक ना गुण पिछांणें, त्यांनें छेद्यां विध्यां गुण अवगुण जांणें।
जल मध्ये घरादिक कर जांणें, त्यांरा गुण आंगुण लखण पिछांणें।।

दोहा

१. इस प्रकार चक्र और सेना वरदाम तीर्थ के सामने चलते-चलते उसके न अति दूर, न अति समीप पहुंच गई।

२. बढ़ईरत्न को बुलाकर भरत महाराज ने कहा- तत्काल यहां आवास की व्यवस्था करो, मेरे लिए पौषधशाला बनाओ।

३. यह काम पूरा कर मेरी आज्ञा प्रत्यर्पित करो। बढ़ईरत्न कैसा है इस बात को ध्यान लगाकर सुनें।

ढाळ : २३

१. वह ग्राम, नगर तथा सन्निवेश को बसाने, विशेषकर सैन्य शिविर, छावनी के प्रवास की विधि का जानकार है।

२. घर, दुकान, श्रेणि के विभाग का अच्छी तरह से जानने वाला है। उनके इक्कासी पद रूप व गुण-अवगुण का जानकार है।

३. पैंतालीस प्रकार के देवों की निवेश भूमि का विशेषज्ञ है। निवेश का अर्थ घर है वह उसकी सारी विधि को जानता है।

४. राजमहल, प्रासाद, आवास, गढ़-कोट, पाकशाला आदि सभी का जानकार है।

५. काठ आदि के गुणों को पहचानने वाला, उसे छेदने-भेदने के गुण-अवगुण का ज्ञाता, जल के बीच मकान बनाने तथा उनके गुण-अवगुण के लक्षणों को जानने वाला है।

६. पांणी उपर प्रवाहण चालें, पाट पाटलादिक कर घालें।
जंत्र घरटीयादिक अनेक, ते पिण करवारी बुध वशेख।।

७. इण कालें घरादिक कीजें, इण कालें घरादिक न कीजें।
इण काल कीधां आछो थाय, इण काले कीधो भूंडो होय जाय।।

८. जिण काले जे जे करणों, ते पिण जांणें छें निरणों।
इसरों काल तणो छें जांणों, शबद सास्त्र में चुतर सुजांण।।

९. विरख वेलडी नें जांणें, गुण आंगुण त्यांरा पिछांणे।
त्यांनें निपजाय जांणें छें ताहि, ते पिण कला घणी तिण माहि।।

१०. सोलें प्रसाद करवा नें ताहि, चुतराइ घणी तिण माहि।
त्यांरा लखण गुणां री विध रूडी, ते पिण जांणें सर्व पूरी।।

११. वळे वास्तूक सासत्र माहि, चोसठ विकलप कह्या छें ताहि।
त्यांरो पिण जांण पिछांण, एहवो छें चुतर सुजांण।।

१२. नंदावर्त्त नें वर्धमांन जांण, स्वस्तिक तीजों वखांण।
ए तीनूंइ साथीया जात एह, त्यांरा गुण अवगुण जांणें तेह।।

१३. एक थंभो घर कर जांणें तेह, देवादिक घर कर जांणें एह।
वाहण सेवकादिक अनेक, त्यांनें करवानें कुसल विशेख।।

१४. इत्यादिक गुण अथाह्यो, वढइरत्न तिण माह्यों।
ओ तो थलपती रत्न छें रूडो, अगाढ गुण कर पूरो।।

१५. सहंस देवता तिणरें पास, अधिष्टायक रहें छें तास।
तिणरा कार्य नें साहजकारी, सेवग जिम कांम करवानें त्यारी।।

१६. तिण पूर्व पुन उपाया, इण भव माहे उदें आया।
ते सगलां नें लागें हितकारी, इसडो वढइरत्न छें सारी।।

६. पानी पर नौका चलाने, उसमें पाट-बाजोट आदि रखने, अरहट आदि यंत्र बनाने में भी विशेषज्ञ है।

७,८. इस काल में मकान बनाना और इस काल में मकान नहीं बनाना तथा इस काल में मकान बनाना शुभ और इस काल में मकान बनाना अशुभ, इस प्रकार जिस काल में जो-जो करना उसका निर्णय करता है। वह ऐसा काल एवं शब्दशास्त्र का विशेषज्ञ है।

९. वह वृक्ष-लताओं आदि के गुण-अवगुण की पहचान भी कर सकता है। उनके निष्पादन की कला में भी निपुण है।

१०. सोलह प्रकार के प्रासादों के निर्माण में भी वह चतुर है। उनके लक्षण-गुणों की विधि की भी उसे पूरी जानकारी है।

११. वास्तुशास्त्र में चौसठ विकल्प कहे गए हैं। वह उनका भी विशेषज्ञ है।

१२. वह नंद्यावर्त, वर्द्धमान तथा स्वस्तिक इन तीनों स्वस्तिकों के गुण-अवगुण को जानता है।

१३. वह एक स्तंभ मकान, देवघर, वाहन, शिविका आदि का भी विशेषज्ञ है।

१४. इस प्रकार उस बढ़ईरत्न में अथाह गुण हैं। वह स्थपतिरत्न अगाध गुणों से परिपूर्ण है।

१५. एक हजार अधिष्ठायक देवता उसके पास रहते हैं। वे सेवक की तरह उसके कार्य में सहयोग करने के लिए तैयार रहते हैं।

१६. उसने पूर्व भव में जो पुण्य अर्जित किए थे वे इस भव में उदय में आए। इसलिए बढ़ईरत्न सबको हितकारी लगता है।

१७. तिणरो अधिपती भरत नरिंद, जांणें पुनम केरो चंद।
तिण पाल्यों तप संजम अगाधो, तिणसूं इसरों रत्न तिण लाधो।।

१८. ते हाथ जोडी बोलें आंम, मोंनें फुरमावो कांम।
इसडों छें आगनकारी, कार्य भलायां तुरत हुवें त्यांरी।।

१९. ते वधिकरत्न तिण ठांम, कटक उतार्यों छें तांम।
पोषधसाल सहीत आवास, लोकां नें रहिवाना घर तास।।

२०. एक मूहरत में त्यारी कीधा, मन चिंतव्या देवां कर दीधा।
सर्व कार्य कर नें ताहि, पाछी आगना सूंपी आय।।

२१. ते भरतजी सुणनें हरखें, पाप लागांसूं मन माहें धडकें।
त्यां सगलां नें छोडे होसी न्यारो, इण भव जासी मोक्ष मझारो।।

◆

१७. पूनम के चंद्र के समान भरत नरेंद्र उसका अधिपति है। उसने अगाध संयम का पालन किया उससे उसे ऐसा बढ़ईरत्न प्राप्त हुआ।

१८. वह हाथ जोड़कर भरत नरेंद्र को इस प्रकार बोलता है– मुझे आप काम करने का आदेश दें। आदेश मिलने पर वह तुरंत उसे पूरा करने के लिए तैयार हो जाता है।

१९. ऐसे बढ़ईरत्न ने वहां (वरदाम तीर्थ में) सेना को उतारा। वहां पौषधशाला सहित लोगों के रहने के लिए आवासों का निर्माण किया।

२०. मुहूर्त भर में जैसा चिंतन किया था उसी तरह का पड़ाव देवताओं ने तैयार कर भरतजी को उनकी आज्ञा प्रत्यर्पित की।

२१. भरतजी यह सुनकर हर्षित हुए। यद्यपि पाप लगने के डर से उनका मन अंदर से धड़क रहा था, अंत में इन सबको छोड़कर वे इसी भव में मुक्ति जाएंगे।

◆

दुहा

१. वढइरत्न आगना सुप्यां थका, गया मंजणघर माहि।
मंजण कर उवठांणसाला आवीया, पाछें कह्यों तिण रीत सूं राय।।

२. जिहां चउघंट अश्वरथ अछें, तिण उपर बेंठों भरत राजांन।
तिण रथ तणों वरणव करूं, सुणो सुरत दे कांन।।

ढाळ : २४

(लय : रे जीव मोह अणुकंपा न आणीए)

एहवों रथ छें भरत नरिंदनों।।

१. धरती ऊपर छें तिणरों चालवों, तिणरी चाल उतावली जांण रे।
रूडा रूडा लखण अनेक छें, ते विवध प्रकारें वखांण रे।

२. हेमवंत पर्वत छें तेहनों, मध्य भाग गुफा छें तांम रे।
वाय रहीत तिहां व्रध पामीयों, विरख मोटा हुआ तिण ठांम रे।।

३. विचत्र प्रकार ना व्रक्ष त्यां तणा, त्यांरा काष्ट अतंत वखांण रे।
तिण काष्ट में रथ सुलखणो, तिणनें घड़ीयों छें चुतर सुजांण रे।।

४. जंबूनद सूवर्ण में झूंबणों, रूडी परें घड्या छें ताहि रे।
कनक माहे अरा अति दीपता, त्यांनें दीठांइ नयण ठराय रे।।

५. पुलकरत्न नें वर इंद्ररत्न सुं, नीलसीसक रत्न वखांण रे।
प्रवाली नें, फिटक रत्न सूं, श्रेष्ट रत्न नें लेष्ट पिछांण रे।।

६. मणी चंद्रकतादिक रत्न सुं इत्यादिक रत्न अनेक रे।
त्यां करनें अरा रत्न तणा, विभूषत कीया छें विशेख रे।।

दोहा

१. बढ़ईरत्न को आज्ञा सौंपकर भरतजी स्नानघर में गए। जैसा कि पीछे कहा गया है उसी प्रकार स्नानघर से उपस्थानशाला में आए।

२. वहां चतुर्घंट वाले अश्वरथ पर बैठे। उस रथ का मैं वर्णन कर रहा हूं उसे ध्यानपूर्वक सुनो।

ढाळ : २४

भरत नरेन्द्र का रथ ऐसा है।

१. रथ धरती के ऊपर चलता है। उसकी गति तीव्र है। उसके अनेकानेक श्रेष्ठ लक्षण हैं। विविध प्रकार से उसका वर्णन किया जाता है।

२,३. हेमवंत पर्वत के मध्य भाग की गुफाओं के निर्वात स्थान में पले हुए विचित्र प्रकार के वृक्षों के सुलक्षण काठ से वह कुशलतापूर्वक निर्मित है।

४. जांबूनद स्वर्ण में उसके झूमकों को आकर्षक रूप में घड़ा गया है। उसके अरे कनक के समान दीप्तिमान् हैं। उन्हें देखते ही आंखें ठंडी हो जाती है।

५,६. अरों में पुलकरत्न, इंद्ररत्न, नीलशीशकरत्न, प्रवालरत्न, स्फटिकरत्न आदि अनेक लेष्टरत्न तथा चंद्रकांता आदि मणिरत्नों को विशेष रूप से विभूषित किया गया है।

७. अडतालीस अरा रचीया तिहां, दिशि दिश प्रतें अरा बार बार रे।
तपणीक रक्त सोवन तणा, पाटीया जडिया श्रीकार रे।।

८. तिणसूं दढ कीधा छें जुगत सूं, तूंबडो ते नाभ वखांण रे।
त्यांरा छेहडा घठास्या अति घणा, रूडी रीत सूं थापी जांण रे।।

९. नवा काष्ट ना रूडा पाटीयां तणी, त्यांरीं चक्रपूठी छें ताम रे।
विशिष्ट नवो लोंह तेहनों, बंधण बांध्या छें तिण ठांम रे।।

१०. वासुदेव तणों चक्ररत्न छें, तिण सरीखा पइडा छें अनूप रे।
त्यांनें घडीया चुतर कारीगरा, त्यां चुतराइ सुं कर कर चूंप रे।।

११. करकेतन नीलक सासक, ए तीनूं जात रा रत्न वखांण रे।
त्यांमें बांध्यों छें रूडी रीत सूं, रच्या छें रूडें संठांण रे।।

१२. बांध्यों छें जालीयां रा समुदाय थी, जालीयां नी श्रेण अनेक रे।
वस्तीरण पसथ रूडी परें, सूधी छें धुरी तिणरी विशेख रे।।

१३. सोभणीक क्रांति छें तेहनी, रक्त सोंवर्ण में जोत वखांण रे।
सस्त्र थाप्या छें तिण रथ मझे, प्रहरणां करी भरीया जांण रे।।

१४. खडग बांण सक्त त्रिसूलादिक, ससतरना भाथडा छें बत्तीस रे।
त्यां ससस्त्रां करीनें मंडित छें घणु, रथ सोभे रह्यों विसवावीस रे।।

१५. कनकरत्न में चित्रांम छें, त्यांरी लागी झिगामग जोत रे।
तिणरें रथ रें आश्व जोतस्या, उजला सेत करता उद्योत रे।।

१६. मालती फूलां री माला ऊजली, उजलों चंद्रमा नो उजास रे।
वळे उजलो हार मोत्यां तणों, एहवों घोडां तणों परकास रे।।

१७. जेहवों मन छें चपल देवतां तणों, वाउ वेग तणी पर जांण रे।
तेहवी सिघर चाल घोडां तणी, ते सुतर में नहीं परमांण रे।।

७. एक-एक दिशा में १२ × ४ = ४८ अरों की रचना की गई। उनमें तपनीक रक्त स्वर्ण से श्रेष्ठ पट्ट जड़े हुए हैं।

८. उनसे रथ की नाभि को तुंबडे की युक्ति से सुदृढ़ किया गया। उनके किनारों को घोट-घोट कर अच्छी तरह से स्थापित किया।

९. नए काठ के विशिष्ट पट्टों से उसकी चक्रपूठी बनी हुई है तथा विशिष्ट नए प्रकार के लोह के बंधन बंधे हुए हैं।

१०. वासुदेव के चक्ररत्न के अनुरूप ही रथ के पहिए भी अनुपम हैं। कुशल कारीगरों ने अत्यंत चतुराई से उनका निर्माण किया है।

११. करकेतन, नीलक तथा शासक, इन तीन प्रकार के रत्नों को उसमें बांधकर सुंदर संस्थान रचा गया है।

१२. जालियों के समुदाय से उन्हें बांधा गया है। उनकी भी अनेक श्रेणियां हैं। उसकी धुरी विस्तीर्ण, प्रशस्त तथा विशेष सधी हुई है।

१३. रक्त-स्वर्णमय ज्योति वाली उसकी कांति अत्यंत मनोरम है। उस रथ में शस्त्रकवच आदि भरे हुए हैं।

१४. खड्ग, बाण, शक्ति, त्रिशूल आदि शस्त्रों के बत्तीस प्रकार के भाथड़ों से वह रथ मंडित है। वह पूर्ण रूप से सुशोभित है।

१५. कनकरत्न के चित्रों की ज्योति जगमगा रही है। उसमें जुते हुए घोड़े उज्ज्वल श्वेत रंग का उद्योत कर रहे हैं।

१६. मालती के फूलों की माला, चंद्रमा के प्रकाश तथा मोतियों के हार के समान उन घोड़ों की आभा उज्ज्वल है।

१७. घोड़ों की गति देवताओं के चपल मन तथा वायुवेग के समान अत्यंत शीघ्र है। सूत्र में भी उसका प्रमाण नहीं बताया गया है।

१८. च्यार चामर करनें सोभता, कनक करे विभूषत अंग रे।
विवध प्रकारना गेंहणां करी, सिणगारनें कीया सुचंग रे।।

१९. एहवा अश्व रथ रें जोतस्या, छत्र करनें सहीत रथ जांण रे।
धजा घंटा पताका सहीत छें, सोभें पोता पोता रे ठिकांण रे।।

२०. माहोमा संध मेली रूडी परें, संग्रांमीक रथ श्रीकार रे।
गंभीर वाजंत्र शब्द सारिखों, तिणरों उठें शब्द गूंजार रे।।

२१. वर प्रधांन तिणरी पींजणी, रूडा तिणरा पइडा बखांण रे।
वर प्रधांन दोला विटे रही, धारा वृत्त चकर पणें जांण रे।।

२२. वर परधांन धारा ना छेंहडा, कंचनकरी विभूषत ताहि रे।
वज्र रत्न सूं बांधी नाभ नें, चुतर कारीगर आय रे।।

२३. वर प्रधांन तिणरो सारथी, रूडी परें ग्रही जांतों तेह रे।
वर प्रधांन पुरष भरतजी, वर प्रधांन रथ छें एह रे।।

२४. रूडा रत्नां माहे रथ सोभतो, सोवन माहे घूघरीयां तास रे।
तिणनें कोइ जीत सकें नही, वीजली शरीखो प्रकास रे।।

२५. सर्व रितूना फूलां तणी, माला नें दडा ठांम ठांम रे।
गाज सरीखों शब्द तेहनों, ऊंची धजा कीधी छें तांम रे।।

२६. तिण उपर बेठां पृथवी जीतलें, तिण बेठां भूजां लाभ अपार रे।
तिणसूं विजयलाभ रथ नांम छें, वेंर्‍यां नों कंपावणहार रे।।

२७. एहवो रथ आय मिलीयो भरत नें, ग्यांन सूं जांणें धूल समांन रे।
तिणनें छोडसी वेंराग आणनें, जासी पांचमी गति परधांन रे।।

◆

१८. चार चामरों से वे सुशोभित हैं। उनके अंग स्वर्ण से विभूषित हैं। विविध प्रकार के आभूषणों से सुघड़ता से श्रृंगारित हैं।

१९. ऐसे घोड़ों को रथ के साथ जोड़ा। रथ छत्र से सुशोभित है। उसमें ध्वजा, घंटा, पताका आदि भी अपने-अपने स्थान पर सुशोभित हैं।

२०. उस श्रेष्ठ युद्धरथ के अंगों को परस्पर इस प्रकार जोड़ा गया कि उससे गंभीर वाद्ययंत्रों के स्वर जैसा गूंजायमान स्वर उठता है।

२१. उसकी पींजणी (झालर) श्रेष्ठ थी। उसके मोहक पहिए चारों ओर चक्राकार धारा से आवृत्त हैं।

२२. धारा के किनारे कंचन से विभूषित हैं। चतुर कारीगरों ने वज्ररत्न से उसके नाभिकेंद्र को बांध रखा है।

२३. नरश्रेष्ठ भरतजी के उस श्रेष्ठ रथ को श्रेष्ठ सारथी कुशलता से चला रहा है।

२४. उत्कृष्ट रत्नों से सुशोभित रथ के सोने की घूघरियां लगी हुई हैं। उसका प्रकाश विद्युत् के समान है। वह अपराजेय है।

२५. उस पर सब ऋतुओं में खिलने वाले फूलों की माला एवं गुच्छे स्थान-स्थान पर बांधे हुए हैं। उस पर ऊंची ध्वजा लगी हुई है। उसकी ध्वनि मेघ गर्जना जैसी है।

२६. उस रथ पर बैठने वाला विश्व-विजेता, बाहुबली तथा शत्रुओं को कंपा देने वाला होता है। अतः उसका नाम ही विजय-लाभ रथ रखा गया।

२७. भरतजी को ऐसा रथ मिला पर वे अपने ज्ञान से उसे धूल के समान जानते थे। वे विरक्त होकर उसे छोड़कर मुक्ति में जाएंगे।

दुहा

१. तिण रथ नें अश्व तणों, विस्तार कह्यों अल्पमात।
तिणरों अधिपती भरत नरिंद छें, तिणरी जस कीर्त लोक विख्यात।।

२. पोषा सहीत तिण रथ उपरें, बेंठा भरतजी आय।
दिखण सांमों वरदांम तीर्थ तिहां, गया लवण समुदर नें माहि।।

३. रथ नी पीजणी भीजें त्यां लगें, गया भरतजी तांम।
बांण न्हांख्यों मागध तीर्थनी परें, सगलों विस्तार कहिणों इण ठांम।।

४. मागध नी परें ल्यायों भेटणों, तिण माहे इतरों फेर जांण।
ते ल्यायों मुगट चूडामणी, वळे हीयाना भूषण बखांण।।

५. वळे भूषण ल्यायों गला तणा, कडीयां नें कणदोरों जांण।
वळे कडा आंण्या हाथे पेंहरवा, बाह्यां नें बेंहरखा बखांण।।

६. इत्यादिक आभरण आंण्या घणा, वरदांम तीर्थ पांणी ताहि।
नांमकिरत बांण आंणीयो, सारा मेल्या भरतजी रे पाय।।

७. हाथ जोडी नें इम कहें, करे घणा गुण ग्रांम।
हूं सेवग छूं आपरों, दिखण दिस नो देव वरदांम।।

८. मागध तीर्थ कुमार देव नी परें, सघली विध साचवी तांम।
विनय करी सीख मांगनें, देव गयो निज ठांम।।

दोहा

१. ऊपर जिस रथ तथा अश्व का थोड़ा विस्तार बताया गया, भरत नरेंद्र उसके अधिपति हैं। उनकी यश-कीर्ति पूरे लोक में विख्यात है।

२. भरतजी कवच सहित उस रथ पर आकर बैठे। दक्षिण दिशा में जहां वरदाम तीर्थ था वहां लवण समुद्र में गए।

३. रथ की पींजणी भीगे वहां तक अंदर जाकर मागध तीर्थ की तरह ही वरदाम तीर्थ की ओर बाण फेंका। पूर्व संदर्भ का सारा विस्तार यहां कहना चाहिए।

४-६. मागध तीर्थ की ही तरह वरदाम तीर्थ का देव भरतजी के लिए उपहार लाया। विशेष बात यह है कि यहां देव ने मुकुट, चूडामणि, हृदय के आभूषण, गले के आभूषण, कड़े, कणदोरा, हाथों में पहनने का कड़े, बाहों में पहनने का भुजबंध आदि अनेक आभरणों के साथ वरदाम तीर्थ का पानी और भरतजी का नामांकित बाण भी सामने उपस्थित किया।

७. उसने हाथ जोड़कर गुणगान करते हुए कहा- मैं दक्षिण दिशा में वरदाम तीर्थ का देव आपका सेवक हूं।

८. प्रभाष देव भी मागध तीर्थकुमार की ही तरह सारी विधि का अनुपालन कर विनयपूर्वक सीख मांगकर अपने स्थान पर गया।

ढाळ : २५

(लय : अछें लाल)

१. भरत नरिंद तिण ठांम, साझ्यो तीर्थ वरदांम। आछेंलाल०।
जीत फतें कर पाछा वल्या।।

२. विजयकटक में आय, गया मंजण घर माहि। आ०।
सिनांन करे बारें नीकल्या।।

३. पछें भोजनमंडप जाय, भोजन कीयों छें ताहि। आ०।
पछें उवठांणसाला आया तिहां।।

४. श्रेणी प्रश्रेणी कहें छें बोलाय, आठ दिवस महोछव करों जाय। आ०।
वरदांम देव नमीयों तेहनों।।

५. श्रेणी प्रश्रेणी सुण इम वांण, कर लीधी परमांण। आ०।
महोछव कीया पाछली परें।।

६. महोछव पूरा कीया श्रीकार, जब चक्ररत्न तिणवार। आ०।
आउधसाला थी बारें नीकल्यों।।

७. गयों आकास मझार, तिहां वाजंत्र वाजें श्रीकार। आ०।
घोष शबद आकास पूरतों।।

८. चाल्यों वायवकूंण रे मांहि, जब जांण्यों भरत माहाराय। आ०।
परभास तीर्थ तिण मारगें।।

९. जब भरत नरिंद तिणवार, सेन्य ले चाल्यों तिण लार। आ०।
पाछें कह्यों तिण रीत सूं।।

१०. कटक उतर्यों तिण ठांम, समुद्र अवगाह्यों ताम। आ०।
पींजणी भीजें तिहां लग गया।।

ढाळ : २५

१. इस प्रकार भरत नरेंद्र वरदाम तीर्थ साध कर जीत-फतेह कर वापिस आए।

२. विजय कटक से आकर मंजनशाला में स्नान कर बाहर निकले।

३. फिर भोजन-मंडप में जाकर भोजन कर उपस्थानशाला में आए।

४. श्रेणि-प्रश्रेणि को बुलाकर कहा- वरदाम देव हमारे सामने नतमस्तक हो गया है। अतः नगर में आठ दिन का महोत्सव करो।

५. श्रेणि-प्रश्रेणि ने यह बात सुनकर उसे मान्य कर पूर्वोक्त रूप से ही महोत्सव किया।

६. श्रेयस्कर महोत्सव पूरा होने पर चक्ररत्न पुनः आयुधशाला से बाहर निकला।

७. वह आकाश में गया। पूरा आकाश वाद्ययंत्रों के घोष शब्दों से आपूरित हो गया।

८. जब वह वायव्य कोण की दिशा में जाने लगा तो भरतजी ने जाना यह प्रभाष तीर्थ का मार्ग है।

९. भरत नरेंद्र भी पूर्वोक्त विधि से सेना लेकर उसके पीछे चलने लगे।

१०. समुद्र तट पर सेना का पड़ाव किया और रथ की पींजणी भीगे उतनी दूर तक समुद्र का अवगाहन किया।

११. जब भरत नरिंद नरनाथ, धनुष बांण लीयों हाथ। आ०।
बांण नांख्यों तिणरा भवन में।।

१२. प्रभास देव बांण नें देख, जाग्यों तिणनें धेष विशेख। आ०।
मागध ज्यूं सर्व जांणजों।।

१३. पछें कीयों मन में विचार, उपनों इण भरत मझार।
अधिपती उठ्यो भरत खेत्र नो।।

१४. म्हारों तों जीत आचार, भेटणों लेजावणहार। आ०।
तों भेटणों लेनें जाऊ तिहां।।

१५. रत्नां री माला लीधी हाथ, वळे मुगट लीयों तिण साथ। आ०।
मोती नें सोवन तणी जालीयां।।

१६. हाथां नें कडा लीया जांण, बाह्यां नें बेंरखा वखांण। आ०।
अनेक आभरण रलीयांमणां।।

१७. प्रभास तीर्थ उदक विशेख, करवा राज अभीषेक। आ०।
नांमकिरत बांण ते लीयो।।

१८. ते सगला ल्याययों आंण हुलास, आयों भरत नरापति नें पास। आ०।
आकासे आय उभों रह्यों।।

१९. हाथ जोडी सीस नांम, नमसकार कीयों परिणांम। आ०।
भेटणों मुख आगल धर्यों।।

२०. हूं पछिम दिस नों रुखवाल, हूं आप तणों कोटवाल। आ०।
हूं किंकर सेवग छूं आपरों।।

२१. इत्यादिक करे गुण ग्रांम, वारूंवार सीस नांम। आ०।
बोली अनेक विडदावली।।

११. राजेश्वर भरतजी ने हाथ में धनुष लेकर प्रभाष देव के भवन में फेंका।

१२. बाण को देखकर प्रभाष देव के भी पूर्वोक्त मागध देव की तरह ही द्वेष जागा।

१३. मन में विचार करने पर जाना भरतक्षेत्र में भरतजी अधिपति के रूप में खड़े हुए हैं।

१४. मेरा जीत व्यवहार है कि मैं उपहार लेकर वहां जाऊं।

१५,१६. उसने रत्नों की माला, मुकुट, स्वर्ण-मोतियों की जालियां, हाथों में पहनने के लिए कड़े, भुजबंध आदि अनेक मनोहर आभरण लिए।

१७. भरतजी का अभिषेक करने के लिए प्रभाष तीर्थ का विशिष्ट पानी तथा नामांकित धनुष भी लिया।

१८. इन सबको लेकर उल्लास से भरत नरेंद्र के पास आकर आकाश में खड़ा हुआ।

१९. हाथ जोड़कर शीश झुकाकर नमस्कार-प्रणाम कर उपहार भरतजी के मुंह के सामने प्रस्तुत कर दिया।

२०. मैं आपके पश्चिम दिशा का रखवाला, कोटपाल, किंकर, सेवक हूं।

२१. इस प्रकार बार-बार शीश झुकाकर गुणगान कर प्रशंसा करने लगा।

२२. विनों कीयों मागध कुमार, तिण सगलोइ कहिणों विस्तार। आ०।
इण पिण विनों इमहीज कीयों।।

२३. भरत नरिंद रें पास, सीख मांगे देव प्रभास। आ०।
निज ठिकांणे पाछों गयों।।

२४. देवता मांनी आंण, ते जांणें विटंबणा समांन। आ०।
यांनें पिण छोडे जासी मुगत में।।

◆

२२,२३. पूर्वोक्त मागध कुमार ने जिस तरह से भरत नरेंद्र का विनय किया उसी प्रकार प्रभाष देव ने भी किया, सीख मांगी यावत् अपने स्थान पर लौट गया।

२४. देवता ने आज्ञा स्वीकार की, भरतजी ने इसे भी एक विडंबना ही मानते हैं। वे इसे भी छोड़कर मुक्ति जाएंगे।

◆

दुहा

१. प्रभास नांमें देवता भणी, निज सेवग ठेंहराय।
विजय कटक में आयनें, गया मंजण घर माहि।।

२. स्निांन करेनें नीकल्या, आया उवठांण साल।
पाछें कह्यों तिण हीज विधें, सगलोंइ कहिणों संभाल।।

३. श्रेणी प्रश्रेणी तेरनें, कहें भरत माहाराय।
आंण मनाइ प्रभास देवता भणी, तिणरा करों महोछव जाय।।

४. आगली रीतें महोछव करे, म्हारी आग्या पाछी सूंपे आय।
ते सुणनें मन हरषत हूआ, कीया महोछव जाय।।

५. आठ दिवस महोछव पूरों हूआं, जब चक्ररत्न तिण वार।
आवधशाला थी बारें नीकल्यों, गयों आकास मझार।।

६. सिंधू नदी नों दिखण कूलें, सिंधू देवी रा भवण वखांण।
तिण सांहमों चक्र जातो देखनें, लारें चाल्या भरतजी जांण।।

७. सिंधू देवी रा भवण थी, नेंरा अलगा नही ताहि।
तिहां कटक उतार चोथों तेलों कीयों, पोषधशाला रे माहि।।

८. ध्यांन ध्यावें सिधु देवी तणों, तिणनें चिंतव रह्या मन मांहि।
सिधु देवी आवें छें किण विधें, ते सुणजों चित्त ल्याय।।

दोहा

१. प्रभाष नामक देवता को अपना सेवक स्थापित कर भरतजी विजय कटक में आकर स्नानगृह में गए।

२. स्नान कर उपस्थान शाला में आए। पूर्वोक्त प्रकार सारे कार्य किए।

३,४. श्रेणि–प्रश्रेणि को आमंत्रित कर कहा– मैंने प्रभाष देवता को आज्ञा मनाई इसका भी पूर्वोक्त रूप से महोत्सव करो तथा मेरी आज्ञा मुझे प्रत्यर्पित करो। श्रेणि–प्रश्रेणि के लोग मन में हर्षित हुए और उन्होंने लौटकर महोत्सव किया।

५. आठ दिन पूरे होने पर चक्ररत्न फिर आयुधशाला से बाहर निकल कर पुनः आकाश में आया।

६. सिंधु नदी के दक्षिणी तट पर सिंधुदेवी के भवन के सामने चक्र को जाते देखकर भरतजी उसके पीछे–पीछे चले।

७. सिंधु देवी के भवन के न अति निकट न अति दूर सेना का पड़ाव डालकर पौषधशाला में जाकर चौथा तेला किया।

८. सिंधु देवी का ध्यान धर मन में चिंतन करने लगे। अब सिंधु देवी किस प्रकार आती है उसे चित्त लगाकर सुनें।

ढाळ : २६

(लय : वीरमती कहें चंद)

सिंधू देवी भरत नें वीनवें।।

१. अठमभक्त पूरों थयों, तिण अवसर माहि।
सिधु देवी नों आसण चल्यों, अवधि प्रजूंजी ताहि।।

२. अवधि करे भरतजी नें देखनें, करवा लागी विचार।
भरत चक्रवत्त उपनों, छ खंड रो सिरदार।।

३. ते माटें म्हांरो जीत आचार छें, तीन काल मझार।
भेटणो ले जाय धन आपीयों, विनों करे तिण वार।।

४. तो हूं पिण जाऊं इहां थकी, भरत राजा रे पास।
भेट लेजाए पगां म्हेलनें, बले करूं अरदास।।

५. एहवी करे विचारणा, कूंभ सहंस नें आठ।
नाणा प्रकार नां मणी रत्न में, त्यारो रूडों छें घाट।।

६. तिण कूंभ रे कनक रत्नां तणां, भ्रांत चित्रांम रूप।
चित्रांम नाणां मणी रत्न में, सोभे रह्या छें अनूप।।

७. रूडा दोय भद्रासण कनक में, हाथां नें कडा वशेख।
वळे बाह्यां नें पेंहरण बेंरखा, ओर भूषण अनेक।।

८. इतरा आभूषण ले नीकली, उतकष्टी गति आय।
भरत नरिंद बेठा तिहां, आकासे उभी ताहि।।

९. दोनूं हाथ जोडी विनों करे, मस्तक नीचो नांम।
जय विजय करे वधायनें, मुख सूं करें गुण ग्रांम।।

ढाळ : २६

सिन्धु देवी भरतजी को निवेदन करती है।

१. तेला पूरा होने पर सिंधु देवी का आसन चलित हुआ। उसने अवधि ज्ञान का प्रयोग किया।

२. अवधि ज्ञान से भरतजी को देखकर विचार करने लगी– छह खंड का अधिपति भरत चक्रवर्ती पैदा हुआ है।

३. तीन ही काल में देवी का यह जीत व्यवहार होता है कि उपहार लेकर धन भेंटकर चक्रवर्ती का विनय करे।

४. इसलिए मैं भी यहां से भरत राजा के पास जाकर उपहार उनके चरणों में रखकर उनकी स्तुति करूं।

५. ऐसा विचार कर वह एक हजार आठ कुंभ लेकर आई। कुंभों की सुघड़ रचना नाना प्रकार के मणिरत्नों से की गई है।

६. उन पर कनकरत्नों तथा मणिरत्नों के अनुपम चित्र शोभित हैं।

७,८. दो विशिष्ट स्वर्णमय भद्रासन, हाथों के कड़े, भुजबंध आदि अनेक आभूषण भी साथ लेकर उत्कृष्ट गति से जहां भरतजी बैठे हैं वहां आकर आकाश में खड़ी हुई।

९. दोनों हाथ जोड़कर विनयपूर्वक मस्तक झुकाकर मुख से जय-विजय शब्दों से वर्धापन करते हुए गुणगान करने लगी।

१०. थे भरतखेतर जीते लीयों, छ खंड रा हो सांम।
थे वडा वडा देव नमावीया, बोलें करे सलाम।।

११. हूं देस वसवांन छूं आपरी, किंकरी आग्याकारी।
हूं रुखवाली कोटवाल जिम, हूं सेवगणी तुमहारी।।

१२. तिण कारण ल्यों थें म्हांरों, भेटणों प्रीतीदांन।
इम कहें भेटणों आंण्यों तको, पगां म्हेल्यों दे मांन।।

१३. आंण्यों ते भेटणों पगां मेलनें, वळे करे गुण ग्रांम।
सीख मांगे पाछी नीकली, गइ निज ठाम।।

१४. सिंधू देवी नमाइ भरतजी, निज सेवग ठहराय।
त्यांनें पिण छोड संजम पालनें, जासी मुगत रे माहि।।

◆

१०. आपने भरतक्षेत्र को जीत लिया। आप छह खंड के स्वामी हैं। आपने बड़े-बड़े देवताओं को झुका दिया। इस प्रकार बोलकर प्रणाम करने लगी।

११,१२. मैं आपके देश की नागरिक हूं। आपकी किंकरी, आज्ञाकारिणी, कोटवाल की तरह रखवाली करने वाली सेविका हूं। इसलिए आप मेरा उपहार प्रीतिदान स्वीकार करें। यों कहकर जो उपहार लाई उसे भरतजी के चरणों में रख दिया।

१३. देवी जो उपहार लाई उसे भरतजी के चरणों में रखकर उनका गुणगान करती हुई विदा मांगकर अपने स्थान की ओर लौट गई।

१४. सिंधु देवी को अपनी आज्ञा मनवाकर भरतजी ने उसको सेविका बनाया। परंतु वे उसे छोड़कर संयम का पालन कर मुक्ति में जाएंगे।

◆

दुहा

१. सिंधूदेवी गयां पछें, नीकल्या पोषधसाला बार।
मंजण घर में आयनें, सिनांन कीयों तिणवार।।

२. पछें भोजन मंडप आयनें, अठम भगत पारणों कीयों ताहि।
पछें आया उवठांण साला तिहां, बेंठा सिंघासण आय।।

३. अठारें श्रेण प्रश्रेणी बोलायनें, कहें छें भरत माहाराय।
सिधूदेवी नमे सेवग हुई, तिणरा करो महोछव जाय।।

४. आठ महोछव पूरा करे, म्हारी आग्या पाछी सूंपे आय।
ते सुणनें मन हरख हुआ, पछें कीया महोछव जाय।।

५. अठाइ महोछव पूरा हूआं, चक्ररत्न तिणवार।
आवधसाला थी नीकल्यों, गयों ऊंचो आकास मझार।।

६. इसांणकुण नें चालीयो, वेंताढ पर्वत सांहमों जाय।
तिणि दिश ने जातों देखनें, लारें चाल्या भरत माहाराय।।

७. वेंताढ पर्वत नें दिखण दिशें, नितंब पासों छें ताहि।
तिहां वेंताढ रें पासे दिखण तणें, विजय कटक उतार्‍यों छें राय।।

ढाळ : २७

(लय : सल कोई मत राखजो)

दिन दिन चढता पुन भरत रा।।

१. हिवें भरत नरिंद तिण अवसरें, तेलों कर तीन पोसा ठायो रे।
वेंताढ गिरी देवता तणों, ध्यांन ध्याय रह्या मन माह्यो रे।

दोहा

१. सिंधु देवी के चले जाने पर भरतजी ने पौषधशाला से निकलकर स्नानगृह में आकर स्नान किया।

२. फिर भोजन-मंडप में आकर तेले का पारणा किया। फिर उपस्थानशाला में आकर सिंहासन पर बैठे।

३. अठारह श्रेणि-प्रश्रेणि को बुलाकर भरतजी ने कहा– सिंधु देवी मेरी सेविका हुई उसका महोत्सव करो।

४. आठ दिन का महोत्सव संपन्न कर मेरी आज्ञा मुझे प्रत्यर्पित करो। यह सुनकर सभी लोग हर्षित हुए और महोत्सव किया।

५. आठ दिन का महोत्सव संपन्न होने पर चक्ररत्न पुनः आयुधशाला से निकल कर ऊपर आकाश में आया।

६. ईशान कोण में चलकर वैताढ्य गिरि पर्वत की ओर जाने लगा। चक्ररत्न को उस दिशा में जाते देखकर भरतजी उसके पीछे-पीछे चले।

७. वैताढ्य पर्वत के दक्षिण दिशा के नितंब पार्श्व है, वहां पर भरतजी ने विजय कटक को उतारा।

ढाळ : २७

दिनोंदिन भरतजी के पुण्य बढ़ रहे हैं।

१. अब भरत नरेंद्र ने उस अवसर पर तेला कर तीन पौषध पचख लिए। वे मन में वैताढ्य गिरि देवता का ध्यान कर रहे हैं।

२. एकाग्र चित्त में ध्यांन ध्यावतां, तीन दिन पूरा हूवा ताह्यो रे।
जब आसण चलीयों छें तेहनों, तिण विचार कीयों मन माह्यों रे।।

३. ऊपनों भरतखेतर मझे, चक्रवत छ खंड रो सिरदारो रे।
ते इण ठांमें आवीयों, मोंनें याद कीयों इण वारो रे।।

४. तों जीत आचार छें म्हारों, तीनोइ काल मझारो रे।
भेटणों ले जायनें मूंकणों, सिंधू देवी ज्यूं सारो विस्तारो रे।।

५. एहवी करे विचरणा, पीतीदांन देवानें लीयों साथो रे।
रत्नां में मुकट रलीयांमणो, कडलीया पेंहरणनें हाथो रे।।

६. बांह्यां नें लीधा छें बेंहरखा, इत्यादिक आभरण अनेको रे।
ते लेई तिहां थी नीकल्यों, उतकष्टी गति चाल्यों विशेखो रे।।

७. ते आयो भरतजी बेंठा तिहां, उभो आकास मझारो रे।
हाथ जोडी मस्तक चाढनें, हाथ जोडी कीयों नमसकारो रे।।

८. जय विजय करनें वधावतों, मुख सूं करे गुणग्रांमो रे।
अनेक विडदावली बोलता, विनों कीयों सीस नामों रे।।

९. हूं वेताढगिरी कुमार देव छूं, आप छ खंड रा राजांनो रे।
हूं किंकर छूं आपरों, वळे आप तणों वसवांनो रे।।

१०. हूं सेवग थकों रहिसूं आपरों, हूं इण दिस रो कोटवालो रे।
उपद्रव्य करवा न दूं केहनें, हूं करसूं रुखवालो रे।।

११. मागध कुमार देव नी परें, रूडी रीत विनों कीयों ताह्यों रे।
भेटणों आंण्यों ते देवता, मूंक्यो भरतजी रे पायो रे।।

२. एकाग्र चित्त से ध्यान करते हुए तीन दिन पूरे हुए तब देवता का आसन चलित हुआ। उसने मन में विचार किया।

३. भरतक्षेत्र में छह खंड का अधिपति चक्रवर्ती पैदा हुआ है वह यहां आया है। इस समय उसने मुझे याद किया है।

४. मेरा तीनों ही कालों में जीत आचार है कि उपहार लेकर उनके सामने रखूं। सिंधु देवी की तरह यहां सारा विस्तार जानना चाहिए।

५,६. ऐसा विचार कर प्रीतिदान देने के लिए रत्नों का मनोहारी मुकुट, हाथों के कड़े, भुजबंध आदि अनेकों आभरण लेकर वहां से निकला और उत्कृष्ट गति से चला।

७. उसने जहां भरतजी बैठे हैं वहां आकर हाथ जोड़कर अंजली को मस्तक पर टिका आकाश में खड़े रह कर नमस्कार किया।

८,९. जय-विजय शब्दों से वर्धापित कर मुख से गुणगान किया। शीश झुकाकर प्रशंसा करता हुआ बोला- मैं वैताढ्य गिरि कुमार हूं। आप छह खंड के राजा हैं। मैं आपका किंकर हूं। मैं आपका वशवर्ती हूं।

१०. मैं इस दिशा में आपका सेवक बनकर रहूंगा। कोटपाल बन कर इस दिशा की रखवाली करूंगा। किसी को उपद्रव नहीं करने दूंगा।

११. मागध कुमार देव की तरह ही उसने अच्छी तरह विनय किया। जो उपहार लाया उसे भरतजी के पैरों में उपस्थित किया।

१२. ओ भेटणों ल्यों थें माहरो, किरपा करो मुझ सांमो रे।
इम कहे देवता सीख मांगनें, पाछों गयों निज ठांमो रे।।

१३. एहवा पुन नें जांणें छें कारमा, त्यांनें छोडे चारित पालें चोखो रे।
आठुइ कर्म खपायनें, इण हीज भव जासी मोखो रे।।

◆

१२. स्वामी! आप यह मेरा उपहार स्वीकार करो, मुझ पर कृपा करो, यों कहकर सीख मांगकर वापिस अपने स्थान पर गया।

१३. भरतजी यह जानते हैं ये सब पुण्य, निःसार हैं। इनको छोड़कर शुद्ध चारित्र का पालन कर आठों ही कर्मों को क्षीण कर इसी भव में मुक्ति में जायेंगे।

◆

दुहा

१. वेताढगिरी देव गयां पछें, आया मंजण घर माहि।
सिनांन करे बारे नीकल्या, गया भोजन मंडप ताहि।।

२. भोजन करे बारें नीकल्या, आया उवठांणसाला माहि।
बेठा सिंघासण उपरे, कहें श्रेणी प्रश्रेणी बुलाय।।

३. वेताढ गिरी नो देवता, पगे लागों मांनी म्हारी आंण।
ते सेवग ठहर्यो माहरो, महोछव करो मोटें मंडांण।।

४. आठ दिवस महोछव करे, म्हारी आग्या पाछी सूंपो आंण।
श्रेणी प्रश्रेणी सुण हरखत हूवा, महोछव कीया मोटें मंडांण।।

५. आठ दिवस महोछव पूरा हूआं, चक्ररत्न तिणवार।
आवधशाला थी बारे नीकल्यों, गयो आकासें गगन मझार।।

ढाळ : २८

(लय : कर्म भुगत्यांइज छूटिये)

दिन दिन चढता पुन भरत ना।।

१. चक्र चाल्यों अंबर तलों पूरतों, पिछम दिश मझार लाल रे।
तमस गुफा सांह्मों जांतों देखनें, भरतजी हूआ हरष अपार लाल रे।।

२. सेन्य सहीत भरत नरिंद चालीयो, चक्ररत्न लारें लारे तांम लाल रे।
तमस गुफा नेंडी ढूकडीं नही, सेन्य उतारी तिण ठांम लाल रे।।

३. कृतमाली देव उपरें, छठो तेलों कीयों साला माहि लाल रे।
ध्यांन ध्यावें तिण देवता तणों, एकाग्र चित्त लगाय लाल रे।।

दोहा

१. वैताढ्य गिरि देव के जाने के बाद भरतजी स्नानगृह में आए। स्नान कर बाहर निकल कर भोजन मंडप में गए।

२-४. भोजन कर बाहर निकल कर उपस्थानशाला में आए। सिंहासन पर बैठकर श्रेणि-प्रश्रेणि के लोगों को बुलाकर कहा- वैताढ्य गिरि देवता ने नतमस्तक होकर मेरी आज्ञा स्वीकार की, मेरा सेवक बना, इसलिए धूमधाम से आठ दिन का महोत्सव कर मेरी आज्ञा को प्रत्यर्पित करो। श्रेणी-प्रश्रेणी यह सुनकर हर्षित हुए।

५. आठ दिन का महोत्सव पूरा हुआ तो फिर चक्ररत्न आयुधशाला से बाहर निकल कर आकाश में आ गया।

ढाळ : २८

दिनोंदिन भरतजी के पुण्य प्रबल हो रहे हैं।

१. अंबर तल को पूरता हुआ चक्ररत्न पश्चिम दिशा में चला। उसे तामस गुफा की ओर बढ़ते हुए देखकर भरतजी को अपार हर्ष हुआ।

२. भरत नरेंद्र सेना सहित चक्ररत्न के पीछे-पीछे चलने लगे। तामस गुफा के न अति निकट न अति दूर सेना का पड़ाव किया।

३. कृतमाली देव को लक्षित कर पौषधशाला में जाकर छट्ठा तेला किया। एकाग्रचित्त होकर देवता का ध्यान ध्याने लगे।

४. तीन दिन पूरा हूआं, आसण चलीयों तांम लाल रे।
जब अवधि प्रज्यूंज्यो देवता, भरतजी नें देख्या तिण ठांम लाल रे।।

५. वेंताढगिरी देव नी परें, सगलोंइ कहिणों विस्तार लाल रे।
पिण भेटणा माहे फेर छें, त्यांरों जूदो जूदो निसतार लाल रे।।

६. आभरण करंडीया रत्न में, आभरण हार अर्धहार लाल रे।
इंगद कनक नें मुक्तावलीं, केउडो नें कडा श्रीकार लाल रे।।

७. बाह्यां नें बेंहिरखा वळे मुद्रका, कांना कुंडल उर सत श्रीकार लाल रे।
चूडामणी अति रलीयामणो, रलीयांमणों तिलक निलाड लाल रे।।

८. इत्यादिक आभूषण हाथे लीया, ते अस्त्री रत्न रे काज लाल रे।
ते ले आयों सिधर उतावलों, जिहां बेंठा भरत माहाराज लाल रे।।

९. आकासें आय उभों रह्यों, मागध देव तणी परें जांण लाल रे।
दस दिस उद्योत करतों थकों, बोंलें मीठी बांण लाल रे।।

१०. हाथ दोनूंइ जोडनें, विनों कीयों मस्तक चढाय लाल रे।
नमसकार कीयों वळे भरत नें, मस्तक नीचों नमाय लाल रे।।

११. जय विजय करे वधायनें, विडदावली अनेक बोलाय लाल रे।
कहें हूं किरतमाली छूं देवता, आप तणो सेवग छूं ताहि लाल रे।।

१२. हूं आप तणों वसवांन छूं, हूं आप तणों कोटवाल लाल रे।
हूं किंकर छू आपरों, आग्या तणों प्रतिपाल लाल रे।।

१३. मागध कुमार देव नी परें, करें घणा गुणग्रांम लाल रे।
हूं पीतिदांन ल्यायों भेटणों, ते किरपा करे ल्यों सांम लाल रे।।

१४. इम कहेनें भेटणों, मुख आगल मेल्यो तांम लाल रे।
पछें सीख मांगेनें चालीयों, पाछो गयों निज ठांम लाल रे।।

४. तीन दिन बीतने पर देवता का आसन चलित हुआ। उसने अवधिज्ञान का प्रयोग कर भरतजी को वहां देखा।

५. यहां वैताढ्य गिरि देवता की तरह ही सारा विस्तार जानना चाहिए। उपहार में जो अंतर था उसका अतिरिक्त विस्तार इस प्रकार है।

६-९. स्त्रीरत्न के लिए आभरण की मंजूषा में हार, अर्धहार, इंगद, स्वर्णमय मुक्तावली, बाजुबंध, कड़े, भुजबंध, मुद्रिका, कानों के कुंडल, अति मनोहर चूड़ामणि, ललाट पर लगने वाला तिलक आदि हाथ में लिया, उन्हें लेकर मागध देव की तरह शीघ्र गति से जहां भरतजी बैठे थे वहां आकर आकाश में खड़ा रहा। वह दशों दिशाओं में आलोक बिखेर रहा था, मधुर वाणी बोला।

१०-१२. वह दोनों हाथ जोड़कर विनयपूर्वक अंजली को मस्तक पर टिका मस्तक झुका कर नमस्कार जय-विजय शब्दों से वर्धापन करता हुआ अनेक गुणगान करने लगा।

कहने लगा- मैं कृतमाली देव हूं। आपका सेवक हूं। आपके अधीन हूं। आपका कोटपाल हूं। आपका किंकर हूं। आपकी आज्ञा का प्रतिपालक हूं।

१३. मागध देव कुमार की तरह खूब गुणगान कर कहा- प्रीतिदान के रूप में उपहार लाया हूं। इसे आप कृपा कर स्वीकार करें।

१४. यों कहकर उसने उपहार भरत के मुख के सामने रख दिया। फिर सीख मांगकर अपने स्थान पर लौट गया।

१५. देखों पुन्याइ राजा भरत नी, देवता पिण नमीया आय लाल रे।
पगां भेटणों मेल सेवग हूआ, सिर धणी भरत नें ठहराय लाल रे।।

१६. किरतमाली देवता गयां पछें, आया मंजण घर माहि लाल रे।
सिनांन करे बारें नीकल्या, गया भोजन मंडप माहि लाल रे।।

१७. भोजन कर बारें नीकल्या, गया उवठांणसाला माहि लाल रे।
तिहां बेंठा सिंघासण उपरें, कहें श्रेणी प्रश्रेणी नें बोलाय लाल रे।।

१८. किरतमाली देवता माहरें, पगां लागे मांनी माहरी आंण लाल रे।
ते सेवग ठहर्‌यों छें म्हारो, ते महोछव करों मोटें मंडांण लाल रे।।

१९. आठ दिवस महोछव करी, म्हारी आग्या पाछी सूंपो आंण लाल रे।
श्रेणी प्रश्रेणी सुण हरखत हूवा, महोछव कीधा मोटें मंडांण लाल रे।।

२०. एहवा महोछव लागें रलीयांमणा, पिण जांणें छें जेंहर समांण लाल रे।
त्यांनें त्यागनें भरतजी, इणहीज भव जासी निरवांण लाल रे।।

◆

१५. भरतजी के पुण्य-प्रताप को देखो। देवता भी उनके सामने नमन करते हैं। पैरों में उपहार रखकर भरतजी को अपना स्वामी मानकर उनका सेवक बन गए।

१६. कृतमाली के चले जाने पर भरतजी स्नानघर में आए। स्नान कर बाहर निकले और भोजन-मंडप में गए।

१७-१९. भोजन कर बाहर निकल कर उपस्थानशाला में आए। वहां सिंहासन पर बैठकर श्रेणि-प्रश्रेणि को आमंत्रित कर बोले- कृतमाली देवता ने पदनामी होकर मेरी आज्ञा को स्वीकार कर लिया है। वह मेरा सेवक बन गया है। अतः आठ दिन तक धूमधाम से महोत्सव कर मेरी आज्ञा को मुझे प्रत्यर्पित करो। श्रेणि-प्रश्रेणि के लोग यह सुन हर्षित हुए और धूमधाम से महोत्सव किया।

२०. इस प्रकार के महोत्सव अच्छे तो लगते हैं पर भरतजी इन्हें जहर के समान जानते हैं। वे इन्हें त्यागकर इसी भव में मुक्ति जाएंगे।

◆

दुहा

१. आठ दिवस महोछव तणा, पूरा हूआ छें तांम।
जब सेन्यपती नें बोलायनें, कहें भरतजी आंम।।

२. जा तूं वेग उतावलो, सिंधू नदी नें पेलें पार।
लवण समुद उला सगलां भणी, कीजें म्हारी आगना मझार।।

३. रत्नादिक भारी भारी भेटणा, लीजें तूं आंण मनाय।
सेवग म्हारा ठहरायनें, पाछी आगना सूंपो आय।

४. सुसेण सेनापति तेहनों, वरणव कह्यों जिणराय।
थोडो सों परगट करूं, ते सुणजों चित्त ल्याय।

ढाळ : २९

(लय : पूजजी पधारो हो नगरी सेवीया)

सेनापती रत्न छें भरत नरिंदनों।।

१. सेन्यापती रतन छें भरत नरिंद नों, सुसेण छें तिणरों नांम रे। सोभागी।
जस फेल्यो छें तिणरों लोक में, भरतखेतर में ठांम ठांम रे। सोभागी।

२. ते प्रसिध चावों छें भरतखेतर मझे, वळे प्राक्रम तिणरो अतंत रे।
वीर्य ओछाह मन रों छें अति घणों, मोटी आत्मा तिणरी महंत रे।।

३. तेज सरीर तणी क्रांत अति घणी, धीर्यादिक लखण सहीत रे।
जस कीरत फैंली छें तिणरी चिहूं दिसां, ओर दोषण करनें रहीत रे।।

दोहा

१. आठ दिन का महोत्सव पूरा होने पर भरतजी ने सेनापति को बुलाकर कहा–

२. तुम जल्दी से जल्दी सिंधु नदी के उस पार जाओ और लवण समुद्र के इस पार के सब लोगों को मेरी आज्ञा मनवाओ।

३. उन्हें मेरे सेवक बनाकर रत्नादिक के बड़े-बड़े उपहार लेकर मेरी आज्ञा को मुझे प्रत्यर्पित करो।

४. भगवान् ने सुषेण सेनापति का विस्तार से वर्णन किया है। मैं उसे थोड़े रूप में प्रकट कर रहा हूं। उसे सब चित्त लगाकर सुनें।

ढाळ : २९

भरत नरेन्द्र का सेनापति रत्न ऐसा है।

१. भरत के सेनापतिरत्न का नाम सुषेण है। वह बडा भाग्यशाली है। भरतक्षेत्र में स्थान-स्थान पर उसका यश फैला हुआ है।

२. भरतक्षेत्र में वह प्रसिद्ध-प्रख्यात है। उसका पराक्रम प्रबल है। उसके मन का वीर्य-उत्साह अपार है। उसकी आत्मा महान् है।

३. उसके शरीर की तेज-कांति अपार है। वह धैर्य आदि लक्षणों से युक्त है। उसकी यशकीर्ति चारों ओर फैली हुई है। वह सब दोषों से मुक्त है।

४. मलेछ नी भाषा छें विविध परकार नी, पारसी आरबी आदि जांण रे।
त्यांरी भाषा रों जांण प्रवीण छें अति घणो, डाहों छें चुतर सुजांण रे।।

५. ते भाषा बोलें छें विविध प्रकार नी, ते मीठी मनोहर जांण रे।।
वळे गमतों वचन लागें छें तेहनों, बोलें छें मांनोंपेत प्रमांण रे।

६. अर्थसासत्र नीतसासत्र आदि दे, अनेक सासत्र नों जांण रे।।
कला चुतराई तिणमें अति घणी, तिणमें विविध प्रकार नीं पिछांण रे।

७. भरतखेतर में खांड गुफादिक, वळे दुर्गम जायगा जांण रे।।
दुखे जायवोंनें दुखें पेंसवों, तिणरों पिण जांण पिछांण रे।

८. परबत झंगी विषम जायगादिक, तठें कायर तणों नही कांम रे।।
तिण ठामें प्रवेस करतों संकें नही, भय नही पांमें तिण ठांम रे।।

९. सूरवीर धीर साहसीक छें अति घणों, सेनापती रत्न वखांण रे।
प्रबल पुन संचों छें तेहनें, ते उदें हुआ छें आंण रे।।

१०. देवता सहंस तिणरी सेवा करें, अधिष्टायक रहें छें हूजूर रे।
सेनापती रत्न कोपें तिण ऊपरें, तिणनें भांज करें चकचूर रे।।

११. देवता सहंस सेन्यापती रत्न रे, रात दिवस रह्या तिण पास रे।
मन चिंतवीयो कार्य करें तेहनों, मनमें आण हुलास रे।।

१२. इसरों पुनवंत रत्न सेनापती, तिणरों अधिपति भरत माहाराय रे।
तिण भरत नरिंद रा पुनरों कहिवों किंसूं, त्यांरे सेन्यापती रत्न छें ताहि रे।।

१३. वनीत घणों छें भरत नरिंद नों, आगनाकारी सेवग तांम रे।
जे जे कार्य भलावें तेहनों, ते हरष सहीत करे कांम रे।।

४. वह पारसी, अरबी आदि म्लेछों की भाषा का ज्ञाता-प्रवीण, दक्ष, चतुर-सुजान है।

५. वह विविध प्रकार की भाषाओं का मधुर और मनोहर रूप से उच्चारण करता है। उसका वचन प्रिय लगता है। वह नपे-तुले शब्दों में बोलता है।

६. वह अर्थशास्त्र, नीतिशास्त्र आदि अनेक शास्त्रों का ज्ञाता है। उसमें विविध प्रकार की कला-चतुराई तथा उसकी पहचान है।

७. वह भरतक्षेत्र की खाइयों, गुफाओं तथा दुर्गम स्थानों का भी जानकार है। वहां कष्ट से जाने तथा कष्ट से प्रवेश करने की कला भी उसमें है।

८. ऐसे पर्वत, जंगल तथा ऊबड़-खाबड़ स्थान जहां कायर आदमी प्रवेश नहीं कर सकता, वहां भी वह शंकित या भयभीत नहीं होता।

९. वह सेनापतिरत्न अत्यंत सूरवीर, धीर, साहसी है। उसके प्रबल पुण्यों का संचय है। वे ही आज उदय में आए हैं।

१०. वह हजार देवताओं का अधिष्ठायक है। सब देवता उसकी सेवा में तत्पर रहते हैं। सेनापतिरत्न यदि उन पर कुपित हो जाए तो उनको मारपीट कर चकचूर कर देता है।

११. एक हजार देवता रात-दिन सेनापतिरत्न के पास रहते हैं। वे अत्यंत उल्लासपूर्वक उसका मनचिंतित कार्य करते हैं।

१२. सेनापतिरत्न इतना पुण्यवान् है। भरतजी उसके भी अधिपति हैं, उनके पुण्य का तो कहना ही क्या? क्योंकि उनके ऐसा सेनापति रत्न है।

१३. वह भरतजी का अत्यंत विनीत है। आज्ञाकारी सेवक की तरह उसे जो भी काम दिया जाता है वह उसे सहर्ष पूरा करता है।

१४. उपनों रत्न सुसेण सेनापती, नगरी वनीता मझार रे।
जात नें कुल दोनूंइ तिणरा निरमला, तिणसूं सेन्या चालें तिण लार रे।।

१५. एहवों सेन्यापती भरत नरिंद नें, आय ऊपनों छें पुन प्रमांण रे।
तिणनें पिण भरतजी कारमों जांणनें, त्यागे नें जासी निरवांण रे।।

◆

१४. सुषेण सेनापति विनीता नगरी में पैदा हुआ। उसकी जाति और कुल दोनों ही निर्मल हैं। सेना उसके पीछे-पीछे चलती है।

१५. ऐसा पुण्य का प्रतीक सेनापति भरतजी को प्राप्त हुआ। पर उसे भी भरतजी *अनित्य समझते हैं क्योंकि वे इसे त्यागकर मुक्ति जाएंगे।*

◆

दुहा

१. तिण सूंसेण सेनापती रत्न नें, कह्यों थो भरतजी आंम।
सिंधू पार सारांनें नमाय नें, पाछो वेगों आए इण ठांम।।

२. ते वचन सुणे हरखत हूवों, विनें सहीत बोल्यों जोडी हाथ।
आप कह्यों सगलों कार्य करूं, हूं सेवग थकों सांमीनाथ।।

३. इम कहें तिहां थी नीकल्यों, आयों निज आवास निज ठांम।
आग्याकारी पुरष बोलायनें, तिणनें कहें सेन्यापति आंम।।

४. जाओ सिघ्र उतावला, हस्तीरत्न सज करों जाय।
वळे चउरंगणी सेन्या सज करी, माहरी आग्या पाछी सूंपो आय।।

५. इम कहे आयो मंजण घर मझे, सिनांन कीयों तिण ठांम।
बलीकर्म करे तिहां, मंगलीक कीया छें तांम।।

ढाळ : ३०

(लय : इण पुर कांबल कोइ न लेसी)

१. सुसेण सेन्यापती तिणवार , सस्त्र लीधा हाथ मझार।
सस्त्र सारा बांध्या ठांम ठांम, वळे गहणा पेंहर हूवो अभिरांम।।

२. केइ सेवग बोंलें जोडी बेहुं हाथ, वळे अनेक गणनायक साथ।
ते सगला छें इणरा आग्याकारी, ओं पिण छें सगलां रो अधिकारी।।

३. वळे दंडनायक छें तिण साथें, राजा इसर आदि संघातें।
सकोरट फूलां री माला सहीत, छत्र धरावें रूडी रीत।।

दोहा

१. उस सेनापतिरत्न को भरतजी ने कहा– तुम सिंधु नदी के पार जाकर सब देशों को जीतकर जल्दी यहीं लौटो।

२. यह वचन सुनकर सेनापति हर्षित हुआ और हाथ जोड़कर विनयपूर्वक बोला– आप स्वामी हैं, मैं आपका सेवक हूं। आपने जितना कार्य करने का आदेश दिया है, मैं उसे पूरा करूंगा।

३,४. ऐसा कहकर सेनापति वहां से निकला और अपने आवास स्थान पर आया। अपने विश्वस्त लोगों को बुलाकर कहा– तुम जल्दी से जल्दी जाओ और हस्तीरत्न को तथा चतुरंगिनी सेना को सजाकर मेरी आज्ञा को मुझे प्रत्यर्पित करो।

५. ऐसा कहकर वह स्नानघर में आया। स्नान तथा तिलक छापे (बलिकर्म) कर मंगलाचार किया।

ढाळ : ३०

१. अब सुषेण सेनापति हाथ में शस्त्र लेकर, शरीर पर उन्हें यथास्थान बांधकर तथा आभूषण पहनकर अत्यंत दर्शनीय बन गया।

२. अनेक सेवक और गणनायक दोनों हाथ जोड़कर बोलते हैं। वे सब इसके आज्ञाकारी हैं। यह भी सबका अधिकारी है।

३. अनेक दंडनायक राजा ईश्वर इसके साथ हैं। सकोरंट फूलों की माला पहनकर तथा छत्र को भलीभांति धारण किए हुए हैं।

४. जय जय शबद करें छें अनेक, मंगलीक शबद बोलें छें विशेख।
मंजण घर थी नीकलीयों बार, आयों उवठाणसाला मझार।।

५. पटहस्ती रत्न उभों छें तिण ठांम, तिण उपर सेनापती चढीयों तांम।
हस्ती उपर बेठों पिण छतर धरावें, विडदावलीयां अनेक बोलावें।।

६. च्यार परकार नी सेन्या सहीत, निरभय थको उपद्रव्य रहीत।
वड वडा जोध सुभट ना वृंद, त्यांसूं वींट्यो चालें मन में आणंद।।

७. सीहनाद तणी परें गूंजे तांम, समुद्र शबद तणी परें आंम।
एहवा शब्दां रा उठ रह्या धुंकार, सर्व रिध जोत कटक विसतार।।

८. निरघोष शब्द वाजंतर वाजें, आकासें जांणें अंबर गाजें।
इण विध सेनापती चलीयों जाय, सिंधू नदी रें कांठें उभा आय।।

९. अनमी भोमीया नमावण काज, इणनें विदा कीयों छें भरत माहाराज।
इण विण ओर कहो कुण जावें, इण विण अनमीयां नें कूण नमावें।।

१०. इण करनें सेन्य रहें साहसीक, ओ सगली सेन्या तणों पूजणीक।
ओ सगली सेन्या तणों रुखवाल, ओ सगली सेन्या तणों प्रतिपाल।।

११. एहवी सेना नें सेनापती सर्व काचा, त्यांनें अंतरंग में नही जांणें आछा।
त्यांनें निश्चेंइ छोड होसी अणगार, इणभव जासी पाधरा मोख मझार।।

◆

४. जय-विजय शब्दों के उद्घोष और मांगलिक शब्दों के प्रयोगों के साथ वह स्नानघर से बाहर आता है तथा उपस्थानशाला में उपस्थित होता है।

५. वहां पर हस्तीरत्न खड़ा है। सेनापति उस पर सवार हो गया। हस्ती पर सवार होकर भी वह छत्र धारण कर रहा है। विविध प्रकार से उसके गुणगान किये जा रहे हैं।

६. वह चार प्रकार की सेना तथा बड़े-बड़े जोध-जवान वृंदों से घिरा हुआ निर्भय निरुपद्रव तथा सानंद चल रहा है।

७. सिंहनाद की तरह गूंजते हुए तथा सागर की तरह गरजते हुए स्वरों की प्रतिध्वनि हो रही है। सेना की ऋद्धि ज्योति का बड़ा विस्तार है।

८. शब्द और वाद्य-यंत्रों से आकाश में जैसे मेघ गरज रहा है। इस प्रकार चलते हुए सेनापति सिन्धु नदी के किनारे पर आकर खड़ा हुआ।

९. अविजित भूमिपालों को जीतने के लिए भरत महाराज ने सेनापति को विदा किया। इसके बिना भला और कौन जाए तथा कौन अविजितों पर विजय प्राप्त करे?।

१०. सेनापति से सेना में साहस का संचार होता है। वह सारी सेना का संरक्षक, प्रतिपालक और पूज्य होता है।

११. फिर भी यह सारी सेना और सेनापति अनित्य है। अंत:करण में भरतजी इन्हें अच्छा नहीं जानते हैं। निश्चय ही वे इन्हें छोड़कर मुनि बनेंगे तथा इसी भव में सीधे मुक्ति में जाएंगे।

◆

दुहा

१. सिंधू नदी वहें छें उतावली, तिणरो पांणी अगाध अतंत।
पेंली तीर निजर आवें नही, लोक देख हूआ भयभ्रंत।।

२. सिंधू नदी किण विध ऊतरां, किण विध जास्यां पेंलें पार।
जब सेन्यापती चर्म रत्न नें, लीधो हाथ मझार।।

३. ते चर्म रत्न छें रलीयांमणों, गुण घणा तिण मांहि।
तिणरों थोडों सों वरणव करूं, ते सुणजों चित्त ल्याय।।

ढाळ : ३१

(लय : पहली वली प्रणमू हा)

१. चर्मरतन उपनें हो भरत री आवधसाल में, ते गुणरतनां री खांण।
इसरा नें रत्न हो माहा पुनवंत जीव रें, उपजें अणचिंतवीया आंण।।

२. तिण चर्मरत्न नो हो आकारें श्रीवछ साथीयों, तिणरों रूप अनोपम तांम।
तिणरें मोती नें तारा हो वळे अर्ध चंद्र सारिखा, आलेख्या रूप चित्रांम।।

३. ते अचल अकंप हो अतंत दिढ छें अति घणों, ते भेद्यों नही भेदाय।
वजररत्न हों अभेद जिणवर भाखीयो, वळे गुण घणा तिण मांहि।।

४. ओं कुण कुण कार्य हो आवें छें भरत नरिंद नें, ते सांभल जों चित्त ल्याय।
नदी समुद नें हों उतारवानों उपाय छें, एहवों गुण छें तिण माहि।।

५. वळे सतरें धांन नीपजें हो तिण उपर वायां जुगत सूं, जव साल वृही वखांण।
कोदव राल धांन हो वळे तिल मुंग नीपजें, मास चवला चिणा पिछांण।।

६. वळे तुवर ने मसूर हो कुलथ नें गोहूं नीपजें, नीपाव अलसी सण धांन।
वळे अनेक रसांलां हो नीपजें चर्म रत्न सूं, त्यांरा अनेक प्रकारें नांम।।

दोहा

१. सिंधु नदी अत्यंत वेग से बह रही है। उसमें अगाध पानी है। दूसरा किनारा नजर नहीं आता। सैनिक लोग उसे देख भयभीत हो गए।

२. सोचने लगे कि सिंधु नदी को पार कर दूसरे किनारे कैसे जाएंगे? तब सेनापति ने चर्मरत्न अपने हाथ में लिया।

३. वह चर्मरत्न अत्यंत मनोहर है। उसमें अनेक विशेषताएं हैं। मैं उनका थोड़ा-सा वर्णन करता हूं। उसे ध्यान लगाकर सुनें।

ढाळ : ३१

१. गुणरत्नों की खान चर्मरत्न भरतजी की आयुधशाला में उत्पन्न हुआ। ऐसे रत्न महा पुण्यवान् जीव के ही अचिंत्य रूप से पैदा होते हैं।

२. उस चर्मरत्न का आकार श्रीवत्स साथिये जैसा है, उसका रूप अनुपम है। उस पर मोती, तारा तथा अर्धचंद्र सरीखे अनेक चित्र आलिखित हैं।

३. वह अत्यंत अचल, अकंप तथा दृढ है। भेदने से भिन्न नहीं होता। जिनेश्वर देव ने वज्ररत्न की तरह उसमें भी अनेकानेक गुण बताए हैं।

४. चर्मरत्न भरतजी के क्या-क्या काम आता है इसे ध्यान लगाकर सुनें। नदी और समुद्र पार करवाने का गुण इसमें है।

५,६. युक्तिपूर्वक बोने से उस पर जव, साल, वृही, कोद्रव, राल, तिल, मूंग, मास, चवला, चना, तूवार, मसूर, कुलत्थ, गेहूं, नीपाव, अलसी, सण आदि सतरह प्रकार के धान्य पैदा हो सकते हैं। अनेक प्रकार के फल भी उस पर पैदा हो सकते हैं।

७. सूर्य उगें वायां हो आथमीयां पहली नीपजे, तिण दिवस लुणें छें ताहि।
इसरा इसरा गुण छें हों इण चर्म रत्न मझे, ते उपनों पुन पसाय।।

८. विरखा नें वरसंते हो चक्रवर्त्त फरसे हाथ सुं, जब तिरछों विसतर जाय।
बारें नें जोजन हो जाझेरों लांबों विसतरें, सर्व सेन्या हेठें ताहि।।

९. तिण चर्म रत्न नें हों सेनापती हाथे फरसीयों, नावा भूत हुवों ततकाल।
नावा सरीखों हो सिंधू नदी नें उपरें, कीयों चर्म रतन विसाल।।

१०. चरम रत्न नें हो अधिष्टायक सहंस देवता, रहें चर्म रत्न रें पास।
ते महिमा वधारें हो चर्म रत्न री देवता, इणरा गुण प्रमांणे तास।।

११. चर्म रत्न छें हों अमोलक इण भरतखेत में, इसरों वळे दूजो नांहि।
भरत चक्रवत्त रें हों पुन जोगें आय उपनों, आवधसाला रे माहि।।

१२. जब सुसेण सेनापती हो सगली सेन्या सहीतसूं, सर्व हाथी घोरादिक जांण।
ते सगला चढीया छें हो नाव भूत चर्म रत्न पें, तिण उपर बेठा आंण।।

१३. सिंधू नदी उतरीया हो सगलाइ चर्मरत्नें करी, तिहां ऊंची घणी जल कलोल।
सिंधू नदी नों पांणी हो निरमल ऊंडो अति घणों, वळे उठें घणा हिलोल।।

१४. एहवो रत्न अमोलक हो भरतजी रें उपनों, ते पूर्व तप फल जांण।
तिणनें पिण छिटकासी हो भरतजी संजम आदरे, इण भव जासी निरवांण।।

◆

७. सूर्योदय के समय पर बोने पर अस्त होने के पहले-पहले वे पक जाते हैं। उसी दिन उन्हें काटा जा सकता है। ऐसे-ऐसे गुण इस चर्मरत्न में हैं। यह पुण्य के प्रसाद रूप में प्राप्त होता है।

८. वर्षा बरसने पर चक्रवर्ती हाथ से इसका स्पर्श करता है तो यह तिरछा फैल जाता है। साधिक बारह योजन से लंबे इसके विस्तार के नीचे सारी सेना समा जाती है।

९. जब सेनापति ने चर्मरत्न का हाथ से स्पर्श किया तो वह तत्काल नौका के रूप में परिणत होकर नौका की तरह ही सिंधु नदी में तैरने लगा।

१०. एक हजार अधिष्ठायक देवता चर्मरत्न के पास रहते हैं। इसके गुण के अनुसार ही देवता इसकी महिमा बढ़ाते हैं।

११. चर्मरत्न अमूल्य है। भरतक्षेत्र में ऐसा दूसरा नहीं है। भरत चक्रवर्ती के पुण्य के योग से ही यह आयुधशाला में आकर उत्पन्न हुआ।

१२. सारी सेना हाथी-घोड़ा आदि सहित सुषेण सेनापति उस नावाभूत चर्मरत्न पर सवार हो गया।

१३. चर्मरत्न से सारे सिंधु नदी के पार उतर गए। सिंधु नदी का पानी अति गहरा और निर्मल था। वह हिलोरे मार रहा था तथा उसमें ऊंची-ऊंची लहरें कल्लोल कर रही थीं।

१४. पूर्व तप के फल के रूप में ऐसा अमोलक रत्न भरतजी को प्राप्त हुआ। पर वे इसे भी छोड़कर संयम ग्रहणकर इसी भव में निर्वाण को प्राप्त होंगे।

◆

दुहा

१. सर्व सेन्या नदी उतर्‍यां पछें, सेनापती रत्न तिणवार।
गांम आगर नगरां रां राजां भणी, आंण मनावें छें पगां पार।।

२. खेड्ड मंडप पट्टण आदि दे, अनेक ठांम छें ताहि।
सिंघल बबर आदि सर्व देस में, आंण मनावता जाय।।

३. ते राजादिक छें केहवा, धन करनें रिधवांन।
मणी कनक रत्नादिक त्यांरें घणा, वळे बोहत रिध धन धांन।।

४. त्यां राजादिक नें नमावता, भेटणों लेता ताम।
सम विषम ठांम राजां भणी, आंण मनाइ ठांम ठांम।।

५. आभरण रत्न भूषण घणा, वळे वसत्र विविध परकार।
ए च्यारू बहूमोला भेटणा, मोटां जोग घणा श्रीकार।।

६. एहवा भारी भारी मोला भेटणा, ले ले आया सेनापती पास।
बहु मोला भेटणा पगां मेलनें, उभा करे अरदास।।

ढाळ : ३२

(लय : सोरठ देश मझार)

१. हिवें बोलें जोडी हाथ, थे म्हांनें कीया सनाथ। आज हो।
भलांनें पधार्‍या थे किरपा करी रे।।

२. वळे नीचो सीस नमाय, दोनूं मस्त हाथ चढाय। आ०।
वड वडा राजा तिणनें वीनवें जी।।

दोहा

१. सारी सेना के उस पार उतरने के बाद सेनापतिरत्न वहां के गांव, आकर तथा नगरों के राजाओं को आज्ञा मनवाकर अपने चरणों में झुकाता है।

२. वह अनेक खेड़, मंडप, पट्टण आदि स्थानों के सिंघल, बब्बर आदि सभी देशों में अपनी आज्ञा मनवाता गया।

३. वहां के राजा धन से ऋद्धिमान् हैं। उनके पास विपुल मणि, कनक, रत्न, धन-धान्य आदि अनेक समृद्धियां हैं।

४. सम-विषम सभी स्थानों के राजाओं को नतमस्तक करते हुए, उनसे उपहार लेते हुए अपनी आज्ञा मनवाई।

५. आभरण, आभूषण, रत्न तथा नानाविध वस्त्र, ये चारों प्रकार के बहुमूल्य श्रेष्ठ उपहार हैं।

६. ऐसे बड़े-बड़े कीमती उपहार वे सेनापति के पास लेकर आए। कीमती उपहारों को उसके चरणों में समर्पित कर प्रार्थना करते हैं।

ढाळ : ३२

१. वे हाथ जोड़कर बोलते हैं- आप भले पधारे, आपने हमारे पर कृपा की। हमें सनाथ बना दिया।

२. दोनों हाथों की अंजली सिर पर रखकर, सिर नीचे झुकाकर बड़े-बड़े राजा प्रार्थना करते हैं।

३. केइ हाथी घोडादिक जांण, सूपें सेन्यापती नें आंण। आ०।
भेटणों लीजें हो साहिब अम्ह तणों जी।।

४. इम कहि कहि वडा भूपाल, आंण मांनी तिण काल। आ०।
भरत नरिंद थाप्यों सिरधणी जी।।

५. म्हे सेवग थें सांम, हिवें मतलों म्हांरों नांम। आ०।
देवता ज्यूं सरणों म्हांनें तुम तणों जी।।

६. थांहरा देस तणा वसवांन, म्हें सगलांइ राजांन। आ०।
आंण म्हारें सिर भरत नरिंद नी जी।।

७. जय विजय करे वधाय, सेनापती नें ताहि। आ०।
भेटणों पगां म्हेलेनें वीनवें जी।।

८. सगलाइ राजांन, वळे दीयों घणों सनमांन। आ०।
सेनापती रत्न नें घणों सतकारीयों जी।।

९. त्यांरी आंण करे प्रमांण, गया सर्व निज ठिकांण। आ०।
भरत नरिंद नां सेवग ठहरीया जी।।

१०. नमीया राय अनेक, बाकी रह्यों नही एक। आ०।
सेवग सगला राजां नें थापीया जी।।

११. सिंधू नदी नें पार, लवण समुद्र नें उवार। आ०।
आण वरताइ सगलें भरतनी जी।।

१२. भरत चक्रवत्त नरनाथ, त्यांनें प्रसिध कीयो विख्यात। आ०।
सेन्यापती रत्न इण खंड में आयनें जी।।

१३. सगलें वरताइ आंण, हिवें पाछों आवें ठिकांण। आ०।
भेंटणों आयो ते ले नीकल्यों जी।।

३. कुछ राजा हाथी-घोड़ा आदि लाकर सेनापति को सौंपते हैं। कहते हैं- महाशय! आप हमारा उपहार स्वीकार करो।

४. इस प्रकार कह-कहकर बड़े-बड़े राजाओं ने आज्ञा मानकर भरतजी को अपना स्वामी स्वीकार किया।

५. हम सेवक हैं, आप स्वामी हैं। अब आप हमारा नाम ही न लें। हम देवता की तरह आपकी शरण में हैं।

६. हम सब राजा आपके देश के नागरिक हैं। भरतजी की आज्ञा हमारे सिर पर है।

७. सेनापति को जय-विजय शब्दों से वर्धापित करते हुए उपहार उसके चरणों में प्रस्तुत कर प्रार्थना करते हैं।

८. सभी राजाओं ने सेनापति का अत्यधिक सत्कार सम्मान किया।

९. भरत नरेंद्र की सत्ता स्वीकार कर उनके सेवक बनकर अपने-अपने स्थान पर गए।

१०. सभी राजा झुक गए। कोई भी बाकी नहीं रहा। सबको सेवक स्थापित कर दिया।

११. सिंधु नदी के उस पार तथा लवण समुद्र के इस पार तक, सर्वत्र भरतजी की आज्ञा मनवा दी।

१२. सेनापतिरत्न ने इस खंड में आकर भरत चक्रवर्ती को नरेंद्र के रूप में प्रसिद्ध-विख्यात बना दिया।

१३. सब जगह सत्ता स्थापित कर अपने स्थान पर आया और जो उपहार मिले उन्हें लेकर लौटने की तैयारी की।

१४. सगला राजा नें जीत, हूवों घणों सह जीत। आ०।।
कार्य सिध करनें पाछो चालीयो जी।

१५. पाछा आयो साहस धीर, सिंधू नदी रें तीर। आ०।
सगलोइ साथ सिंधू नदी उतर्यो जी।।

१६. सुखे समाधे तास, आयो भरत राजा रें पास। आ०।
भेटणों आंण्यों ते सगलों सूंपीयो जी।।

१७. विनें सहीत जोडी हाथ, मांड कही सर्व बात। आ०।
आंण मनाइ सगलें आपरी जी।।

१८. इण सुणनें भरत राजांन, हरष हूवां मनमांन। आ०।
अणंद उपनों मन में अति घणों जी।।

१९. सेन्यापती नें भरत राजांन, दीयों घणों सनमांन। आ०।
बहोत रजाबंध कीधों तेहनें जी।।

२०. हिवें सेनापती तिणवार, आयो मंजण घर मझार। आ०।
सिनांन करेनें बारें नीकल्यो जी।।

२१. पछें भोजन मंडप आय, असणादिक जीम्यों ताहि। आ०।
चलू करनें सुच निरमल थयों जी।।

२२. वस्त्र गेंहणा अलंकार, पेंहर कीयों सिणगार। आ०।
लेप लगायों चंदण बावनों जी।।

२३. बेठो रत्न जडीत अवास, तिहां भोगवें सुख विलास। आ०।
मादलां रा मस्तक तिहां फूटे रह्या जी।।

२४. नाटक बत्तीस परकार, पडे रह्या धूंकार। आ०।
गीत वाजंत्र अति रलीयांमणा जी।।

१४. सब राजाओं को जीतकर विजयी बनकर अपना कार्य सिद्ध कर लौटने लगा।

१५. साहसी और धैर्यवान् सेनापति सिंधु नदी के किनारे लौटा और सारी सेना के साथ सिंधु नदी के पार उतरा।

१६. सुख-शांतिपूर्वक भरत राजा के पास आया और जो उपहार लाया था उन्हें समर्पित कर दिया।

१७. विनयपूर्वक हाथ जोड़कर सब जगह सत्ता स्थापित की वह सारी बात विस्तार से बताई।

१८. यह सुनकर भरत राजा मन में हर्षित एवं आनंदित हुए।

१९. भरतजी ने सेनापति को अति सम्मान देकर उसे प्रसन्न कर दिया।

२०. अब अपने स्थान पर आकर सेनापति स्नानघर में जाकर स्नान कर बाहर आया।

२१. फिर भोजन-मंडप में आकर भोजन कर चुलु कर स्वच्छ-निर्मल हुआ।

२२. वस्त्र, गहने और आभूषणों का शृंगार किया। बावने चंदन का लेप किया।

२३,२४. अपने रत्नजटित आवास में बैठकर सुख-विलास का भोग करने लगा। ढोल बजने लगे। गीत वाद्ययंत्र के साथ बत्तीस प्रकार के नाटकों की धुंकार उठने लगी।

२५. तुरणी अस्त्री परधांन, ते रूपें रंभ समांन। आ०।
कांम नें भोग भोगवें तेहसूं जी।।

२६. एहवो सेन्यापती रत्न, तिणरा करें देवता जत्न। आ०।
ते सेनापती सेवग भरत नरिंद नो जी।।

२७. तिणनें भरत नरिंद राजांन, जाणें धूर समांन। आ०।
तिणनें पिण त्यागेनें जासी मुगत में जी।।

◆

२५. रूप में अप्सरा समान तरुणी स्त्रियों के साथ कामभोग भोगने लगा।

२६. ऐसे सेनापतिरत्न की देवता भी सुरक्षा करते हैं। फिर भी वह भरत नरेन्द्र का सेवक सेनापति है।

२७. उसे भी भरतजी धूल के समान निःसार जानते हैं। इसे भी छोड़कर मुक्ति में जाएंगे।

◆

दुहा

१. कांम नें भोग भोगवतो थकों, सुखे गमावें काल।
एहवो सेनापती रत्न छें, भरत नी आग्या नो प्रतिपाल।।

२. पूर्व भव पुन उपजावीया, ते उदें हूआ छें आंण।
छ खंड तणो राज भोगवें, तप संजम रा फल जांण।।

३. त्यांरी रिध विसतार छें अति घणों, जस कीरत घणी लोकां माहि।
हाल हुकम त्यांरो अति घणों, वळे सुख घणों छें ताहि।।

४. हिवें कुण कुण पुन उदें हुआं, किण विध भोगवें छें राय।
त्यांरी कहूं थोडी सी वांनगी, ते सुणजों चित्त ल्याय।।

ढाळ : ३३

(लय : समरूं मन हरखे तेह सती)

इसरों छें भरत रिषभानंद।।

१. चक्ररतन चालें जिणरें आकास, तिणरों सूर्य सरिखो परकास।
लारे सेन्या तणा चालें वृंद।।

२. अडतालीस कोस में लांब पणें, छत्तीस कोस में पहल पणें।
कटक तणों पडाव करें नरिंद।।

३. जिणरें पुन तणों संचों पूरों, वेंरी दुसमण भाज गया दूरों।
पगां पडीया त्यांरें हूवों आणंद।।

४. रेंत तणों रिख्याकारी, सगलां नें लागें हितकारी।
रेंत जिम कर दीधा सर्व राजंद।।

दोहा

१. ऐसा सेनापतिरत्न काम-भोगों को भोगता हुआ सुख में अपना समय व्यतीत कर रहा है। वह भरतजी की आज्ञा का प्रतिपालक है।

२. भरतजी ने पूर्व भव में जो पुण्य अर्जित किए थे, वे आकर उदित हुए हैं। छह खंड का राज्य भोग रहे हैं, यह तप-संयम का ही परिणाम है।

३. उनकी ऋद्धि का बड़ा-बड़ा विस्तार है। लोकों में उनकी बहुत यशकीर्ति है। उनका आज्ञा-निर्देश तथा सुख भी बहुत बड़ा है।

४. अब भरतजी के कैसे-कैसे पुण्य उदित हुए हैं तथा वे उन्हें किस प्रकार भोगते हैं उसका थोड़ी-सा नमूना प्रस्तुत करता हूं उसे चित्त लगाकर सुनें।

ढाळ : ३३

ऐसा है ऋषभदेव का पुत्र भरत।

१. सूर्य के समान प्रकाश करने वाला चक्ररत्न जिनके आकाश में चलता है तथा सेना पीछे-पीछे चलती है।

२. भरतजी की सेना का पड़ाव अड़तालीस कोस लंबा और छत्तीस कोस चौड़ा होता है।

३. उनके पुण्य का प्रबल संचय है। शत्रु-वैरी दूर भाग गए हैं या नतमस्तक हो गए हैं, इसलिए वे आनंदित हैं।

४. वे अपनी प्रजा के संरक्षक हैं। सबको हितकारी लगते हैं। सब राजाओं को भी उन्होंने अपनी प्रजा के समान बना लिया है।

५. देव देवी त्यांनें वस कर लीधा, त्यांरा भेटणा ले लेनें सेवग कीधा।
त्यांनें मनाय कीयों आणंद।।

६. देव देवी भेटणा ले ले आवें, जय विजय करे त्यांनें वधावें।
मुख बोलें विडदावली तणा वृंद।।

७. सूर्य उगां अंधारो दुर भागें, कमलां रा वन सूता जागें।
एहवों छें सूर्य दिनकर इंद।।

८. तिणसूं वेंरी दुसमण तिणरा भागें, सर्व रेत भणी गमतों लागें।
इण न्याय सूर्य जिम नरइंद।।

९. बीज अल्प कला चंद निजर आवें, पछें दिन दिन कला वधती जावें।
सोंलें कला हुवें पुनमचंद।।

१०. इणरें दिन दिन संपत इधिकी थावें, दिन दिन प्रथवी में आंण मनावें।
ओ पूरों होसी छ खंड तणों इंद।।

११. चवदें रत्न नें नव निधांन, चोसठ सहंस सेवग मोटा राजांन।
रिध करनें परिवरयों जांणें सक्रइंद।।

१२. तिणनें पाछां भागण रों छें नेम, छह खंड में वरतायों कुसल खेम।
अडिग जिम छें मेरू नगइंद।।

१३. देव देव्यां नें पाय नमण कीधा, सर्व राजां नें वस कर लीधा।
तिण करनें वाज्यों छें राजंद।।

१४. नाग कुमार में धरणिंद, सुवर्ण कुमार में वेणुदेविंद।
ग्रह गण नक्षत्र में सोभें चंद।।

१५. देवता पिण सेवा करें दिनरात, वळे नमण करें जोडी हाथ।
भरतखेत्र में उगों ज्यूं दिनकर इंद।।

५. उन्होंने देवी-देवताओं को भी अपने वश में कर लिया। उनका उपहार ग्रहण कर अपना सेवक बना लिया। उन पर अनुशासन कर आनंदित हैं।

६. देवी-देवता उपहार ले-लेकर आते हैं। जय-विजय शब्दों से उन्हें वर्धापित करते हैं। मुख से प्रशस्तियां बोलते हैं।

७. सूर्य ऊगने से अंधकार दूर भाग जाता है, सोया कमल-वन जाग जाता है वह दिनकर है, इंद्र है।

८. भरतजी से भी शत्रु-वैरी दूर भाग जाते हैं, वे प्रजा को प्रिय लगते हैं इस न्याय से वे सूर्य के समान हैं।

९. द्वितीया में चंद्रमा की थोड़ी कलाएं नजर आती हैं। फिर प्रतिदिन वे बढ़ती जाती हैं। पूर्णिमा का चंद्रमा सोलह कलाओं से परिपूर्ण होता है।

१०. भरतजी के भी प्रतिदिन संपदा का विस्तार हो रहा है, प्रतिदिन पृथ्वी पर सत्ता का विस्तार हो रहा है। ये छह खंड के अधिपति होंगे।

११. ये चौदह रत्नों, नौ निधान, चौसठ हजार प्रमुख राजाओं की ऋद्धि से परिवृत्त होने से शक्रेंद्र जैसे लगते हैं।

१२. इन्होंने कभी पीछे मुड़ना नहीं सीखा। छह खंड में कुशलक्षेम का प्रवर्तन किया है। नगेंद्र मेरु के समान अडिग हैं।

१३. देव-देवियों को इन्होंने नत-मस्तक किया, सब राजाओं को वश में किया, इसलिए ये राजेंद्र कहलाए।

१४. ये नाग कुमार में धरणेंद्र के समान, सुवर्ण कुमार में वेणु देवेंद्र के समान, ग्रह-नक्षत्र गण में चंद्र के समान सुशोभित हैं।

१५. देवता भी दिन रात इनकी सेवा करते हैं, हाथ जोड़कर नमस्कार करते हैं। भरतक्षेत्र में दिनकर की तरह इंद्र के रूप में उदित हुए हैं।

१६. सेन्या तणा लग रह्या थाट, देव-देव्यां तणा छें गह घाट।
रिध करनें जांणें वेसमण इंद।।

१७. रंत नें खोसणरी नही नीत, लोंपें नही राज तणी रीत।
भरतखेतर में छें प्रथीपति इंद।।

१८. कुरणा दया तणा तिणरा परिणांम, ते कदेय न करें अकार्य कांम।
तिणरी सहजें कषाय पडी मंद।।

१९. ओ चारित लेवारों छें कांमी, इणहीज भव में छें सिवगामी।
घणा रखेसरां नों होसी मुणिंद।।

२०. उतकष्टा भोग भोगवें छें तांम, पिण लूखा छा त्यांरा परिणांम।
निश्चें छोड देसी संसार ना फंद।।

२१. दिख्या लेसी आंण वेराग पूरो, आठु कर्म नें करसी चकचूरों।
मोक्ष जासी तिहां सदा आणंदो।।

◆

१६. इनके सेना का ठाठ लग रहा है। देव-देवियों का जमघट लगा हुआ है। ऋद्धि में वैश्रमण इंद्र के समान हैं।

१७. इनकी प्रजा का शोषण करने की नीति नहीं है। राज्य की रीति का उल्लंघन नहीं करते। भरतक्षेत्र में पृथ्वीपति इंद्र हैं।

१८. इनके परिणामों में दया-करुणा है। कभी अकार्य नहीं करते। सहज ही इनकी कषाय मंद हो गई है।

१९. चारित्र ग्रहण कर इन्हें इसी भव में मुक्ति में जाना है। ये अनेक मुनि जनों के मुनींद्र होंगे।

२०. यद्यपि अभी उत्कृष्ट भोग भोग रहे हैं। पर इनके परिणाम अनासक्त है। इसलिए निश्चय ही संसार के फंद से मुक्त हो जाएंगे।

२१. ये विरक्त होकर दीक्षा लेंगे। आठों ही कर्मों का क्षय कर सदानंद मुक्ति में जाएंगे।

◆

दुहा

१. वेताढ उला दोय खंड साझीया, हिवें जांणों वेताढ नें पार।
तिणरों मारग छें तामस गुफा मझे, तिणरा आडा जड्या छें कमाड।।

२. जब भारत नरिंद तिण अवसरें, कहें सेनापती नें बुलाय।
तमस गुफा ना दिखण दुवार नें, खोल सताब सूं जाय।।

३. कमाड उघाडी नें म्हारी आगना, पाछी वेगी सूपजे आय।
सेनापती हरखत हूवों, सुण भरत राजा री वाय।।

४. सेन्यापती तिहां थी नीकल्यों, आयो निज आवास रे मांहि।
तेलों कर तीन पोसा कीया, पोषधशाला में आय।।

५. तीन दिन पूरा हूआं, ध्यांन ध्याय रह्यों मन माहि।
एकाग्रचित्त तेह सूं, करें चिंतवणा ताहि।।

६. तीन दिन पूरा हूवां, गयों मंजण घर माहि।
सिनांन मरदन दोनूं कीया, पछें पेंहरया आभूषण ताहि।।

७. धूपणों फूल गंध माला फूल री, च्यारूंइ लीधा हाथ।
मंजण घर थी नीकल्यों, तिणरें कुण कुण हुवा छें साथ।।

ढाळ : ३४

(लय : पुन रा फल जोयजों)

पुन रा फल जोयजो।।

१. तमस गुफाना दुवार उघाडवा रे, सेन्यापती चाल्यों तिण वार।
घणा राजा इसर तलवर मांडबी रे, इत्यादिक बहु चाल्या लार रे।।

दोहा

१. वैताढ्यगिरि के इस पार दो खंडों को साधकर अब उस पार जाना है। उसका मार्ग तामस गुफा से होकर निकलता है। तामस गुफा के दरवाजे बंद हैं।

२. इस अवसर पर भरतजी सेनापति को बुलाकर तामस गुफा के दक्षिणी दरवाजे को जल्दी खोलने की बात कहते हैं।

३. दरवाजे खोलकर मेरी आज्ञा को जल्दी से जल्दी प्रत्यर्पित करो। सेनापति भरतजी की यह बात सुनकर हर्षित हुआ।

४. सेनापति वहां से निकलकर अपने आवास पर आया और पौषधशाला में आकर तीन दिन का पौषधोपवास किया।

५. तीन दिनों तक एकाग्रचित्त से मन में यही ध्यान और चिंतन करता रहा।

६,७. तीन दिन पूरे होने पर स्नानगृह में स्नान-मर्दन कर, आभूषण पहनकर धूप, फूल, गंध द्रव्य और माला हाथ में लेकर बाहर आया। अब उसके साथ कौन-कौन हुए उनका वर्णन किया जा रहा है।

ढाळ : ३४

पुण्य के फलों को देखें।

१. सेनापति तामस गुफा द्वार खोलने चला तब अनेक राजा, ईश्वर, तलवर, कोटवाल, मांडबी आदि उसके पीछे चलने लगे।

२. केकां उतपल कमल हाथे लीया रे, चाल्या सेन्यापती री लार।
चक्ररत्न पूजवा चालीया, तेहनी परें इहां विसतार रे।।

३. घणा देसां री दासीयां रे, त्यांरों पिण तिमहीज विसतार।
चंदण कलसादिक त्यांरा हाथ में, चाल्या सेन्यापती री लार रे।।

४. सर्व रिध जोत करनें परवर्स्यों रे, सेनापती तिण वार।
निरघोष वाजंत्र वाजतां थकां रे, आयो तमस गुफा रे दुवार रे।।

५. नमसकार कीयों दुवार देखनें रे, लोम पूंजणी पूंजें कमाड।
उदग धारा दीधी कमाड नें, चंदण थापा दीया श्रीकार रे।।

६. चक्ररत्न पूज्यों छें जिण विधें रे, तिण विध पूज्या कमाड।
आठ मंगलीकादिक तिण विधें, सर्व जांण लेजों विस्तार रे।।

७. नमसकार कीयों कमाड प्रतें रे, पछें दंड रत्न लीयों हाथ।
ते पांच हंस छें तिण दंड रे, वज्रसार दंड विख्यात रे।।

८. वळे दंडरत्न छें एहवों रे, वेरयां नों विणाशण हार।
वळे सेन्या उतारों करें तिहां, समी जायगा करें तिण वार रे।।

९. खाड गूफा विषम परवत गिरी रे, विघनकारी सेन्या नें ठांम।
वळे पाषाणादिक मारग विचें, ततकाल समी करें तांम रे।।

१०. सुभ किल्याणकारी दंडरत्न छें, उपद्रव्य निवारणहार।
मन इछा पूरण राजा तणों, सांतिकारी रत्न श्रीकार रे।।

११. अधिष्टायक दंडरत्न तणा रे, देवता एक हजार।
ते महिमा वधारण तेहनी, तिणरी रिख्या रा करणहार रे।।

१२. तिण दंडरत्न नें हाथे लीयों रे, सात आठ पग पाछों आय।
तीन वार मारी कमाडां तणें, मोटा मोटा शब्द करे ताहि रे।।

२. कुछ लोग हाथ में उत्पल कमल लेकर सेनापति के पीछे चले। पूर्वोक्त चक्ररत्न पूजने के लिए चलने का सारा विस्तार यहां जानना चाहिए।

३. अनेक देशों की दासियां चंदन कलश आदि हाथ में लेकर सेनापति के पीछे चली यह वर्णन–विस्तार भी पूर्वोक्त रूप से जानना चाहिए।

४. सब ऋद्धि–ज्योति से परिवृत्त होकर सेनापति निर्घोष वाद्ययंत्रों को बजाते हुए तामस गुफा के द्वार पर आया।

५. द्वार को देखकर उसे नमस्कार किया। फिर रोम पूंजणी से कपाट को परिमार्जित किया। पानी की धार से धोया। श्रेष्ठ चंदन के छापे लगाए।

६. जिस प्रकार पूर्व वर्णन में चक्ररत्न की पूजा की उसी प्रकार कपाटों की पूजा की। आठ मंगलों का विस्तार भी पूर्ववत् जान लेना चाहिए।

७. कपाट के प्रति नमस्कार करने के बाद वज्रसार दंडरत्न हाथ में लिया। उसके पांच हास हैं।

८. दंडरत्न वैरियों का विनाशक है। सेना के पड़ाव के स्थान का समतली–करण भी उससे होता है।

९. खाइयां, गुफाएं, विषम पर्वत तथा मार्ग के बीच आने वाले बाधक पत्थरों को भी वह तत्काल सम बना देता है।

१०. दंडरत्न शुभ, कल्याणकारी, उपद्रव निवारक, मनोकामनापूरक, शांति-कारक तथा श्रीकार है।

११. एक हजार देवता दंडरत्न के अधिष्ठायक, रक्षक तथा महिमा बढ़ाने वाले हैं।

१२. सेनापति ने दंडरत्न को हाथ में लिया, सात–आठ पैर पीछे आया और तीन बार कपाटों पर उच्च शब्दों क साथ प्रहार किया।

१३. कमाड तीन वार ताड्यां थकां रे, मोटे मोटे शबद तिण वार।
कोच पक्षी ज्यूं शब्द करता थका, उघड़ीया गुफाना कवाड रे।।

१४. कमाड उघडीया जांणने रे, सेनापती तिण वार।
ते आयों भरत राजा कनें, कहें उघाडीया छें कवाड रे।।

१५. ए वचन सुणे नें भरतजी रे, हरषत हूआ मन माहि।
सेनापती नें भरतजी रे, घणों सनमांन्यों ताहि रे।।

१६. हिवे कोडंबी पुरुष बोलाय नें रे, कहे भरतजी आंम।
पटहस्ती रत्न नें सज करों, चउरंगणी सेन्या सजों तांम रे।।

१७. चउरंगणी सेना सज करी रे, पाछी आगना सूंपी आय।
जब पटहस्ती उपरे रे, बेठा भरत माहाराय रे।।

१८. त्यांनें जांणें भरतजी विटंबणा रे, जेहवो ढूहलडीयां रो खेल।
त्यांनें छोडे संजम सुध पालसी रे, मुगत जासी करमांनें पेल रे।।

◆

१३. तीन बार उच्च शब्दों के साथ प्रहार करने से क्रोंच पक्षी की तरह आवाज करते हुए गुफाद्वार उघड़ गए।

१४. कपाट उघड़ने पर सेनापति ने भरतजी के पास आकर कपाट के उघड़ने की जानकारी दी।

१५. भरतजी यह वचन सुनकर मन में हर्षित हुए और उन्होंने सेनापति का बड़ा सम्मान किया।

१६. अब भरतजी ने कोडंबिक पुरुषों को बुलाकर उन्हें कहा– पटहस्तीरत्न तथा चतुरंगिनी सेना को सज्ज करो।

१७. उन्होंने चतुरंगिनी सेना सज्ज कर आज्ञा का प्रत्यर्पण किया तो भरतजी पटहस्ती पर बैठे।

१८. भरतजी इन सबको कठपुतलियों के खेल की तरह विडंबना जानते हैं। इन्हें छोड़ शुद्ध संयम का पालन करेंगे और कर्मों को नष्ट कर मुक्ति में जाएंगे।

◆

दुहा

१. भरत नरिंद तिण अवसरें, हाथ में लीयों मणी रतन।
ते मणीरत्न छें केहवों, ते सांभलजों एकमन।।

ढाळ : ३५

(लय : जगत गुरु त्रिशलानंदन वीर)

भरतेसर पुन तणा फल एह।।

१. लांबों आंगुल च्यार नों, ते वस्त घणी छें अमोल।
ते मोल साटें मिलें नही, तिणरो भारी अमोलक तोल।।

२. त्रिणअंस छअंस कोट छें, सर्व मणीरतन में परधांन।
अनोपम जोत नें क्रांत तेहनी, रत्नां में स्वांमी समांन।।

३. उतकष्टों वेडूर्य रत्न छें, सर्व जीवां नें हितकार।
तिणरें अधिष्टायक देवता जी, रहें छें एक हजार।।

४. मणीरत्न मस्तक हुवें जेहनें, तो दुख नही हुवे अंस मात।
जो दुख आगें हुवें तेहनें, ते पिण विळें होय जात।।

५. देवता मिनख तिरजंचना, उपसर्ग छें विविध परकार।
इण मणीरत्न कनें थकां, उपशर्ग नही उपजें लिगार।।

६. ससत्र बांण गोला वहें घणा जी, रिण संग्रांम मझार।
इण मणीरत्न कनें थकां, ससत्र नही लागें लिगार।।

७. थिर जोवन रहें तेहनों, केस धवला न हुवें तास।
भय नही पांमें सर्वथा, मणीरत्न हुवें जों पास।।

दोहा

१. उस अवसर पर भरत नरेंद्र ने मणिरत्न को हाथ में लिया। वह मणिरत्न किस प्रकार का है उसे मन को एकाग्र कर सुनें।

ढाळ : ३५

यह भरतेश्वर के पुण्य का फल है।

१. वह चार अंगुल लंबा अमूल्य वस्तु है। मूल्य के बदले में नहीं मिल सकती। उसका तोल अमूल्य-विशिष्ट है।

२. वह तीन अंश और छह कोण वाला है। यह सब मणिरत्नों में प्रधान है। इसकी ज्योति-कांति अनुपम है। यह रत्नों में स्वामी के समान है।

३. यह उत्कृष्ट वैडूर्य रत्न सब प्राणियों के लिए हितकारी है। एक हजार देवता उसके अधिष्ठायक रहते हैं।

४. जिसके मस्तक पर मणिरत्न होता है उसे तनिक भी दुःख नहीं होता बल्कि पहले जो दुख होते हैं वे भी विलय हो जाते हैं।

५. देवता, मनुष्य तथा तिर्यंचों के विविध प्रकार के उपसर्ग होते हैं। मणिरत्न पास में हो तो तनिक भी उपसर्ग उत्पन्न नहीं होता।

६. मणिरत्न पास में होने से संग्राम में चलने वाले बाण, गोले आदि शस्त्र तनिक भी चोट नहीं कर सकते।

७. मणिरत्न पास में हो तो आदमी चिर युवा रहता है। उसके केश सफेद नहीं होते। वह सर्वथा निर्भय रहता है।

८. इत्यादिक मणीरत्न में जी, गुण अनेक पिछांण।
ते मिलीयों छें भरत नरिंद नें जी, पुन परमांणें आंण।।

९. तिण मणीरत्न नें भरत जी, त्यां लीधों हाथ मझार।
हस्ती कुंभाथल पासें जीमणें, मणीरत्न मूंक्यों तिणवार।।

१०. हस्ती उपर बेंठा सोभें भरतजी, जांणें पूरों पूनिम रों चंद।
रिध करनें परवस्यों थकों, जांणें अमरपती सक्रइंद।।

११. चक्ररत्न रें पूठें चालता, लारें राजा अनेक हजार।
सीहनाद करता थका, समुद्र नीं परें करता गुंजार।।

१२. आया तमस गुफा रें बारणें, तिण गुफा में घोर अंधार।
जब भरतजी कागणी रत्न नें जी, लीधों हाथ मझार।।

१३. तिण कागणी नामें रत्न रें जी, छ तला कह्या छें तांम।
च्यारू दिसिना च्यारू तला, ऊंचों नें नीचों दोनूं आंम।।

१४. आठ खूणा छें तेहनें जी, अहरण रें संठाण।
आठ सोनइयां भार मांन छें, एहवों कागणी रत्न वखांण।।

१५. एक एक हांसि छें एतली जी, च्यार च्यार आंगुल परमांण।
छहूं हांसि बरोबर सारिखी, समचउरस तिणरों संठांण।।

१६. विष छें थावर जंगम तणों, तिण विष रो निवारणहार।
अतुल्य तुल्य रहीत छें, अनोपम रत्न छें श्रीकार।।

१७. मांन उन्मांन प्रमांण जोग छें, एतला मांन वशेष ववहार।
ते सगला कागणी रत्न थी, प्रवर्त्ते छें लोक मझार।।

१८. कागणी नामा रत्न थी, विणसजाअें अंधकार।
जेहवों चंद सूर्य अगन थी, मिटें नही अंधार।।

८. इस तरह मणिरत्न में अनेक गुण होते हैं। भरतजी को पुण्य के योग से वह प्राप्त हुआ है।

९. उस मणिरत्न को भरतजी ने हाथ में लिया और हाथी के कुंभस्थल के दांए पार्श्व पर स्थापित कर दिया।

१०. हस्ती पर बैठे हुए भरतजी पूर्ण चंद्र के समान सुशोभित होते हैं। ऋद्धि से परिवृत्त होते हुए वे देवपति शक्रेंद्र जैसे लगते हैं।

११. चक्ररत्न के पीछे-पीछे समुद्र की तरह गुंजारव सिंहनाद करते हुए हजारों राजे चल रहे हैं।

१२. वे तामस गुफा के द्वार पर आए। गुफा में घोर अंधकार है। तब भरतजी ने काकिणीरत्न हाथ में लिया।

१३. काकिणीरत्न के चारों दिशाओं में चार तथा ऊपर और नीचे इस प्रकार छह आयाम होते है।

१४. अहरण के संस्थान वाले काकिणीरत्न के आठ किनारे कोण हैं। उसका भार आठ सोनैया प्रमाण है।

१५. उसकी छहों हास एक जैसी होती हैं। एक-एक समचतुरस्र संस्थान की तरह चार अंगुल प्रमाण होती है।

१६. स्थावर या जंगम किसी भी प्राणी के विष का वह निवारक है। वह अनुपम, अतुल्य और श्रीकार रत्न है।

१७. लोक में जितने भी मान, उन्मान तथा प्रमाण हैं वे सब काकिणीरत्न से प्रवर्तित होते हैं।

१८. सूर्य, चंद्र या अग्नि से जो अंधकार नहीं मिटता वह काकिणीरत्न से मिट जाता है।

१९. बारें जोजन त्यां लगें, तिणरा लेस्या प्रभाव उद्योत।
ते लेस्या छें वृध पामती, पिण घटें नही तिणरी जोत।।

२०. अंधकार तणा समूह हुवें, तिणरों छें विनासणहार।
एहवी प्रभा क्रांति छें तेहनी, तीनोइ काल मझार।।

२१. कटक पडाव करें तिहां जी, करें अतंत उद्योत।
दिन समांन तिणरों प्रकास छें, राते लागें झिगामिग जोत।।

२२. जेहना तेज प्रभाव करी जी, भरतराय नरेस।
सगली सेन्या सहीत सूं जी, तमस गुफा में करें प्रवेस।।

२३. पेंला अर्ध भरत नें जीपवा, कागणी रत्न नें लीधो हाथ।
तिणरा अधिष्टायक सहंस देवता छें, ते पिण लार लगा तिण साथ।।

२४. इसडों रत्न छें जेहनें, तिणरा जांणजो पुन अथाग।
तिणरों अधिपती भरत नरिंद छें, तिणरों तो मोंटों छें भाग।।

२५. तमस गुफा नें बेहूं पाखती, पूर्व नें पिछम दिस भीत।
एक जोजन जोजन रें आंतरें, मांडला करें रूडी रीत।।

२६. लांबा नें पेंहला मांडला, ते पांच सों धनुष रों प्रमांण।
ते उद्योत प्रकास करें घणो जी, एक जोजन लगें जांण।।

२७. चक्र पेंडा रें संठाण छें, वळे चंद्रमा रों संठांण।
एहवा काकणी रत्न रा मांडला, त्यांरो प्रकास चंदर समांण।।

२८. एक एक जोजन रें आंतरे, मांडला करतो करतों जाय।
डावी नें जीमणी भीतरें जी, तमस गुफा रें माहि।।

२९. मांडला आलेख आलेखतों, ते मांडला सर्व गुणचास।
ते मांडला ततकाल आलोकतां, सूर्य शरीखो प्रकास।।

१९. बारह योजन तक उसकी रश्मियों के उद्योत का प्रभाव रहता है। वे रश्मियां घटती नहीं अपितु बढ़ती रहती है।

२०. उसकी प्रभा-क्रांति ऐसी है कि तीनों ही काल में अंधेरे का समूह उससे विनष्ट हो जाता है।

२१. जहां सेना का पड़ाव होता है वहां वह दिन के समान तीव्र प्रकाश करता है। रात में भी वहां दिन के समान जगमग ज्योति हो जाती है।

२२. उसके तेज के प्रभाव से भरत नरेश सारी सेना सहित तामस गुफा में प्रवेश करते हैं।

२३. उस पार के आधे भरतक्षेत्र को जीतने के लिए भरतजी ने काकिणी रत्न को अपने हाथ में लिया। उसके अधिष्ठायक एक हजार देवता भी साथ हो गए।

२४. जिसके पास ऐसा रत्न होता है उसके पुण्य अथाह जानें। भरत नरेंद्र उसके अधिपति हैं यह उनका सौभाग्य है।

२५. तामस गुफा के दोनों ओर पूर्व और पश्चिम में दीवार पर एक-एक योजन के अंतराल से सुघड़ गोलाकार मंडल बनाते हैं।

२६. वे मंडल पांच सौ धनुष प्रमाण लंबे-चौड़े हैं। एक-एक योजन तक वे तीव्र उद्योत-प्रकाश करते हैं।

२७. रथ के पहिये तथा पूर्ण चंद्रमा के संस्थान वाले काकिणीरत्न के मंडल का प्रकाश चंद्रमा के समान है।

२८. एक-एक योजन के अंतराल से तामस गुफा में दांए-बांए दीवार पर मंडल करते-करते आगे बढ़ रहे हैं।

२९. मंडलों का आलेखन करते-करते उनकी सर्व संख्या उनपचास हो गई। वे मंडल आलेखन के तत्काल बाद सूर्य सरीखा प्रकाश कर रहे हैं।

३०. दिवस सरीखो करतो थकों, जाअें तमस गुफा रे माहि।
घणे मध्यभाग गयें थके, दोय नदी वहें छें ताहि।।

३१. ते उमगजला नें निमगजला, ते उडी वहें छें तांम।
त्यांरो विस्तार छें अति घणों, त्यांरो गुण प्रमांणें छें नांम।।

३२. गुफा लांबी जोजन पचास नी, परवत परमांणें जांण।
ते पेंहली जोजन बारें तणी, उंची आठ जोजन प्रमांण।।

३३. इकवीस जोजन गुफा में गयां, नदी उमगजला छें तांम।
ते तीन जोजन चोडी वहें, तिणरो गुण प्रमांणें नाम।।

३४. तिहां थी दोय जोजन आगा गया, नदी निमगजला छें तांम।
ते पिण तीन जोजन चोडी वहें, तिणरो गुण प्रमांणें नांम।।

३५. हाड कलेवरादिक तेहनें, उमगजला उचा आंणें सताब।
बारें नांखे दे तेहनें, निमगजला नीचा दे धाब।।

३६. एहवी गुफा नदी नें उलंघनें, जासी वेताढ पर्वत पार।
बल प्राकम पुन रा जोग सूं, छ खंड रो सिरदार।।

३७. इसरा किरतब करें जांणतो जी, भरत नरिंद राजांन।
मोक्षगांमी छें इणभवें, तिणरे घट छें सुध गिनांन।।

३८. त्यांनें ग्यांन सूं माठा जांणनें, छोड़ देसी ततकाल।
सिवपुर जासी कर्म काटनें जी, चारित चोखों पाल।।

◆

३०. तामस गुफा में दिन सरीखा प्रकाश करता जा रहा है। उसके मध्य भाग में दो नदियां बह रही हैं।

३१. उन्मग्नजला तथा निमग्नजला नाम की ऊंडी बह रही इन नदियों का नाम यथा नाम तथा गुण प्रमाण ही है। उनका विस्तृत वर्णन है।

३२. तामस गुफा पचास योजन पर्वत प्रमाण लंबी बारह योजन प्रमाण चौड़ी एवं आठ योजन प्रमाण ऊंची है।

३३. उसमें इक्कीस योजन चलने पर यथा नाम तथा गुण वाली उन्मग्नजला नदी आती है। वह तीन योजन चौड़ी है।

३४. वहां से दो योजन आगे चलने पर यथा नाम तथा गुण वाली निमग्नजला नदी आती है। वह भी तीन योजन चौड़ी है।

३५. उन्मग्नजला नदी अपने अंदर आने वाले हाड-कलेवर आदि को ऊपर लाकर तत्काल बाहर फैंक देती है तथा निमग्नजला उन्हें नीचे दबा देती है।

३६. बल पराक्रम तथा पुण्य के योग से छह खंड के स्वामी भरतजी इस प्रकार की गुहा नदी को उलांघकर वैताढ्य गिरि के पार जाएंगे।

३७. भरतजी ये सारे करतब जान-बूझकर कर रहे हैं। वे इसी भव में मोक्षगामी हैं। उनके घट में शुद्ध ज्ञान है।

३८. ज्ञान से वे इन्हें खराब जानकर तत्काल छोड़ देंगे तथा शुद्ध चारित्र पालकर कर्मों का नाश कर मुक्ति में जाएंगे।

◆

दुहा

१. चक्ररत्न पूठें पूठें चालता, सेन्या सहीत साहस धीर।
उतक्रष्टो सिंघनाद करता थका, आया उमगजला नें तीर।।

२. जब वढइरत्न बोलायनें, कहें छें भरत माहाराय।
उमगजला नदी नें विषें, पाज बांधो सताब सूं जाय।।

३. अनेक सइकडांगमे, थांभा लगाए ताहि।
ते चलें कंपें नही तेहवा, वळे आलंबन भीत वणाय।।

४. ते कीजें सगलाइ रतन में, सुखे सेन्या उतरें जिम ताहि।
ते करे वेग सताब सूं, पाछी आगना सूपे आय।।

५. वढइरत्न सुण हरखत हूवो, पाज बांधी सताब सूं जाय।
उमग-निमगजला उपरें, करनें आग्या पाछी सूंपी आय।।

६. जब भरत नरिंद सेन्या सहीत सूं, सुखे नदी उतरीया तांम।
तमश्र गुफानों उत्तर दुवार छें, आय ऊभा तिण ठांम।।

७. ते कमाड आफेइ ऊघड्यां, मोटा मोटा करता शब्द।
सर सर करता पाछा ऊसरया, आ पुन तणी छें लब्द।।

८. तिण कालें नें तिण समें, आपात नामें चिलात।
एकदा प्रस्तावें त्यांरा देस में, उठ्या घणा उतपात।।

९. ते कुण कुण उतपात उठ्या तिहां, आगुच लखायों वूराकार।
उदेग पांम्या छें किण विधें, ते किण विध करें छें विचार।।

दोहे

१. चक्ररत्न के पीछे-पीछे सेना सहित चलते हुए साहसी और धीर भरतजी उत्कृष्ट सिंहनाद करते हुए उन्मग्न नदी के किनारे पर आए।

२. बढ़ईरत्न को बुलाकर भरतजी उन्मग्न नदी के विषय में कहते हैं- शीघ्र जाकर पुल बांधो।

३,४. दीवार के सहारे सैकड़ों रत्नमय खंभे लगाकर उसे ऐसा अकंप बनाओ कि सेना आराम से उस पार उतर जाए। शीघ्रता से सारा काम संपन्न कर मेरी आज्ञा मुझे पत्यर्पित करो।

५. बढ़ईरत्न यह सुन हर्षित हुआ। शीघ्रता से उन्मग्न-निमग्न नदी पर पुल बांधा और आज्ञा प्रत्यर्पित की।

६. भरत नरेंद्र सेना सहित आराम से नदी के पार उतर गए और तामस गुफा के उत्तरी द्वार पर आकर खड़े हो गए।

७. सर-सर की तीव्र ध्वनि करते हुए कपाट अपने आप पीछे हट कर खुल गए। यह पुण्योपलब्धि है।

८. उस काल और उस समय आपात चिलात भीलों के देश में अचानक अनेकों उत्पात खड़े हुए।

९. वहां कैसे-कैसे उत्पात खड़े हुए, उनके बुरे प्रभाव अग्रिम रूप में लक्षित हुए तथा भील किस प्रकार उद्वेग प्राप्त करते हैं और कैसे विचार करते हैं।

ढाळ : ३६

(लय : सुण हे सूवटी मत कर सुतनी आस)

आपात चिलाती, ते प्रभूत घणा रिधवांन।।

१. ते वड वडा छें राजवी रे, आपात नामें चिलात।
अगाध रिध छें जेहनी, दर्पवंत विख्यात।।

२. वस्तीरण भवन छें अति घणा रे, सयन आसन प्रसिध।
वाहण रथ अश्वादिक, आकीर्ण घणी छें रिध।।

३. धनधांन त्यारें घणो रे, सोंनों रूपों घणों प्रभूत।
वसतीरण बल वाहण घणा रे, वळे रिध घणी अद्‌भूत।।

४. ते संग्राम करवानें विषें रे, लब्धलखी छें रे ताहि।
सूर वीर छें अति घणा, त्यांनें जीता किण सूं न जाय।।

५. वळे प्रज्ञा सूर छें सांतरा रे, बोले बंध छें रे ताहि।
पर धरती लेवा सूर छें, दातारपणों त्यां माहि।।

६. उतपात उठ्या तिण देस में, सइकडांगमें तांम।
ते भय भ्रांत हूवा देखनें, पछें भेला हुआ एक ठांम।।

सुणो भाइ राजां, करवो कवण विचार।।

७. माहोमाहि बोलायनें रे, कहिवा लागा रे आंम।
इम निश्चें देवाणुप्रीया, आपे भेला हूवा इण कांम।।

८. आपांरा इण देस मे रे, उठ्यां घणा उतपात।
हिवडां ते परगट हूवा, तो विगड़ी दीसें बात।।

९. अकालें अंबर गाजीयो रे, आयां विनां वरसात।
वळे अकाले वीजली, खिवी खिंवी झबोला खात।।

ढाळ : ३६

आपात चिलात प्रभूत ऋद्धि-सम्पन्न हैं।

१. आपात-चिलात बड़े-बड़े राजे हैं। उनके पास अगाध ऋद्धि है। वे अभिमानी हैं।

२. अनेक विस्तीर्ण भवन, शयन, आसन, वाहन, रथ-घोड़ों आदि से उनकी ऋद्धि आकीर्ण है।

३. उनके पास अत्यधिक धन-धान्य, सोना-चांदी, बल-वाहन तथा अद्‌भुत एवं प्रभूत ऋद्धि है।

४. संग्राम करने में वे लक्ष्यवेधी हैं। अत्यंत सूरवीर एवं अपराजेय हैं।

५. उनमें अच्छे प्रज्ञावान् लोग हैं। वे वीरतापूर्ण छंद बोलते हैं। वे दूसरों की धरती पर अधिकार करने में शूर हैं। उनमें उदारता भी है।

६,७. उस देश में सैंकड़ों उत्पात खड़े हुए तो उन्हें देखकर वे भयभ्रांत होकर एक स्थान में एकत्रित हुए। आपस में कहने लगे कि देवानुप्रियों, भाई राजाओं सुनो अब हमें क्या विचार-निश्चय करना चाहिए इसलिए इकट्ठे हुए हैं।

८-१०. हमारे देश में बड़े उत्पात खड़े हो गए हैं। बिना वर्षा ऋतु के अकाल में बादल गरज रहे हैं, अकाल में विद्युत झबक रही है, अकाल में वृक्ष फलने-फूलने लगे हैं। इन चिह्नों के प्रकट होने से लगता है, बात बिगड़ने वाली है, इनसे हमारा क्या हाल होगा।

१०. वळे विरख अकाले फूलीया रे, ते हूआ घणा फल फूल।
इण अहलांणें आपो तणों, कांइ हुवेंला सूल।।

११. आकासें नाचें देवता रे, ते पिण वारूं रे वार।
ते खबर नही आपां भणी, पिण कायक छें वूराकार।।

१२. एहवा इत्यादिक अति घणा रे, सइकडांगमे रे जांण।
वूरा वूरा जे चहन छें, प्रगट हूआ छें आंण।।

१३. आज पहिला इण देस में रे, उतपात न दीठा रे ताहि।
उतपात हुआ थी होसी वूरों, गिणीया दिनारे रे माहि।।

१४. जिण दिस वूरो हुवें जेहनें रे, आगुंच पडें लखाव।
ते जोग मिल्यों छें आपणें, तिणरों करों कोयक उपाव।।

१५. आपांरा इण देसमें रे, उपद्रव मोटो रे थाय।
कष्ट हुंतों दीसें घणो रे, ते मेटणरो नही उपाय।।

१६. मन हणांणों तेहनो रे, संकलप विकलप ताहि।
चिंता रूप सागर मझे, प्रवेस कीयों तिण माहि।।

१७. हाथ तला मुख थापनें रे, ध्यांवें आरतध्यांन।
भूम दिष्ट जेहनें, सोच करें राजांन।।

१८. विलापात करें घणा रे, जांणें होसी कुण हवाल।
ओ विणासकाल दीसें वूरों, तिण आडी न दीसें ढाल।।

१९. ते अतंत दुखी हुआ घणा रे, देखें घणां उतपात।
हिवें किण विध विगडें तेहनी, ते सुणो तिणांरी वात।।

२०. तिण अवसर सेन्या भरत री रे, चक्ररत्न रे रे लाल।
सीहनाद करती थकी, नीकली गुफा रे बार।।

११. आकाश में बार-बार देवता नाच रहे हैं। हमें पता नहीं है, पर कुछ बुरा हाल होने वाला है?।

१२,१३. इस प्रकार के सैकड़ों बुरे-बुरे संकेत प्रकट हुए हैं। इससे पहले इस देश में ऐसे उत्पात कभी नहीं देखे गए। गिनती के दिनों में ही कुछ बुरा घटित होने वाला है।

१४. जिसके जिस दिशा में बुरा होता है वह पहले ही लक्षित हो जाता है। वही योग हमारे यहां मिल रहा है। इसका कोई उपाय करना चाहिए।

१५. हमारे देश में कोई बड़ा उपद्रव होने वाला है। उससे बड़ा कष्ट होने वाला लगता है। इसे दूर करने का कोई उपाय दिखाई नहीं देता।

१६. उनका मन आहत हो गया। संकल्प-विकल्प उठने लगे। वे चिंता रूपी सागर में प्रवेश कर गए।

१७. हथेलियों पर मुख स्थापित कर राजे आर्तधान करने लगे। भूमि पर दृष्टि गाड़कर वे चिंता करने लगे।

१८. वे अत्यधिक विलाप करने लगे। सोचने लगे, न जाने क्या हाल होने वाला है? इस बुरे विनाशकाल के सामने कोई ढाल सुरक्षा खड़ी नहीं दिखाई दे रही है।

१९. अनेक उत्पात देखकर वे अत्यंत दुखी हो गए। अब उसका किस तरह बिगाड़ होता है वह बात सुनें।

२०. उसी समय चक्ररत्न तथा भरतजी की सेना सिंहनाद करती हुई गुफा से बाहर निकली।

२१. जब अपात चिलाती राजवी रे, कटक अणीनें रे देख।
कोप्या सिघर उतावला, जाग्यों अंतर धेष।।

२२. माहोमा भेला थइ रे, कहें माहोमा रे आंम।
ओं कुण छें अपथपथीया, भूंडा लखणां रा तांम।।

२३. अें लज्या लिखमी रहीत छें रे, ते आया छें इण ठांम।
आपणों देस लेवा भणी, सिघर आवें छें तांम।।

२४. तिण कारण आपे सहू रे, यांनें आवा मत दो रे आंम।
दिसों दिसयां में भगाय दां, करे भारी संग्रांम।।

२५. ओ भग्गयो नही भागसी रे, इणरे पुन रो संचों छें पूर।
ओ मोख मे जासी इण भवें, कर्म करे चकचूर।।

◆

२१. तब आपात चिलाती राजा सेना की अग्रिम पंक्ति को देखकर तत्क्षण कुपित हो गए। आंतरिक द्वेष जाग उठा।

२२. वे एकत्र होकर आपस में कहने लगे– ये अप्रशस्त की प्रार्थना करने तथा अशुभ लक्षण वाले कौन हैं?।

२३,२४. ये निर्लज्ज, भिखारी हमारा देश हड़पने के लिए यहां आ रहे हैं। इसलिए हम सब इन्हें न आने दें, भीषण संग्राम करके दशों दिशाओं में भगा दें।

२५. पर भरतजी भगाने से नहीं भागेंगे। इनके प्रबल पुण्य का संचय है। ये इसी भव में कर्मों का नाश कर मोक्ष में जाएंगे।

◆

दुहा

१. एहवी कीधी माहोमा विचरणा, सगलां वचन कीयों अंगीकार।
संग्रांम करवा कारणें, हूआ सताबसूं त्यार।।

२. ससत्र सरीरें बांधीया, ते पिण ठांमो ठांम।
सूरपणों मन माहे मांनता, विरदावलीयां बोलावता तांम।।

३. बहुमोला आभरण त्यांरे पेंहरणें, सुरभीगंध फूलां करनें सहीत।
चंदण लेप लगावीया, सिणगार कीयों रूडी रीत।।

४. मस्तक चेंहन धरावता, ते निरमल वर परधांन।
आउध झाल्या रूडी रीतसूं, धरता मन अभिमांन।।

५. जांणें आवा न दां इण देस में, देसां तुरत भगाय।
इसडी धारे नें नीकल्या, अणी समुख चाल्या ताहि।।

ढाळ : ३७

(लय : संग्राम मंडांणो रे)

१. भरत नरिंद राजा री रे, सेन्या घणी भारी रे।
आगली अणी देखो रे, जाग्यों तांनें धेखों रे।
त्यांसूं जुझ करवानें आया छें उतावला रे।।

२. सेन्या अणी सूं तांमो रे, करवा लागा संग्रांमो रे।
आमां सांहमा परिहारो रे, मूंक्या तिणवारो रे।
घणा मिनखां रा घमसांण हूआ तिण अवसरें रे।।

दोहे

१. इस प्रकार आपस में चिंतन कर सभी एकमत होकर तत्काल युद्ध करने के लिए तैयार हो गए।

२. उन्होंने अपने शरीर पर यथास्थान शस्त्र बांध लिए। अपने आप में शौर्य अनुभव करते हुए कीर्तिगान करने लगे।

३. वे कीमती आभरण पहने हुए थे। चंदन का लेप कर तथा सुरभिगंध फूलों से सुघड़ रूप से श्रृंगारित हो गए।

४. मस्तक पर अपना निर्मल तथा प्रमुख प्रतीक चिह्न धारण करते हुए साहंकार शस्त्र थाम लिए।

५. सोचा– इन्हें अपने देश में नहीं आने देंगे। तुरंत दूर भगा देंगे। ऐसा निश्चय कर भरतजी की सेना की अग्रिम पंक्ति के सम्मुख आए।

ढाळ : ३७

१. भरत नरेंद्र की विशाल सेना की अग्रिम पंक्ति को देखकर उनका द्वेष जाग गया।वे युद्ध करने के लिए उतावले हो गए।

२. अग्रिम पंक्ति से आमने-सामने संग्राम करते हुए तीव्र प्रहार करने लगे। उस अवसर पर बहुत सारे सैनिक हताहत हुए।

३. सेन्या अणी हणांणी रे, दही जेम मथांणी रे।
सेन्या थी हूंती आघी रे, तेतो हार भागी रे।
आपातचिलात त्यांनें जीती लीया रे।।

४. वीर परधांन जोधा रे, ते पर गया बोदा रे।
ध्वजा पताका पाड्या रे, भूंडी रीत नसाड्या रे।
वळे डेरा नें लूटे लीया त्यांरा जोर सूं रे।।

५. हुंता घणा अहंकारी रे, त्यांनें भूय हुइ भारी रे।
जोर कोइ न लागो रे, दिसो दिस गया भागों रे।
पाछोंनें मंडीयों नहीं जाअें तेहथी रे।।

६. सेन्या जाअें न्हाठी रे, दिसों दिस जाअें त्राठी रे।
सेन्यापती त्यांनें देखो रे, जाग्यों धेष वशेखो रे।
अणी भागी देखेनें सेनापती कोपीयो रे।।

७. कमला मेल घोडो रे, तिणरें तिणसूं जोडो रे।
ते अश्वरत्न छें सेंठो रे, तिण ऊपर बेंठो रे।
तिण खडग रत्न लीयों भरत नरिंद रा हाथ थी रे।।

८. अश्वरत्न मतंगो रे, खडग रत्न छें चंगो रे।
तिण अश्व असवारो रे, खडग हस्त मझारो रे।
सेनापती जोध जोरावर सूरमो रे।।

९. ते सीहनाद ज्यूं गाजे रे, पडगो घोडा रो वाजे रे।
हाथ में खडग झलकें रे, जांणें वीजलीं चलकें रे।
तिणनें देखेनें सगलाइ धड धड धूजीया रे।।

१०. आपातचिलातो रे, त्यांनें करवा निपातो रे।
आयों तिण ठांमों रे, त्यांसूं कीयों संग्रांमों रे।
खडग रत्न सूं कतल कीयो तेहनों रे।।

३. अग्रिम पंक्ति को दही की तरह मथते हुए उन्होंने आधी सेना को मार दिया। आधी सेना हारकर भाग गई। आपात चिलातियों ने उन्हें जीत लिया।

४. वीर तथा प्रधान योद्धा कमजोर हो गए। ध्वजा-पताकाओं को बुरी तरह ध्वस्त कर दिया तथा बलपूर्वक शिविरों को लूट लिया।

५. वे बहुत अहंमानी थे पर अब उनके लिए भूमि भारी पड़ गई। उनका जोर नहीं चला। दिशि-दिशि में भाग गए। उनसे प्रतिरोध करना असंभव हो गया।

६. सेनापति ने देखा अग्रिम पंक्ति त्रस्त होकर दिशि-दिशि में भाग रही है। इससे वह कुपित हो गया।

७. सेनापति भरतजी के हाथ से खड्ग लेकर अपनी जोड़ी के कमलामेल ताकतवर अश्वरत्न पर सवार हुआ।

८. अश्वरत्न तो मतंग था ही खड्गरत्न भी मनोहारी था। जोध-जोरावर सूरवीर सेनापति हाथ में खड्ग लेकर उस घोड़े पर सवार हो गया।

९. वह सिंहनाद की तरह गाजने लगा। घोड़ों के पदतल की प्रतिध्वनि होने लगी। हाथ में खड्ग ऐसा झलक रहा था मानो विद्युत चमक रही हो। उसे देखकर सब थर-थर कांपने लगे।

१०. आपात चिलातियों को मारने के लिए वह युद्धस्थल पर आया, उनसे संग्राम किया और खड्गरत्न से उनकी हत्या कर डाली।

११. आपाचिलातो रे, त्यांरी कीधी छें घातो रे।
हत पर हथ हथीया रे, दहीनी परें मथीया रे।
धजा नें पताका त्यारा लूटे लीया रे।।

१२. वर प्रधांन वीरा रे, हुंता सुभट सधीरा रे।
जोरावर जोधा रे, ते पिण पड गया बोदा रे।
ते पिण सेनापतीरत्न देखेनें धूजीया रे।।

१३. जोर कोइ न लागो रे, दिसों दिस गया भागो रे।
हार परगया हणांणा रे, घणा सुभट मरांणा रे।
नास गया सर्व डेरा छोडनें रे।।

१४. घणा सुभट मरांणा रे, जब घणा सीदांणा रे।
हूआ घणा भय भ्रांतो रे, त्रास पांमी अतंतो रे।
प्रहारां पीरया उदेग पांम्या घणा रे।।

१५. भय पांम्या अथागो रे, मननों बल भागो रे।
जुझ करवासूं धाया रे, जाबक होय गया काया रे।
पुरषाकार प्रकम त्यांरो छिप गयो रे।।

१६. शक्त शरीर री न कायो रे, पाछों मंडीयों न जायो रे।
सेनापती रा तापों रे, निजरां दीठां आपो रे।
समर्थ नही आपे इणनें जीपवा रे।।

१७. एहवों तेज प्रतापो रे, सेनापती रो आतापो रे।
त्यांनें भरत राजांनों रे, जांणें सर्व धूर समांनों रे।
यांनें छोड संजम ले जासी मुगत में रे।।

◆

११. आपात चिलातियों का संहार कर उनकी सेना को दही की तरह मथ दिया, ध्वजा-पताका को लूट लिया।

१२. उनके श्रेष्ठ प्रधान, सधीर, ताकतवर योद्धा भी कमजोर पड़ गए। सेनापति रत्न को देखकर वे कांपने लगे।

१३. उनका जोर नहीं चला तो वे दशों दिशि में भाग छूटे। बहुत सारे सुभट मारे गए। बहुत सारे अपने शिविर छोड़कर भाग छूटे।

१४. बहुत सारे योद्धाओं के मारे जाने से वे अत्यंत अवसन्न हो गए भयभ्रांत होकर अत्यंत त्रासित हुए। प्रहारों की पीडित अत्यंत उद्विग्न हो गए।

१५. अपार भय से उनका मनोबल टूट गया। वे युद्ध करने बिल्कुल परिश्रांत हो गए। उनका पौरुष-पराक्रम अस्त हो गया।

१६. शरीर शक्तिहीन हो गया। प्रतिरोध भी नहीं कर सके। सेनापति के तेज को उन्होंने अपनी आंखों से देखा। उसे जीतने में वे असमर्थ हो गए।

१७. सेनापति का ऐसा प्रताप-आताप था। पर भरतजी सबको धूल के समान समझते हैं। इन्हें छोड़कर चारित्र लेकर मुक्ति में जाएंगे।

◆

दुहा

१. आपातचिलाती तेहनें, पडीयों सेन्यापती रो ताप।
अनेक जोजन न्हासे गया, त्यांरा मन माहे सोग संताप।।

२. आगें सहू एकठा मिल्या, वळे मिसलत कीधी माहोमाहि।
जिहां सिंधू नदी तिहां आयनें, बालू रेत पाथरें आय।।

३. ते वालू संथारें बेंसनें, वस्त्र दूरा करे तांम।
तेलों कीयों कुल देवता उपरें, मुख ऊंचो राखे तिण ठांम।।

४. त्यांरा कुल रो मरे हूवों देवता, तिणरो मेघमाली छें नांम।
ते नागकुमार छें देवता, तिणरों ध्यांन ध्यावें तिण ठांम।।

५. तीन दिन पूरा हूआं, आसण चलीयों तिण ठांम।
आसण चलीयों देखनें, अवधि प्रज्यूंज्यों तांम।।

६. अवधि करेनें त्यांनें देखनें, माहोमा बोलाय कहें आंम।
आपात चिलाती आपां ऊपरें, तेलों कीयों तिण ठांम।।

७. तिण कारण आपां भणी, ते श्रेय भलों छें ताहि।
तिण ठांमें जाय परगट हूआं, यांरा पूरां मनोरथ जाय।।

ढाळ : ३८

(लय : गुर कहे राजा तूं एहवो ए)

१. इम माहोमा करेय विचार ए, सगलां वचन कीयों अंगीकार ए।
उतकष्टी चाल चाल्या तास ए, आया देवता त्यारें पास ए।।

दोहे

१. सेनापति का ऐसा ताप पड़ा कि आपात चिलाती शोक-संतप्त होकर अनेक योजन तक दूर भाग गए।

२-४. आगे जाकर सब एकत्र हुए और उन्होंने परस्पर परामर्श किया। सिंधु के किनारे पर बालू बिछाकर, बालू के आसन पर बैठकर, निर्वस्त्र होकर, मुंह को आकाश की ओर ऊंचा रखकर मेघमाली नामक अपने कुलदेवता के लिए तेला किया। उसका ध्यान करने लगे। मेघमाली नागकुमार जाति का देव था।

५. तीन दिन पूरे होने पर देवता का आसन चलित हुआ। उसने अवधिज्ञान का प्रयोग किया।

६,७. अवधिज्ञान से जानकर नागकुमार देवता आपस में मिले और बोले- आपात चिलातियों ने हमारे पर तेला किया है अतः हमारे लिए यह उचित और श्रेयस्कर है कि हम वहां जाकर प्रकट होवें तथा उनकी मनोकामना को पूरा करें।

ढाळ : ३८

१. इस प्रकार परस्पर विचार-विमर्श कर सारे देवता एकमत होकर उत्कृष्ट गति से चलकर आपात भीलों के पास आए।

२. आकासे ऊभा रूडी रीत ए, न्हांनी घुघरी करे सहीत ए।
पंचवरणा वस्त्र परधांन ए, त्यांरे पहरण सोभायमांन ए।।

३. आपातचिलात सुं तांम ए, देवता बोलें छें आंम ए।
किण कारण कीया वालू संथार ए, किण कारण न्हांख्या वस्त्र सार ए।।

४. मुख ऊंचों करे सूता आंम ए, वळे तेलों कीयों किण कांम ए।
मांनें याद कीया किण काज ए, तिण कारण आया म्हें आज ए।।

५. म्हे मेघमाली स्वमेव ए, नाग कुमार छां म्हे देव ए।
थांरा कुल देवता छां तास ए, तिण सूं आया म्हें थांरें पास ए।।

६. हिवें कार्य भलावो मोय ए, थारे जे कोइ मन माहे होय ए।
म्हारें छें थांसूं हेत सनेह ए, थे कहिसों ते करसूं तेह ए।।

७. ए वचन सुणनें आपात ए, हीया माहे हरख न मात ए।
ठांम थी उठ उभा थाय ए, मेघमाली देव पें आय ए।।

८. दोनूं हाथ जोडी सीस नांम ए, वळे मुख सूं करें गुणग्रांम ए।
त्यांनें जय विजय करनें वधाय ए, घणी विडदावलीयां बोलाय ए।।

९. विनों करनें कहें छें ताहि ए, म्हांमें वेला पडी छें आय ए।
कोइ अपथ पथियों आय ए, म्हांनें जुझकर दीया भगाय ए।।

१०. म्हारा सुभटां रो कीयों विणास ए, तिणसूं अठें आया म्हें न्हास ए।
इसरी म्हांरी तो सक्त न काय ए, जुझ कर इणनें देवां भगाय ए।।

११. तिणसूं कीयो तेलादिक आंण ए, आपरों ध्यांन कीधों जांण ए।
तिणसूं स्वयमेव आया आप ए, मेटों म्हांरों सोग संताप ए।।

१२. इणनें हणों थे सनमुख जाय ए, ज्यूं ओं आघो न सकें आय ए।
जुझ कर इणनें देवों भगाय ए, तों ज्यूं मांनें सुख थाय ए।।

२. वे आकाश में आकर खड़े हो गए। छोटी-छोटी घूघरिया तथा पंचवर्णी विशिष्ट वस्त्र पहने हुए वे शोभायमान लग रहे थे।

३,४. देवता आपात चिलातियों से बोले- तुमने बालू का बिछौना क्यों किया है। निर्वस्त्र होकर ऊंचा मुंह कर तेला क्यों किया है? हमें किस कार्य के लिए याद किया है। हम आज उसी कारण आये हैं।

५. हम मेघमाली नागकुमार तुम्हारे कुल देवता हैं। इसलिए हम तुम्हारे पास आए हैं।

६. अब तुम्हारे जो भी मन में हो वह कार्य हमें बतलाओ। हमारा तुमसे प्रेम-स्नेह है इसलिए तुम जो कहोगे वह कार्य करेंगे।

७. यह वचन सुनकर आपात चिलातियों का हृदय हर्ष से भर गया। वे आसन से उठकर खड़े हुए और मेघमाली देवता के पास आए।

८. दोनों हाथ जोड़ सिर झुकाकर मुख से गुणगान करते हुए उन्हें जय-विजय शब्द से वर्धापित कर प्रशंसा करने लगे।

९. विनयपूर्वक कहते हैं- हमारे पर ऐसा संकट आया है। किसी अप्रशस्त प्रार्थित ने आकर हमें युद्ध करके भगा दिया।

१०. हमारे सुभटों का विनाश कर दिया। जिससे हम भागकर यहां आए हैं। हमारे में ऐसी शक्ति नहीं है कि युद्ध करके उन्हें भगा सकें।

११. इसीलिए तेला-स्मरण आदि किया। जानबूझ कर आपका ध्यान किया जिससे आप खुद आए। अब हमारे शोक-संताप को मिटाओ।

१२. सामने जाकर इसे मारो जिससे वह आगे न आ सके। युद्ध कर इन्हें दूर भगा दो। तब हमें सुख होगा।

१३. जब मेघमाली तिण ठांम ए, त्यांनें उत्तर कहें छें आंम ए।
ओंतों भरत नामें राजांन ए, चक्रवत छें मोटों पुनवांन ए।।

१४. तिणरें रिध घणी अथाग ए, मोटी जोत क्रान्ति महाभाग ए।
तिणरा सुख नें सकत अतंत ए, सूरवीर घणो बलवंत ए।।

१५. निश्चें नही इण लोक रें माहि ए, इणनें पाछो वाल्यों जाय ए।
देवता दाणव किंनर अनेक ए, वळे किंपुरष देव वशेख ए।।

१६. महोरग नें गंधर्व जांण ए, इत्यादिक वंतर जात पिछांण ए।
इत्यादिक देव अनेक ए, यांमें समर्थ नही कोइ एक ए।।

१७. सांहमों मंडें भरत सूं जाय ए, जुझ कर देवें भगाय ए।
आघो आवा न दें सोय ए, इसरों नही दीसें कोय ए।।

१८. वळे ससत्र अगन रें जोग ए, अथवा मंतर नें प्रजोग ए।
इत्यादिक उपद्रव्य माहि ए, भरत नें करवा समर्थ नांहि ए।।

१९. पिण म्हें थारी पीत रे काज ए, उवशर्ग करसां भरत नें आज ए।
म्हारें स्नेह थांसूं छें तांम ए, तिणसूं करसूं ए कांम ए।।

२०. इम करे गया त्यासूं वात ए, जाय कीधी वेक्रें समुदघात ए।
भरत राजा तणों अभीरांम ए, आया विजय कटक तिण ठांम ए।।

२१. विजय कटक उपर कीयो गाज ए, तिणरो घोर शबद ओगाज ए।
बिजलीयां खिवें ततकाल ए, झबाझब करे विकराल ए।।

२२. सिघ्र मेह कीयों ततकाल ए, ते पांणी पडें दगचाल ए।
धारा मूसल प्रमांणें जांण ए, तिण पांणी रो नही प्रमांण ए।।

२३. उघ मेह समूह वरसात ए, वूठो सात दिवस नें रात ए।
जब भरत राजा तिण वार ए, पांणी वूठो जांण्यों एक धार ए।।

१३. तब मेघमालो ने उत्तर दिया। यह तो भरत नामक पुण्यशाली महान् चक्रवर्ती राजा है।।

१४. इस महाभाग की ऋद्धि, ज्योति, कांति, सुख, शक्ति अथाह है। यह अत्यंत शूरवीर एवं बलवान् है।

१५-१७. निश्चय ही इस लोक में इसको पीछे नहीं धकेला जा सकता। देव, दानव, किन्नर, किंपुरुष, महोरग, गंधर्व, व्यंतर आदि अनेक देव हैं। इनमें से एक भी ऐसा नहीं है जो भरत का सामना कर युद्ध करके उसे भगा दे, आगे न आने दे।

१८. आग्नेय शस्त्र, मंत्र-प्रयोग द्वारा भरत पर उपद्रव करना भी संभव नहीं है।

१९. फिर भी तुम्हारे प्रेम के कारण हम आज भरत पर उपसर्ग करेंगे। हमारा तुमसे स्नेह है, इसलिए यह कार्य करेंगे।

२०. उनसे यह बात करके वे जहां भरत राजा का अभिराम विजय कटक था वहां आए और वैक्रिय समुद्रघात की।

२१. विजय कटक पर गाज की। उस शब्द की भयंकर ओगाज हुई। तत्काल झबाझबा करती हुई विकराल विद्युत चमकने लगी।

२२. तत्काल वर्षा होने लगी। घनघोर पानी गिरने लगा। धारा का प्रवाह मूसल के समान था। पानी की कोई थाह नहीं रही।

२३,२४. सात दिन-रात तक बादलों के समूह बरसते रहे। जब भरत राजा ने इस एकधार पानी की बरसात को देखा तो श्रीवत्स के आकार वाला चर्मरत्न अपने हाथ में

२४. जब चरम रत्न तिण वार ए, तिणनें लीधो हस्त मझार ए।
तिणरों श्रीवछ रूप आकार ए, हाथ लागां कीयों विस्तार ए।।

२५. जाझेरो बारें जोजन प्रमांण ए, कटक हेठें पसर्यों जांण ए।
हिवें छत्र रत्न लीयों हाथ ए, ऊंचो करवानें नरनाथ ए।।

२६. एहवा चर्म छत्र रतन ए, त्यांरा देवता करें जतन ए।
त्यांनें त्यागसी वेंराग आंण ए, इण भव में जासी निरवांण ए।।

◆

लिया और उसका विस्तार किया।

२५. चर्मरत्न बारह योजन से भी अधिक सेना के नीचे पसर गया। फिर भरतजी ने ऊपर छाने के लिए छत्ररत्न हाथ में लिया।

२६. इस प्रकार के चर्मरत्न और छत्ररत्न की देवता रक्षा करते हैं। पर भरतजी वैराग्य आने पर इनको भी त्यागकर इसी भव में मोक्ष जाएंगे।

◆

दुहा

१. छत्र रत्न छें तेहनें, सिलाका निननांणूं हजार।
ते कंचण में रलीयांमणा, ते सोभें घणों श्रीकार।।

२. तिण छत्र रत्न रें डंड छें, ते पिण अमोलक ताहि।
गांठांदिक दोष रहीत छें, रूडा लखण तिण माहि।।

३. विसिष्ट मनोगत अति घणों, लष्ट पुष्ट सोवन में तांम।
भार नो सहणहार छें अति घणों, इसडों छें दंड अभीरांम।।

४. सुखमाल घठास्यों मठारीयों, वाटलों रूपा माहि वखांण।
ते छत्र मनोहर अति घणों, ते ऊजलो सेत पिछांण।।

५. अरविंद फूल नी कर्णिका, ते समरूप वखांण।
मझ भागें आकार पिंजर तणों, ते घणों मनोज्ञ जांण।।

६. तिणरें भात छें विविध प्रकार नी, विविध प्रकार ना चित्रांम।
मणी चंद्रकांतादिक तेहनें, मोती प्रवाली रची ठांम ठांम।।

७. तपाव्या रक्त सोवन मझे, पंच प्रकारें रत्न वखांण।
त्यां करे रूप रच्या घणा, पूर्ण कलसादिक मंगलीक जांण।।

ढाळ : ३९

(लय : बावीसमा श्री नेम जिणंद)

१. रत्नां री किरण रूडी तिणरी क्रांत ए, समी रचना तिणरें कीधी भांति ए।
अनुक्रमें जथाजोग रंग ठांम ठांम ए, त्यां रंग रचणा सोभें अभिरांम ए।।

दोहे

१. छत्र रत्न सुशोभन और श्रीकार है। उसके निन्यानबे हजार स्वर्ण की मनोहर शलाकाएं हैं।

२. छत्ररत्न का दंड भी अमोलक है। वह सुलक्षण है। गांठ आदि दोषों से रहित है।

३. वह अति विशिष्ट मनोहारी एवं अभिराम है। स्वर्णमय एवं सुदृढ़ है। उसका दंड अति भार को भी सह सकता है।

४. वह छत्र अति मृदु एवं चिकने-चुपड़े चांदी के प्याले के समान उज्ज्वल श्वेत एवं अत्यंत मनोहर है।

५. वह अरविंद फूल की कर्णिका के समान है। मध्य भाग का आकार शलाकाओं के पिंजर के समान अति मनोज्ञ है।

६. उसमें विविध प्रकार की कलियां एवं चित्राम है। स्थान-स्थान पर चंद्रकांत आदि मणियां, मोती प्रवाल आदि की रचना है।

७. तपे हुए रक्तस्वर्ण में पचरंग रत्नों तथा पूर्ण कलश आदि मांगलिक रूप भी उसमें रचे हुए हैं।

ढाळ : ३९

१. रत्नों की सुन्दर किरणों की भांति उसकी कांति है। अनुक्रम से स्थान-स्थान पर यथायोग्य सीधे तथा तिरछे रंगों की अभिराम रचना शोभित है।

२. राज नें लिखमी रा चेंहन तिण माहि ए, उरजन सोवन करे ढांक्यों छें ताहि ए।
ते पूठलों भाग छत्र तणों जांण ए, उजलों पडूर स्वेत वखांण ए।।

३. तवणीज्ज रक्त सोवन माहे तास ए, पाटीया छें तिणरें चिहूं पास ए।
ते अधिक सश्रीक ते अतही सोभंत ए, देखणहार नों मन हरखंत ए।।

४. रूप पुनम चंद मंडला समांण ए, लांबों पेंहलों नरिंद री भूजा परमांण ए।
सहिज सभाव निरंतर जांण ए, विसतरें जब अनेक जोजन परमांण ए।।

५. चंद्रविकासी कमल वन खंड ए, तेह समांण धवलों प्रमंड ए।
भरत राजा नों चलितों विमांण ए, एहवों छत्र रत्न वखांण ए।।

६. सूर्य आताप वायरों वरसात ए, यां तीनोइ दोष नें करदें निपात ए।
एहवों सुखकारी छें छत्र रत्न ए, सर्व सेन्या तणों करदे जतन ए।।

७. पूर्व तप गुण कीया प्रधांन ए, तिण करे पामीयो छें एह निधांन ए।
घणा गुण अखंडत तेहनों दातार ए, इण सूं वड वडा गुण पांमें श्रीकार ए।।

८. छहूं रित तणा सुखनों छें दातार ए, वळे दुखां रो दूर निवारण हार ए।
तिण छतर री छाया घणी सुखदाय ए, सर्व रोग नें सोग वेळे होय जाय ए।।

९. उतकष्टो छतर रत्न परधांन ए,
गुणोपेत सोभ रह्यों उनमांन ए।
अलप पुनीयां जीवनें पांमणों दोहिलों ए,
जिण तिण नें नहि पांमणो सोहिलों ए।।

१०. तिणरों अधिपती हुवें छें घणों गुणवंत ए,
ते छ खंड रों राज निश्चें करंत ए।
एक सहंस आठ लखण हुवें ताहि ए,
इणां गुणां विना अधिपती इणरो न थाय ए।।

२. उसमें राज और लक्ष्मी के चिह्न अंकित हैं। अर्जुन स्वर्ण से वह ढका हुआ है। छत्र के पीछे का भाग उज्ज्वल पंडुर-श्वेत है।

३. तपनीय रक्त स्वर्ण के उसके चारों ओर पाटिए लगे हुए हैं। वे अत्यंत श्री एवं शोभायुक्त हैं। दर्शक का मन हर्षित हो जाता है।

४,५. उसका रूप पूनम के चंद्र मंडल के समान है। नरेंद्र की भुजा के प्रमाण वह लंबा-चौड़ा है। उसका सहज स्वभाव निरंतर एक जैसा है। जब वह विस्तृत होता है अनेक योजन प्रमाण फैल जाता है। वनखंड में जैसे चंद्रविकासी धवल कमल सुशोभित होता है वैसे ही छत्ररत्न भरत राजा का चलता हुआ विमान जैसा प्रतीत होता है।

६. सूर्य के आतप, आंधी तथा वर्षा- इन तीनों दोषों को नष्ट कर दे ऐसा छत्ररत्न सुखकारी है। वह सेना की सुरक्षा करता है।

७. पूर्व में विशिष्ट तप किया उससे इस निधान की प्राप्ति हुई। यह बहुत सारे अखंडित गुणों का प्रदाता है तथा दुखों को दूर करने वाला है।

८. यह छहों ऋतुओं के सुख का प्रदाता है। इससे दुःख दूर हो जाते हैं। इस छत्र की छाया भी अत्यंत सुखकर है। इससे सब रोग-शोक का विलय हो जाता है।

९. यह छत्ररत्न अति विशिष्ट है। गुणोपपेत उन्मान से सुशोभित है। जिस किसी पुण्यहीन व्यक्ति को यह नहीं मिल सकता।

१०. उसका अधिपति बहुत गुणी होता है। वह निश्चय ही छह खंड का राज्य करता है। जिसके एक हजार आठ शुभ लक्षण होते हैं, वही इसका अधिपति बन सकता है।

११. पूर्व भव तप गुण तणें परताप ए,
एहवो छत्र रत्न पाया भरतजी आप ए।
ए रत्न चक्रवत विना सर्वनें दोहिलों ए,
विमांणवासी देव नें पिण नही सोहिलो ए।।

१२. तिणरें लहक रही घणी फूलां री माल ए, चंद्रमा सरीखों प्रकास उजवाल ए।
तिणरें अधिष्टायक छें सहंस देवता ए, ते पिण छत्र रत्न नें सेवता ए।।

१३. धरणी तलें जांणें ऊगों छें चंद ए, तिण दीठां पांमें सर्व जीव आणंद ए।
इसडों छें छत्र रत्न निधांन ए, तिणमें गुण घणा अद्भूत असमांन ए।।

१४. एहवों छत्र रतन गुण खांण ए,
तिणरें भरतजी हाथ लगावत प्रांण ए।
जब विसतरयों जाझेरो जोजन बार ए,
ते सिघर ततकाल तिरछों तिणवार ए।।

१५. तिण छतर नें स्वमेव भरत जी आप ए, सर्व सेन्या ऊपर छत्र दीयों थाप ए।
वळे मणीरत्न लीयों हाथ मझार ए, छत्र दंड रे मध्य मूक्यों तिणवार ए।।

१६. तिण मणीरत्न तणों अतंत उद्योत ए, घणी लाग रही छें झिगामिग जोत ए।
तिण जोत नसाड दीयो अंधकार ए, जाझेरो बारें जोजन विसतार ए।।

१७. जब गाथापती रत्न परधांन निधांन ए, धांनादिक नीपजावणनें सावधांन ए।
तिणरों रूप घणों छें अतंत अनुप ए, तिण रत्न रों अधिपती भरतजी भूप ए।।

१८. जिहां चर्म रत्न विस्तारयों राजांन ए, तिण उपर वायो गाथापती धांन ए।
साल जव गोहूं मुंग नें माष ए, तिल नें कुलथ चिणादिक साख ए।।

१९. इत्यादिक धांन अनेक प्रकार ए,
त्यांरों जूओं छें घणों विसतार ए।
वळे कंद आदादिक तेहनी जात ए,
वळे आंबा नें आंबली प्रसिध विख्यात ए।।

११. पूर्व भव के तपोगुणों के प्रभाव से भरतजी ने ऐसा रत्न पाया। चक्रवर्ती के अतिरिक्त यह सबके लिए दुर्लभ है। विमानवासी देवताओं को भी यह सुलभ नहीं है।

१२. इसके चारों ओर फूलों की मालाएं लहरा रही हैं। चंद्रमा सरीखा इसका उज्ज्वल प्रकाश है। एक हजार देवता इसके अधिष्ठायक वे छत्र रत्न की सेवा करते हैं।

१३. ऐसा लगता है जैसे धरती पर चांद ऊग आया है। देखने मात्र से सब जीव आनंदित होते हैं। छत्र रत्न ऐसा अद्‌भुत और अतुल्य गुणों का निधान है।

१४. ऐसे गुणरत्नों की खान छत्ररत्न भरतजी के हाथ लगाते ही तत्काल बारह योजन से किंचित् अधिक तिरछा फैल गया।

१५. भरतजी ने स्वयं सारी सेना पर छत्र स्थापित कर दिया। मणिरत्न को हाथ में लेकर छत्र दंड के मध्य भाग में रख दिया।

१६. मणिरत्न के अत्यंत उद्योत से जगमग ज्योति जगने लगी। उसने बारह योजन से भी कुछ अधिक दूर तक के अंधकार को दूर भगा दिया।

१७. उसके बाद गाथापतिरत्न अन्न पैदा करने के लिए उद्यत हुआ। उस रत्न का रूप भी अत्यंत अनुपम है। भरतजी उसके अधिपति हैं।

१८-२१. राजा ने जहां तक चर्मरत्न का विस्तार किया गाथापति ने उस पर शाल, जौ, गेहूं, मूंग, माष, तिल, कुलथ, चना आदि अनेक प्रकार के अलग-अलग नाम वाले अनाज बो दिए।

वह छहों ऋतुओं में आर्द्रक आदि कंद, तरोई, तुंबा आदि अनेक प्रकार की हरी साग-सब्जी, आम-आमली आदि रसदार फल तथा अनेक जाति के विशिष्ट फूल आदि पैदा करने में भी सक्षम है।

२०. हरी तरकारी नी जात अनेक ए, घणी जातरा फल नें फूल विशेख ए।
तोरी तूंबादिक अनेक रसाल ए, जे छहू रित में नीपजें सदा काल ए।।

२१. पत्र साकादिक अनेक रसाल ए,
ते पिण नीपजें छहूं रितु काल ए।
इत्यादिक अनेक रसाल वखांण ए,
त्यांनें नीपजावण हों छें चुतर सुजांण ए।।

२२. एहवों गाथापती रत्न श्रीकार ए,
तिणरें आधिष्टायक देवता एक हजार ए।
तिणरा मनोगत चिंतव्या करें छें काज ए,
धानादिक नीपजावें जब तेहनों साज ए।।

२३. ज्यांरे देवता कंकर जेम हजूर ए,
तिण पुन पाछिल भव संचीया पूर ए।
तिणरा गुण छें प्रसिध लोक विख्यात ए,
तिणरी देवता पिण नही लोंपें छें वात ए।।

२४. दिवस वावें छें धांनादिक सर्व रसाल ए,
तिण हीज दिन लुणें ततकाल ए।
ऊगा नें आथमीयां विचें नीपजावें धांन ए,
इसडों छें गाथापती रत्न निधांन ए।।

२५. रूपा में कलस अनेक हजार ए, ते पिण करदें ततकाल में त्यार ए।
त्यांनें भर भर धांनादिक सूं अति पूर ए, ते आंण म्हेंलें नित भरत हजूर ए।

२६. गाथापती नीपजावें ते सर्व रसाल ए,
ते सर्व सेन्या नें पोंहचावें काल रा काल ए।
उणार्थ रहें नही किणरेंइ काय ए,
सर्व सेन्या त्रिपती रहें ताहि ए।।

२२. ऐसे श्रीकार गाथापतिरत्न के एक हजार देवता अधिष्ठायक हैं। वे धान्य आदि निपजाने में सहयोग करते हैं। मनोगत चिंतित कार्य करते हैं।

२३. देवता नौकर की तरह उसके सामने प्रस्तुत रहते हैं। उसने पिछले भव में प्रबल पुण्यों का संचय किया था। उसके गुण लोक विख्यात हैं। देवता भी उसकी बात का उल्लंघन नहीं करते।

२४. वह प्रातः धान्य आदि सर्व रसाल को बोता है और उसी दिन फसल को काट लेता है। सूर्य के ऊगने और अस्त होने के बीच धान्य निष्पन्न हो जाता है ऐसा गाथापति रत्न हैं।

२५. वह हजारों चांदी के कलशों को भी तत्काल तैयार कर देता है। उन्हें धान्य आदि से भर-भरकर भरतजी के सामने प्रस्तुत कर देता है।

२६. वह जो रसाल पैदा करता है उसे तत्काल यथासमय सारी सेना तक पहुंचा देता है। किसी के भी कोई कमी नहीं रहती। सारी सेना तृप्त हो जाती है।

२७. तिण अवसर सेन्या नें भरत राजांन ए, त्यांरे नीचें छें चर्म रत्न निधांन ए।
उपर छें छतर रत्न त्यारिं तास ए, मणीरत्न तणों होय रह्यों प्रकास ए।।

२८. सुखे सुखे इण रीतें काढ्या दिन सात ए,
भूख पिण किणही न काढी अंस मात ए।
दीनपणों नें भय पांमीया नांहि ए,
दुख पिण किण ही न पांम्यों मन मांहि ए।।

२९. एहवो पुन तणो छें प्रताप ए, त्यांनें पिण जांणें छें भरतजी विलाप ए।
ज्यांनें पिण छोड देसी ततकाल ए, मोख जासी सुध संजम पाल ए।।

◆

२७. इस अवसर पर भरतजी और उनकी सारी सेना चर्मरत्न के ऊपर तथा छत्ररत्न के नीचे है। मणिरत्न का प्रकाश हो रहा है।

२८. इस प्रकार सात दिन आराम से व्यतीत हो गए। कोई अंशमात्र भी भूखा नहीं रहा। किसी ने दीनता तथा भय का अनुभव नहीं किया। न किसी ने मन में कष्ट का अनुभव किया।

२९. यह सब प्रताप पुण्य का है। भरतजी इसे भी अनित्य जानते हैं। इन्हें भी त्यागकर शुद्ध संयम का पालन कर मोक्ष में जाएंगे।

◆

दुहा

१. भरत नरिंद तिण अवसरें, सात दिवस पूरा हुआं तांम।
जब अधवसाय मन ऊपनों, वळे इसरा वरत्या परिणांम।।

२. ओं कुण छें अपथ पथियों, लज्या लिखमी करनें रहीत।
तिण म्हारी सेन्या कटक उपरें, विरखा करें छें कुरीत।।

३. मूसलधारा पांणी पडें, विरखा करें छें अपार।
ते भाव भरतजी रा देवता, जांण लीया तिणवार।।

४. इम जांणे ततकाल त्यारी हूआं, देवता सोंलें हजार।
आवध ठांमों ठांम बांधनें, सस्त्र लीधा हाथ मझार।।

५. जिहां मेघ माली छें देवता, तिण ठांमें आया ततकाल।
मेघमाली देवतां भणी, करला वचन बोल्यों विकराल।।

ढाळ : ४०

(लय : चउपइ नीं)

१. अरे मेघ मुखीया थें नागकुमार, अपथ पथिया थे मूंढ गिवार।
अकाले मरण रा वंछण हार, थांमें लज्या न दीसें मूल लिगार।।

२. किसू रे तुम्हे नही जांणों छो आंम, अें भरत खेतर रा अधिपती सांम।
चाउरंत चक्रवत भरत राजांन, छ खंड रों इंद्र मोटो रिधवांन।।

३. म्हें सोलें सहंस छां सेवग देव, म्हे तेहनी सेव करां नितमेव।
एहवों भरत नरिंद राजंद, जांणें पुनम केरो चंद।।

दोहे

१,२. सात दिन पूरे होने पर भरतजी के मन में ऐसा अध्यवसाय पैदा हुआ तथा ऐसे परिणाम बरते कि यह कौन अपथ्य प्रार्थित एवं लज्जा-लक्ष्मी विहीन व्यक्ति है जिसने मेरी सेना पर बेमौसम की वर्षा की।

३. मूसलधारा पानी की अपार वर्षा का भरतजी का भाव देवताओं ने जान लिया।

४-५. यह जानकर तत्काल सोलह हजार देवता अपने शरीर पर यथास्थान आयुध बांधकर तथा हाथ में शस्त्र लेकर तत्पर हो गए। वे मेघमाली देवता के पास आए और उसे इस प्रकार कटु-विकराल वचन बोले।

ढाळ : ४०

१. अरे नागकुमार-प्रमुख मेघमाली देवता! तुम अपथ्य प्रार्थित, मूढ़, अनाड़ी, अकाल मृत्यु के आकांक्षी एवं निर्लज्ज हो।

२. क्या तुम नहीं जानते यहां भरतक्षेत्र का अधिपति, चतुरंग चक्रवर्ती छह खंड का स्वामी, महाऋद्धिमान् भरत राजा है।

३. भरत नरेंद्र पूनम के चांद के समान है। हम सोलह हजार देवता प्रतिदिन उसकी सेवा करते हैं।

४. त्यांनें देव दाणव वंतर नी जात, च्यारूइ जात रा देव विख्यात।
ते भरत नरिंद राजंद नें सोय, उपद्रव्य करे न सकें कोय।।

५. तो पिण तुम्हे इण ठांमें आय, जिहां सेन्या सहीत भरतेसर राय।
त्यांरा कटक उपर थें मूसलधार, विरखा आंण कीधी इणवार।।

६. पांणी वरसायो थे मूसलधार, सात दिवस लगतों इणवार।
अजेस थारों ओहीज ध्यांन, थांरी भिष्ट हुइ छें अकल गिनांन।।

७. थे कीधों घणों छें दुष्ट अकाज, तिणसूं लाज सर्म थारी जासी आज।
कैंतों अजे सांवटलों मेह, नही तर किया पावोला एह।।

८. केंतों सावटलों तुरत सताब, राखी चावो जो इजत आब।
जेझ करोला सेंहल गिणंत, तो जीतव्य नो आयो दीसें अंत।।

९. इम सुणने मेघमुख नागकुमार, अतंत भय पांम्यों तिणवार।
त्रास घणी पांमी तिण ठांम, जांण्यों इसडों कदेय करां नही कांम।।

१०. भय भ्रांत हुआ त्यां सांहमों न्हाल, वर्षा संवट लीधी ततकाल।
डरता न्हास गया छें तास, आपात चिलात रे आया पास।।

११. आपात चिलात नें कहें छें आंम, ओ भरत नरिंद छ खंड रो सांम।
ओ चक्रवत छें मोटों राजंद, जांणें पुनम केरो चंद।।

१२. च्यारूइ जातरा देवतां माहि, इणनें भगावण समर्थ नांहि।
वळे भरत नरिंद राजंद नें सोय, उपद्रव्य करे न सकें कोय।।

१३. म्हें पिण तुमाहरी पीत नें काज, उपसर्ग करे गमाइ लाज।
तिणनें उपशर्ग दुख न हूवों लिगार, म्हें पिण न्हास आया इण वार।।

४. देव, दानव, व्यंतर, गंधर्व चारों प्रकार के देवता भरत नरेंद्र पर कोई उपद्रव नहीं कर सकते।

५,६. फिर भी तुमने यहां आकर अभी भरतेश्वर की सेना पर त्रर्षा की। सात दिन तक लगातार मूसलधार पानी बरसाया। अभी भी तुम्हारा वही ध्यान है। क्या तुम्हारी अक्ल, ज्ञान-बुद्धि भ्रष्ट हो गई है।

७. तुमने बहुत दुष्ट कार्य किया है। आज तुम्हारी लाज-शर्म मिट जाएगी। या तो अभी वर्षा को समेट लो या फिर अपने किए का फल पाओगे।

८. यदि अपनी इज्जत-आबरू कायम रखना चाहते हो तो तत्काल इस माया को समेट लो। यदि तुम इसे सुगम मानकर विलंब करोगे तो तुम्हारे जीवन का अंत आ गया लगता है।

९. यह सुनकर मेघमुख-नागकुमार देवता अत्यंत भयभीत हुआ। अत्यन्त त्रस्त होकर बोला- हमने जान लिया है। अब आगे हम ऐसा काम कभी नहीं करेंगे।

१०. उनके सामने देखकर भयभ्रांत होकर तत्काल वर्षा को समेट लिया और डरता हुआ वहां से भागकर आपात चिलाती के पास आए।

११. आपात चिलातियों से कहा- भरत नरेंद्र छह खंड का स्वामी है। राजेंद्र है, चक्रवर्ती है, पूनम के चंद्रमा जैसा है।

१२. चारों ही प्रकार के देव भरत राजा को भगाने में असमर्थ हैं। इसे उपद्रव भी नहीं कर सकते। यह बहुत बड़ा नरेंद्र-राजेंद्र है।

१३. हम तुम्हारी प्रीति के कारण इसे उपसर्ग देकर लज्जित हुए। उसे कोई उपसर्ग-दु:ख नहीं हुआ। हम ही भागकर आए हैं।

१४. तिणसूं वेगा जावो जिहां भरत राजांन, त्यांरे पगे पडों छोडे अभिमांन।
जीवा वचण रो ओहीज उपाय, ओंर तों कारी न लागें काय।।

१५. तिण कारण सिनांन करे सुध थाय, बलिकर्म करो सताब सूं जाय।
दुस्वपना निवारण काज, प्रायछित मंगलीक करनें आज।।

१६. भीना वस्त्र पहरों ततकाल, त्यांरा छेहडा नीचा राल।
नीचों मुख धरती सांहमों न्हाल, वळे भारी भेटणों रत्न रसाल।।

१७. एहवों भेटणो मोटो लेइ साथ, वळे दोनूंइ जोडे हाथ।
त्यारें पगां भेटणों मेलों जाय, पछें भरत नरिंद रे लागों पाय।।

१८. उत्तम पुरष भरतेसर राय, तेहीज थांनें सरणागति थाय।
त्यांकनें जातां भय म करों लिगार, थांनें भरत होसी हितकार।।

१९. इम कहें देवतां वारूंवार, यांनें सीख दीधी छें घणी हितकार।
इम कहे देवता गया ठिकांण, यां पिण वचन कीयों परमांण।।

२०. ते सगलाइ राजा नमसी आय, भरत रा पुन तणें पसाय।
त्यांमें पिण नही राचें माहाराय, दिख्या ले जासी मुगत रे माहि।।

◆

१४. अतः तुम लोग भी अभिमान छोड़कर भरत राजा के पास जाकर उसके पैरों में पड़ो। जीवन को बचाने का यही उपाय है, और कोई उपाय नहीं है।

१५-१७. इसलिए तत्काल स्नान कर शुचि होकर वलिकर्म-तिलक छापे कर, इस दुःस्वप्न के निवारण के लिए प्रायश्चित्त के रूप में मांगलिक कर गीले वस्त्र पहनकर, वस्त्रों के किनारों को नीचा रखते हुए, अधोमुख धरती की ओर देखते हुए, भारी रत्नों का उपहार लेकर, दोनों हाथ जोड़कर भरत नरेंद्र के चरणों में उसे उपहृत करते हुए उसके पैरों में पड़ो।

१८. पुरुषोत्तम भरतेश्वर ही तुम्हें शरण दे सकेगा। तुम उसके सामने जाते हुए किंचित् भी भय मत करो। भरत ही तुम्हारे लिए कल्याणकारी होगा।

१९. इस प्रकार देवता इन्हें बारंबार हित-शिक्षा देकर अपने स्थान पर गए। आपात चिलातियों ने भी उसे स्वीकार किया।

२०. भरत के पुण्य के प्रसाद से सारे ही प्रणत होंगे। पर भरतजी इनमें रक्त नहीं होंगे। वे तो दीक्षा लेकर मुक्ति में जाएंगे।

◆

दुहा

१. मेघमाली देवता गयां पछें, उठी नें ऊभो थाय।
सिनांन करे बलीकरम कीया, मंगलीक कीया छें ताहि।।

२. भीना वसतर पेंहरनें, त्यांरा नीचा छेंहड़ा राल।
नीचों मुख राख्यों दिष्ट धरतीयें, देवां कह्यों ते वचन रसाल।।

३. बहु मोला भारी भारी रतन रो, भेटणों लीधों ताहि।
जिहां भरत नरिंद राजंद छें, सगला आण ऊभा छें आय।।

४. अंजली जोड कीधी तिहां, दोनूं मस्तक हाथ चढाय।
जय विजय करेनें वधावता, विडदावलीयां अनेक बोलाय।।

५. बहु मोला रत्नां रो भेटणों, मेल्यों भरत जी रे पाय।
हिवें गुण कीरत किण विध करें, ते सुणजों चित्त ल्याय।।

ढाळ : ४१

(लय : राजंद हो हो वात सुणो नारी तणी)

थे भला पधारया इण देस में।।

१. वसुधरा छखंड प्रथवी तणा, थे गुणधर छों गुणवंत। राजंद।
जयवंत छों वेंरी जीतनें, लज्या लिखमी धीरज कर संत। रा०।

२. ते कीरत धारक नरिंद छों, हजारां गमें लखण सहीत। रा०।
थे राज घणा काल पालजों, सुखे समाधे रूडी रीत। रा०।।

३. थे हयपती गयपती नरपती, नव निधांनपती छों तांम। रा०।
भरत क्षेतर रा प्रथमपती, बत्तीस सहंस देस ना सांम। रा०।।

दोहा

१-३. मेघमाली देवता के चले जाने पर वे उठकर खड़े हुए। स्नान कर वलिकर्म, मांगलिक किया। भीने वस्त्र पहनकर उनके किनारों को नीचे रखकर अधोमुख होकर धरती पर दृष्टि गड़ाकर जैसा देवताओं ने कहा था बहुमूल्य रत्नों का उपहार लेकर जहां भरत नरेंद्र थे वहां आए।

४,५. अंजली जोड़कर उसे मस्तक पर टिका कर जय-विजय शब्दों से वर्धापित-प्रशंसित करते हुए, अमूल्य रत्नों का उपहार लेकर जहां भरतजी बैठे थे उनके सामने रखकर, उनके पैरों में गिरकर किस तरह गुणगान करते हैं, इसे चित्त लगाकर सुनें।

ढाळ : ४१

आप इस देश में भले पधारे।

१. छह खंड वाली रत्नगर्भा पृथ्वी के आप गुणवान् गणधर हैं। वैरियों को जीतने से जयवंत हैं। लज्जा, लक्ष्मी, धैर्य से आप संत हैं।

२. आप कीर्तिधर नरेंद्र हैं, सहस्रों शुभ लक्षणों सहित हैं। आप चिरकाल तक सुचारु रूप से सुख-समाधिपूर्वक राज्य करें।।

३. आप हाथी, घोड़े, मनुष्य आदि नौ निधानों के स्वामी हैं। भरतक्षेत्र के बत्तीस हजार देशों के प्रथमपति हैं।

४. चिरंजीवी घणा काल जीवजों, प्रथम नरेसर छों तांम। रा०।
सहंसागमे महिला तणा, प्रांण वल्लभ छों सांम। रा०।।

५. थे इसर चवदें रतनां तणा, थांरों जस फेंल्यों सगलें अतंत। रा०।
तीन दिस धरती समुद लगें, उत्तर दिश पर्वत हेमवंत। रा०।।

६. थे सर्व भरत खेतर तणा, अधिपती मोटा राजांन। रा०।
म्हें छां तुमहारा देसना, सेवग छां वसवांन। रा०।।

७. थे छों म्हारा अधिपती, म्हें छा तुम्हारी रेंत। रा०।
म्हे किंकर भूत छां आपरा, थे म्हांरा सिर धणी म्हेंत। रा०।।

८. इचर्य कारणी छें तुम्ह तणी, रिध जोत क्रांत अदभूत। रा०।
जस कीरत इचर्य कारणी, इचर्य कारी तुमारा सूत। रा०।।

९. बल वीर्य तुम्हारों देखनें, म्हें हुआ घणा भयभ्रांत। रा०।
पुरषाकार प्राराक्रम तुम तणों, तुरत करें दुसमण री घात। रा०।।

१०. जोत क्रांति तुम्हारी देवतां जिसी, देवनी परें छें तुम भाग। रा०।
लाधी पांमी रिध सनमुख हुइ, तिणरों कहितां न आवें थाग। रा०।।

११. पिण म्हे अपराधी छां आपरा, म्हें कीयों घणों अपराध। रा०।
म्हें सांहमा मंडीया आप थी, तिणसूं हुइ छें म्हारें असमाध। रा०।।

१२. आप पधारया इण देस में, जो म्हें पगां लागता सताब। रा०।
जो म्हे सांहमां न मंडता आपथी, तो म्हें क्यांनें पडावता आब। रा०।।

१३. म्हें ऊंधी करेय विचारणा, म्हें कीयों थांसूं संग्राम। रा०।
तों म्हें वड वडा जोध मरावीयों, म्हें यूंही पराइ मांम। रा०।।

१४. म्हें आपनें कांनां सुणीया नही, गुण पिण नही सुणीया लिगार। रा०।
तिणसूं अविनों कीयों म्हें आपरों, म्हे मूल न कीयों विचार। रा०।।

४. आप हजारों महिलाओं के प्राणवल्लभ हैं, प्रथम नरेश्वर हैं। आप दीर्घ काल तक चिरंजीवी रहें।

५. आप चौदह रत्नों के स्वामी हैं। आपका यश तीन दिशाओं में धरती से समुद्रपर्यंत एवं उत्तर में हेमवंत पर्वत तक सब जगह फैला हुआ है।

६,७. आप भरतक्षेत्र के महान् अधिपति हैं। हम आपके वशवर्ती नागरिक सेवक हैं। आप हमारे अधिपति हैं, हम आपकी प्रजा हैं। हम आपके किंकर हैं। आप हमारे शिरोधार्य मुखिया हैं।

८,९. आपकी ऋद्धि, ज्योति, यश, कीर्ति अद्‌भुत आश्चर्यकारक है। आपका बलवीर्य, पौरुष, पराक्रम शत्रुओं का विनाशकारी है। हम उसे देखकर भयभ्रांत हुए।

१०. आपकी ज्योति, कांति, भाग्य, देवोपम है। आपने जितनी ऋद्धि प्राप्त की वह अकथनीय है।

११. पर हम आपके अपराधी हैं। हमने बहुत अपराध किया। हमने आपका सामना किया। उसी से हम अशांत हुए हैं।

१२. आप इस देश में पधारे। अच्छा होता हम तत्काल आपके पैरों में गिरते। यदि हम आपका सामना नहीं करते तो हमारी इज्जत क्यों जाती?।

१३. हमने उलटा सोचकर आपसे युद्ध किया। हमारे महारथी मारे गए। हम व्यर्थ ही बेइज्जत हुए।

१४. हमने कभी आपको तथा आपके गुणों को अपने कानों से नहीं सुना। उससे हमने आपका अविनय किया। किंचित् भी विचार नहीं किया।

१५. म्हे अपराध कीयों तकों, ते खमजों म्हारों अपराध। रा०।
आप निजर करों म्हां उपरें, तों म्हांनें हुवें परम समाध। रा०।।

१६. वळे इसडों अकार्य म्हें करां नही, जीवांजांलग इण भव माहि। रा०।
हाथ जोडी पगां पड्या, मस्तक नीचों नमाय। रा०।।

१७. म्हें सरणें आया छां आपरें, म्हांनें आप तणों छें आधार। रा०।
म्हें किंकर छां आपरें, इम कहिवा लागा वारूंवार। रा०।।

१८. जब भरत राजा तिण अवसरें, आपात चिलात रों ताहि। रा०।
भारी भेटणों आंण्यो तकों, लीधो भरतेसर राय। रा०।।

१९. वळे आपात चिलात नें, कहें भरत माहाराय। रा०।
जावो तुम्हे देवाणुपीया, वसों हमारी बांह छाय। रा०।।

२०. सुखे सुखे वसों निरभय थका, थांनें भय नही किणरों लिगार। रा०।
इम कहे भरत राजा तेहनें, घणों दीयों सतकार। रा०।।

२१. वसत्रादिक सुं सतकार नें, दीयों सनमांन ते बहुमांन। रा०।
सतकार सनमांन देइ तेहनें, सीख दीधी भरत राजांन। रा०।।

२२. त्यांनें आंण मनाय सेवग कीया, ते पिण जांणें छें माया फोक। रा०।
वेराग आंणनें छोडसी, करणी कर जासी पाधरा मोख। रा०।।

◆

१५. हमने जो अपराध किया उसे आप क्षमा करें। आप हम पर ठंडी नजर करें जिससे हमें परम शांति मिले।

१६. इस भव में हम जीवन ऐसा अकार्य नहीं करेंगे। हम हाथ जोड़कर नतमस्तक होकर आपके पैरों में पड़ते हैं।

१७. हम आपके शरणागत हैं। हमें आपका ही आधार है। हम आपके किंकर हैं– यों बार-बार कहने लगे।

१८. तब भरत महाराज ने आपात चिलाती जो भारी उपहार लाए थे, उसे स्वीकार किया।

१९,२०. भरतजी ने उनसे कहा– जाओ देवानुप्रियों! तुम हमारी भुजा की छाया में निर्भय-सुखपूर्वक निवास करो। तुमको किसी का किंचित् भय नहीं है। यों कहकर भरतजी ने उनका पूरा सत्कार किया।

२१. वस्त्र आदि देकर सत्कार सम्मान-बहुमान किया। यों सत्कार-सम्मानपूर्वक भरतजी ने उन्हें विदा किया।

२२. उन्हें अपनी आज्ञा मनवाकर सेवक बना लिया। पर इसे माया और निरर्थ मानते हैं। वे वैराग्य प्राप्त कर इन्हें छोड़ साधना कर सीधे मोक्ष में जाएंगे।

◆

दुहा

१. आपात चिलात नें भगावीयों, सेनापती घोडें चढि ताहि।
तिण घोडा तणों वर्णव करूं, ते सुणजों चित्त ल्याय।।

२. कमला मेल अश्व रत्न, असी आंगुल ऊंचों प्रमांण।
नीनांणू आंगल मध्य परिध छें, एक सों आठ आंगुल लांबो जांण।।

३. ऊचों मस्तक आंगुल बत्तीस नों, च्यार आंगुल ऊचा छें कांन।
वीस आंगुल बाहा मस्तक हेठली, ते गोडा उपरली कही भगवांन।।

४. च्यार आंगुल प्रमांण गोडा जानुका, बाहा नें जंघा विच विचार।
सोंलें आंगुल जंघा गोडां हेठली, ऊची छें आंगुल च्यार।।

५. घष्ट पुसट सघलोइ अंग छें, सगलो अंग सुदराकार।
विसिष्ट पसथ रलीयांमणों, रूडा लखण गुणधार।।

६. जातवंत निरदोष छें, विनेंवंत छें आग्यानाकार।
वेत चर्म चाबखादिक, तिणरों कदे न खाधों परीहार।।

७. बेहूं पासें ऊंचों मध्य सांकड़ों, तिणरो दिढ घणों छें शरीर।
तेज प्राक्रम तिणरो अति घणों, घणों गाढों छें साहस धीर।।

ढाळ : ४२

(लय : आ अणुकंपा जिण आगन्यां में)

कमला मेल अश्वरतन अमोलक।।

१. चोकडों तपनीक तपाव्या सोवन में, वर प्रधांन कनक में रूडो पिलांण।
विचित्र प्रकारना रत्न में छें रासि, तिणसूं पलांण बांधें बेहूं पासें तांण।

दोहा

१. जिस घोड़े पर सवार होकर सेनापति ने आपात चिलातियों को भगाया, उस घोड़े का थोड़ा वर्णन करता हूं। उसे चित्त लगाकर सुनें।

२-५. वह कमलामेल (जिसके दोनों खड़े कान आपस में मिलते हों) अश्वरत्न अस्सी अंगुल प्रमाण ऊंचा, एक सौ आठ अंगुल लंबा है। मध्यभाग की परिधि निन्यानबे अंगुल, उन्नत मस्तक बत्तीस अंगुल, कान चार अंगुल, गर्दन बीस अंगुल (मस्तक से घुटने तक), घुटने चार अंगुल, घुटने के ऊपर सोलह अंगुल जंघा, चार अंगुल खुर है। इस प्रकार उसके समस्त अंग हृष्ट-पुष्ट सुंदराकार, प्रशस्त, मनोरम, विशिष्ट एवं सुलक्षण गुणों को धारण करने वाले हैं।

६. वह जातिवान्, निर्दोष, विनीत एवं आज्ञाकारी है। उसने कभी बेंत, चर्म-चाबुक का प्रहार नहीं खाया।

७. उसका शरीर दोनों पार्श्व में ऊंचा, मध्य में संकड़ा तथा अत्यंत सुदृढ़ है। उसका तेज, पराक्रम, साहस-धैर्य अत्यंत गाढ़ है।

ढाळ : ४२

कमलामेल अमूल्य अश्वरत्न है।

१. घोड़े की लगाम तथा पिलाण तप्त स्वर्ण के समान सुरम्य हैं। पिलाण के दोनों ओर विचित्र प्रकार की रत्नराशि बांधी हुई है।

२. पागडा सोवन में सोभ रह्या छें, ते कचन मणी रत्न में जडंत।
नाणा प्रकार नी जालीयां छें घंटा री, लघू गुघरीयां नी जाली अनेक लहकंत।।

३. वळे मोत्यां री जाल्यां करे पडिमंत छें, वळे मोत्यां री झूंबका लटकें अनेक।
ते सोभायमांन त्यांसूं सोभ रह्या छें, इण सरिखों अश्‍व वळे नही कोइ एक।।

४. करकेतन रत्न इंद्रनील रत्न, वळे मरकेतन मसारगल जांण।
च्यारू जातरा रत्न करे मुख तिणरों, रूडी रीत रचे कीयों सोभायमांन।।

५. वळे मांणक अनेक सूत सूं पोया, त्यांसूं पिण मुख सिणगार्‍यों ताहि।
वळे कनक रत्न पदम वर्ण शरीखों, तिणरो तिलक कीयों देवां करे चुतराय।।

६. ते वाहण सुरिंद्र जोग अनोपम, सिणगार्‍यों थकों सोभें अत ही सरूप।
उरहा परहा आभूषण चालें, जब देखणहार नें इधिकी चूंप।।

७. तिणरा नयण मिलें नही निद्रा करनें, कमल पत्र तणी परें सोभायमांन।
धणीनो कार्य करवा समर्थ पूरों, चंचल सरीर तिणरो परधांन।।

८. सदा सरीर ढांक्यों कंचण जडत वसत्र सूं, डंस मंस निमतें वळे सोभानें काजें।
तालवो जीभ तपाया सोना वर्णा छें, श्रीलिखमी रा अभिषेक मुखरे विराजे।।

९. खुरे धुरी रूडा चरण चचर पुटा छें, धरणी तलानें घणु हणतों २ चालें।
दोनूं चरण समकालें ऊपाडें, पगां सूं धरती खणनें खाडों नही घालें।।

१०. सिघ्र पणें चालें कमल नालिका ऊपर, पांणी उपर पिण सिघ्र चालें।
कमल पांणी नेश्रा विना प्राकम छें तिणरों, निज पोतारा बल प्राकम सूं हालें।।

११. जात माता री नें कुल पिता रों, ते दोनूं पक्षां करे निरमल पूरो।
रूप आकार छें सुंदर तिणरों, पसथ विसुध लखांणां करें रूडो।।

२. उसका रकाब कंचन मणिरत्न जटित स्वर्णमय है। उस पर नाना प्रकार की जालियां, घंटियां एवं लघु घुंघरियां लहरा रही हैं।

३. वे मोतियों की जालियों से परिमंडित हैं। उन पर मोतियों के गुच्छे लटक रहे हैं। इन सबसे सुशोभित वह घोड़ा अद्वितीय है।

४. उसका मुख करकेतन, इंद्रनील, मरकेतन तथा मसारगल इन चारों जातियों के रत्नों से सुघड़ रूप से सुशोभित है।

५. सूत से पिरोए हुए माणकों से उसका मुख श्रृंगारित है। पद्मवर्ण कनकरत्न से देवताओं द्वारा सुघड़ तिलक किया हुआ है।

६. सुरेंद्र की सवारी के योग्य वह वाहन अनुपम रूप से श्रृंगारित किया हुआ अत्यंत सुरूप दिखाई देता है। उसके आभूषण जब इधर-उधर हिलते हैं तो दर्शक के मन को मोह लेते हैं।

७. उसकी आंखें नींद में भी बंद नहीं होतीं। वे कमलपत्र की तरह सुशोभन हैं। उसका चंचल शरीर अपने स्वामी का कार्य करने में पूर्ण समर्थ है।

८. डंस-मंस से सुरक्षा तथा शोभा के लिए उसका शरीर सदा रत्नजटित वस्त्रों से ढका रहता है। उसका तलवा तथा जीभ तप्त स्वर्ण के वर्ण का है। मुंह पर श्रीलक्ष्मी का अभिषेक विराजमान् है।

९. उसके खुर सुंदर तथा चच्चर पुट चरण धरणी तल पर आघात करते हुए चलते हैं। वह दोनों पैर एक साथ उठाता है। पैरों से धरती का खनन एवं गड्ढा नहीं करता।

१०. वह कमलनाल एवं पानी पर शीघ्रता से चलता है। कमल-पानी की निश्रा के बिना अपने बल पराक्रम से चलता है।

११. माता की जाति और पिता का कुल, इन दोनों पक्षों से वह पूर्ण निर्मल है। उसका रूपाकार सुंदर है। प्रशस्त एवं विशुद्ध लक्षणों से वह श्रेष्ठ है।

१२. सुकल पिता पख आंण उपनों, ते मेधावी अतंत घणों बुधवांन।
दुष्ट बुध नही भदरीक सभावी, धणी कार्य करवानें घणो सावधांन।।

१३. वनीत घणों स्वामी दिष्ट कारी छें, तिणरी पातली सुखमाल छें रोमराय।
ते चिगटी अतंत घणी रोमराइ, छवी क्रांत अतंत रूडी छें ताहि।।

१४. देवता नो मन वाउ नो गमण, त्यांनें वेगें करी जीपें चाली जीपंत।
चपल घणों सीघ्रगांमी छें चलिवों, रखीसर नी परें छें खिमावंत।।

१५. सुसिष्य नी परे वनीत छें प्रतख्य, स्वांमी वंछत कार्य करेंतों आलस नांणें।
इसरों कमला मेल अश्व रत्न छें, भरत नरिंद रे मिलीयों पुन प्रमांणे।।

१६. पांणी अगन रेण कर्दम कादों, वालु सहीत रेत वळें नदी तट जांणों।
परवत टूंक विषम ठांम सारी, गिरी दरी आदि अनेक पिछांणो।।

१७. इत्यादिक भारी भारी विषम थांनक नें, उलंघतो संक न आंणें लिगार।
प्रेरणहारों थोडी संज्ञा करें तो, ततखिण तेहनें उतारें पार।।

१८. काले अवसर हींस करें छें, निद्रा नें आलस जीतों छें तांम।
वळे जीतों छें सीतापादिक नों परिसों, मल मात्रों करें देखी अवसर ठांम।।

१९. जातवंत माता पख पूरें उपनों, तिणरी सुगंध घणी छें घणइंद्री नास।
प्रधांन कमल ना फूल सरीखो, एहवा छें तिणरा सास निसास।।

२०. उतकष्टा सुभट उपर पडें अचिंत्यों, दंड पडें ज्यूं पडें संग्रांम।
अतंत खेद पांम्यों न करें आंसूपात, रक्त तालूओ दोष रहीत छें तांम।।

१२. शुक्ल पितृपक्ष की ओर से उत्पन्न होने के कारण वह अत्यंत मेधावी, बुद्धिमान एवं स्वामी का कार्य करने में सावधान है। वह दुर्बुद्धि नहीं अपितु भद्र स्वभाव वाला है।

१३. वह स्वामी की दृष्टि के अनुरूप कार्य करने वाला अत्यंत विनीत है। उसकी रोमराजि अत्यंत पतली, सुकुमार और स्निग्ध है। उसकी छवि, कांति भी मनोरम है।।

१४. वह देवता के मन एवं पवन की गति को भी अपनी गति भी पराजित कर देता है। ऋषीश्वर की तरह क्षमावान है।

१५. वह सुशिष्य की भांति साक्षात् सुविनीत है। भरत नरेंद्र को इस प्रकार का कमलामेल अश्व पुण्य के प्रमाण से प्राप्त हुआ है।

१६,१७. वह पानी, अग्नि, रेणु, कादा-कीचड़, धूल भरी राहों, नदी तट, पर्वत शिखर, गिरिकन्दराओं आदि अनेक भारी-भारी विषम स्थानां को लांघने में जरा भी हिचकिचाहट नहीं करता। चलाने वाला सवार उसे थोड़ा-सा इशारा करता है तो तत्काल वह उसे पार पहुंचा देता है।

१८. वह यथा अवसर ही हिनहिनाता है। उसने आलस्य, नींद तथा शीत-आतप आदि परीषहों को जीत लिया है। वह स्थान की मर्यादा को देखकर ही मल-मूत्र करता है।

१९. जातिवान् मातृपक्ष की ओर से उत्पन्न होने के कारण उसकी घ्राणेंद्रिय नासापुट अत्यंत सुगंधित है। उसके श्वासोच्छ्वास से कमल के फूल जैसी सुवास आती है।

२०. वह युद्धभूमि में सुदक्ष सुभट पर भी दंड की तरह अचानक प्रहार करता है। खेद-खिन्न होने पर भी अश्रुपात नहीं करता। उसका रक्ततालुआ निर्दोष है।

२१. सूआ नी परें नीलें वरण छें, सुकमाल कोमल काया छें तांम।
इसडों कमला मेलें अश्व रत्न छें, ते मन नें लागें छें घणों अभिरांम।।

२२. इत्यादि गुण अनेक छें तिणमें, ते सगलाइ पुरा कह्या नही जाय।
वळे गेंहणा नें आभूषण तिणरों, ते पिण पूरा न कह्या छें ताहि।।

२३. इसरी चीज अमोलक भरत खेतर में, चक्रवत विना ओर रें नही थाय।
अेंतों भरत नरिंद रे पुन प्रमांणें, अश्व रत्न उपनों छें आय।।

२४. सहंस देवता छें तिणरें अधिष्टायक, तिणरा सेवग जेम करें छें जतन।
ते त्यांरा नेंणां नें लागें घणों हितकारी, इसरों पुनवंत छें अश्व रतन।।

२५. एहवा अश्व रत्न में गिरधी न होसी, त्याग देसी मन वेंराग आंण।
सीहतणी परें संजम पालें, इण हीज भव माहे जासी निरवांण।।

◆

२१. तोते की तरह उसका वर्ण नीला है। काया अत्यंत सुकोमल है। ऐसा कमलामेल अश्वरत्न सबके मन को अभिराम लगता है।

२२. उसमें इतने गुण है कि उनका पूरा वर्णन असंभव है। उसके अलंकार और आभूषणों का भी पूरा वर्णन असंभव है।

२३. भरत क्षेत्र में ऐसी अमूल्य वस्तु चक्रवर्ती के बिना और किसी को उपलब्ध नहीं होती। भरत नरेंद्र के पुण्य के प्रमाण से ही ऐसा अश्वरत्न उत्पन्न हुआ है।

२४. हजार देवता सेवक की तरह उसकी सुरक्षा करते हैं। वह इतना पुण्यवान् अश्वरत्न है कि सबकी आंखों को हितकारी लगता है।

२५. भरतजी ऐसे अश्वरत्न में भी आसक्त नहीं होंगे। मन में वैराग्य को प्राप्त कर सिंह की तरह संयम का पालन कर इस भव में निर्वाण में पहुंचेंगे।

◆

दुहा

१. तिण कमला मेल अश्व ऊपरें, सेनापती हूवो असवार।
खडग रत्न तिण अवसरें, लीधो हाथ मझार।।

२. ते खडग रत्न छें केहवों, ते इचर्य चीज अनूप।
तिणरों जथातथ वरणव करूं, ते सुणजों धर चूंप।।

ढाळ : ४३

(लय : मुनीवर जीव दया वरत पालीए)

पुन तणा फल जोय।।

१. नीलो उतपल कमल ना दल सरीखों, सांवळे वर्ण खडग रतन।
सहंस देवता छें तिणरें अधिष्टायक, सेवग जिम करें तिणरा जतन। भरतेसर।

२. चंद्र मंडल सरीखों तेज छें तिणरो, सत्रू जननो विणासण हार।
कनक रत्न माहे दंड छें तिणरो, मुसट ग्रहिवानें हाथ मझार।
खडग रत्न अमोलक चीज।।

३. नवमालती ना फुल सरीखों, सुरभी गंध सुगंध छें तांम।
नाना प्रकार ना मणीरतन में, लता वेल आकार छें चित्रांम।।

४. भांत चित्रांम रत्न ना विविध प्रकारें, चित्रकारी घणा छें असमांन।
जांणें नीसाणें घसी घसी निरमल कीधों, तीखी धारा छें देंहदीपमांन।।

५. ते खडग रत्न खडगां में परधांन, लोक माहे अमोलक चीजों।
कोइ खडग रत्न इण सरीखों, भरत खेत्र में नही बीजों।।

दोहा

१. उस कमलामेल अश्वरत्न पर सेनापति सवार हुआ। उस अवसर पर उसने हाथ में खड्ग रत्न लिया।

२. वह खड्ग रत्न कितना आश्चर्यकारक एवं अनुपम है उसका मैं यथातथ्य वर्णन करता हूं उसे उत्साह से सुनें।

ढाळ : ४३

पुण्य के फल को देखों।

१. वह खड्गरत्न नीलोत्पल कमल-दल सरीखा श्यामल है। हजार देवता सेवक की तरह उसकी सुरक्षा करते हैं।

२. चंद्रमंडल सरीखा उसका तेज है। हाथ में पकड़ने के लिए उसका दंड कनक रत्नमय है। शत्रुओं का नाश करने वाला है। खड्गरत्न एक अमूल्य चीज है।

३. उसकी सुगंध नवमालती के फूलों की तरह सुरभित है। विविध प्रकार के मणिरत्नों से युक्त लता-बेल आदि के चित्र उसमें अंकित हैं।

४. भांति-भांति के रत्नों के चित्रों की अतुल्य चित्रकारी से संयुक्त है। ऐसा लगता है नीसाण पर घिस-घिसकर इसको निर्मल धारदार एवं चमकदार बनाया गया है।

५. वह खड्ग खड्गों में श्रेष्ठ तथा लोक में अमूल्य चीज है। भरतक्षेत्र में वह अद्वितीय है।

६. वंस वेणू वृक्ष श्रृंग भेंसादिक, हाडनें दांत विविध प्रकार।
लोह तथा वळे लोहनो दांडो, त्यांरों छें भेदणहार।।

७. वज्र हीरां री जात वर प्रधांन छें, त्यांरो पिण भेदणहार।
वळे दुभेद वस्तुनो भेदणहारो, कठें अटकें नही छें लिगार।।

८. वळे सर्व वसतु में अप्रतिहत छें, आमोघ सक्त खडग रत्न एह।
ते क्यां ही खलें नही मेल्यों हुंतों, तो किसूं कहिवों उदारीक देह।।

९. ते पचास आंगुल नो दीर्घ लांब पणें छें, सोलें अंगुल वसतीरण जांण।
अर्ध आंगुल रों जाड पणें छें, उतकष्टों खडग प्रमांण।।

१०. एहवों असी रत्न छे खडग अमोलक, नरपती हाथ मझार।
ते खडग भरत राजा रा पासा थी, सेनापती लीयों तिण वार।।

११. अश्व रत्न रे ऊपर चढीयों, सुसेण सेनापती तांम।
हाथ में लीधो छें खडग रत्न नें, करवा चाल्यो संग्रांम।।

१२. आपात चिलाती सु संग्रांम कीधो, हठाय दीया तिण वार।
त्यांनें पगां लगायनें सीख दीधी छें, ते लारें कह्यों विसतार।।

१३. एहवों खडग रत्न छें भरत नरिंद नें, तिणसूं पिण राचे नही राजांन।
तिणनें त्यागे वेंरागे संजम लेनें, जासी पांचमी गति परधांन।।

◆

६. वह वंश-वेणु, वृक्ष, महिषशृंग, हाड, दांत, लोह, लोहदंड आदि को भी भेद सकता है।

७. वह विशिष्ट जाति के वज्र हीरों को भी भेदने वाला है। दुर्भेद्य वस्तुओं को भेदने में भी वह तनिक भी नहीं अटकता।

८. वह खड्गरत्न सब वस्तुओं में अप्रतिहत, अमोध शक्ति वाला है। वह प्रहार करने पर किसी से स्खलित नहीं होता तब औदारिक शरीर की तो बात ही कहां रही?।

९. वह लंबाई में पचास अंगुल तथा सोलह अंगुल विस्तीर्ण है। उस उत्कृष्ट खड्ग की मोटाई आधे अंगुल प्रमाण है।

१०. ऐसा अमूल्य खड्गरत्न नरपति भरतजी के पास है। उस खड्गरत्न को उस समय भरत नरेंद्र से सेनापति सुषेण ने अपने हाथ में लिया।

११. सुषेण सेनापति अश्वरत्न पर सवार हुआ और हाथ में खड्गरत्न लेकर युद्ध करने के लिए चला।

१२. पूर्व में जैसा आपात चिलाती से संग्राम कर उन्हें हराकर नतमस्तक किया वह सारा वर्णन यहां जानना चाहिए।

१३. भरत राजा के पास ऐसा खड्गरत्न है। पर वे उसमें आसक्त नहीं हैं। वे उसका भी त्याग कर संयम लेकर मोक्ष में जाएंगे।

◆

दुहा

१. सीख देइ आपात चिलात नें, कहें सेनापती नें बोलाय।
जावो तुम्हे देवाणुपीया, सिंधू बारें बीजा खंड मांहि।।

२. सिधु नें पिछिम लवण विचें, वेताढ नें चूल हेमवंत वीच।
सगली ठांम आंण मनाय जों, सम विषम ऊंच नें नीच।।

३. सगलां नें आंण मनायनें, भेटणा लेले पगां लगाय।
भारी रत्नादि लेइनें तिहां थकी, म्हारी आग्या पाछी सूपे आय।।

४. सेनापती सुण तिमहीज कीयो, आगें खंड साध्यों तिमहीज जांण।
भेटणों ले पाछो आवीयों, आग्या पाछी सूंपी भरतजी नें आंण।।

५. चक्र रत्न वळें एकदा, आउधसाला थी नीकल्यों बार।
ऊंचो आकासे उतपत्यों, सहंस देवतां सहीत तिणवार।।

६. वाजंत्र अनेक वाजता थकां, इसाणं कुण में जाय।
चूल हेमवंत साहमों चालीयों, तिणनें देख्यों भरत महाराय।।

७. अें पिण लारे सेन्या ले नीकल्या, भरत राजा पिण तांम।
चूल हेमवंत सू दूरा नेरा नही, सेन्या उतारी तिण ठांम।।

ढाळ : ४४

(लय : नणदल बिंदली दे तथा मुनीवर वेंरागी)

राजंद वडभागी।

१. पछें पोषदसाला रें मांहि, सातमो तेलो कीयों छें राय हो।
चूल हेमवंत गिरी कुमार, तिण देव साझण तिणवार हो। राजंद।।

दोहा

१,२. भरतजी ने आपात चिलातियों को विदा कर सेनापति को बुलाकर कहा– देवानुप्रिय! तुम जाओ और अब सिंधु नदी के बाहर दूसरे खंड में पश्चिम में लवण समुद्र तक वैताढ्य और हिमचूल पर्वत के बीच सम-विषम, ऊंची–नीची सभी जगह मेरी आज्ञा स्वीकार करवाओ।

३. सबको आज्ञा स्वीकार करवाकर, भारी रत्न आदि का उपहार स्वीकार कर, उन्हें पदनामी बनाकर मेरी आज्ञा को प्रत्यर्पित करो।

४. सेनापति ने यह सुन पूर्वोक्त रूप से जैसा किया वैसा ही किया। आगे जैसे खंडों को साधकर उपहार लेकर वापस आया और भरतजी की आज्ञा को प्रत्यर्पित किया।

५. फिर एक बार चक्ररत्न सहस्र देवताओं सहित आयुधशाला से बाहर निकला, ऊंचा आकाश में ऊपर गया।

६. अनेक वाद्यंत्र बजते हुए वह ईशान कोण में चूल हेमवंत की ओर चला। भरतजी ने उसे देखा।

७. भरतजी भी सेना लेकर उसके पीछे–पीछे चले। चूल हेमवंत के नाति–निकट, नाति–दूर पड़ाव किया।

ढाळ : ४४

राजेन्द्र सौभाग्यशाली है।

१. चूल हेमवंत गिरिकुमार को साधने के लिए पौषधशाला में सातवां तेला किया।

२. तीन दिन पूरा हूआं ताहि, आय बेंठा अश्व रथ माहि हो।
अनेक वाजंत्र रह्या छें वाज, सीहनाद ज्यूं करता ओगाज हो।।

३. जिहां चूल हेमवंत छें तांम, भरत नरिंद आया तिण ठांम हो।
चूल हेमवंत सुं तिण वार, रथ सिर फरस्यों तीन वार हो।।

४. रथ ऊभों राख्यों तिण वार, मागध तीर्थ जिम विस्तार हो।
इषू बांण तिण ठांमें चलायों, बोहीत्तर जोजन गयों छें ताह्यो हो।।

५. बांण पडीयों त्यांरी मरजादा में देख, जब जाग्यों त्यांनें धेष विशेख हो।
बांण लीधो तिण हाथ मझार, नांम वाच कीयों निस्तार हो।।

६. जांण्यों उपनों भरत नरिंद, पांम्यों मन माहे इधिक आणंद हो।
मागध तीर्थ ज्यूं विस्तार, पीतदांन ल्यायो तिण वार हो।।

७. भेटणों ले जाऊं तास, भरत नरिंद रे पास हो।
सर्व ओषधी फूलादिक अनेक, वनसपती जात विशेख हो।।

८. ल्यायों चंदण गोसीसों तांम, वळे फूलां री माला अभिरांम हो।
पदमद्रहनों प्रांणी ल्यायों ताजों, राज अभीषेक करवा काजो हो।।

९. ओर गेंहणा ल्यायों तिण वार, मागध तीर्थ जिमविस्तार हो।
भेटणों आण मेल्यों छें तास, भरत नरिंद रे पास हो।।

१०. बेहूं हाथ जोडी सीस नांम, वळे करवा लागों गुणग्रांम हो।
थे भरत नरिंद राजांन, हूं थांरों छूं वसवांन हो।।

११. बेहूं हाथ जोडी कहें आंम, हूं सेवग थे मांहरा सांम हो।
हूं आप तणो कोटवाल, उत्तर दिस तणों रुखवाल हो।।

१२. हूं किंकर चाकर छूं तुम्हारों, रहूं छूं थांरां देस मझार हो।
मागध तीर्थ जिम सर्व जांणों, विनों कीधों छें मोटें मंडाणो हो।।

२,३. तीन दिन पूर्ण होने पर भरतजी अश्व रथ पर सवार हुए। अनेक वाद्यंत्र बजते हुए सिंहनाद ज्यों गर्जना करते हुए चूल हेमवंत पर्वत के निकट आकर रथ के सिर से तीन बार पर्वत का स्पर्श किया।

४. मागध तीर्थ के वर्णन की ही तरह वहां रथ को खड़ा कर बाण फेंका, जो बहोत्तर योजन दूर तक गया।

५-९. अपनी सीमा में बाण को पड़ा देखकर देव के मन में विशेष द्वेष जागा। बाण को हाथ में लेकर नाम पढ़कर निर्णय किया। भरतक्षेत्र में भरत नरेंद्र पैदा हुए हैं। वह मन में अत्यंत आनंदित हुआ। मागध तीर्थ के वर्णन की तरह ही चिंतन किया– मैं उपहार लेकर भरत नरेंद्र के पास जाऊं। तदनुसार सर्व प्रकार की औषधि, चंदन, गोशीर्ष, विभिन्न वनस्पति, फूल और सुंदर फूलमालाएं, राज्याभिषेक के लिए पद्म द्रह का ताजा पानी और पूर्वोक्त अनुसार आभूषण लेकर आया। उन्हें भरत नरेंद्र के सामने प्रस्तुत किया।

१०. दोनों हाथ जोड़कर नतमस्तक होकर गुणगान करने लगा– भरत नरेंद्र, मैं आपका वशवर्ती हूं। उत्तर दिशा का रखवाला-कोटपाल हूं।

११. आप मेरे स्वामी हैं मैं आपका सेवक हूं। मैं आपका उत्तर दिशा का रखवाला-कोटपाल हूं।

१२. मैं आपका किंकर हूं, चाकर हूं। आपके देश का नागरिक हूं। पूर्वोक्त मागध तीर्थ की तरह यहां भी उसने धूमधाम से विनय किया।

१३. जब देवता नें भरत राजांन, सीख दीधी सतकार सनमांन हो।
पछें घोडा ग्रह राख्या घेर, रथ नें पाछों दीयों फेर हो।।

१४. जिहां थी रिषभकुट तिहां आयों, तीन वार तिणरे रथ अरायो हो।
पछें रथ नें तिण ठांमें थाप, हाथे कांगणी रत्न लीयो आप हो।।

१५. रिषभकूट नें पूर्व दिस तांम, लिखीयों भरत जी आपरों नांम हो।
इण अवशर्पणी काल में ताहि, तीजा आरा ना तीजा भाग माहि हो।।

१६. हूं चक्रवत हूवों छूं आंम, भरत नरिंद म्हारों नांम हो।
हूं प्रथम चक्रवत पेंहलों राय, म्हें सर्व वेंरी जीता ताहि हो।।

१७. हूं भरत खेतर रों नरिंद, सगलां वस कर कीयों आणंद हो।
एहवों नांम लिखीनें राय, रथ पाछों वाल्यों छें ताहि हो।।

१८. जिहां विजय कटक तिहां आय, भोजन मंडप भोजन कीयों ताहि हो।
ते आगें कह्यों तिम कीयों सारो, जांण लेंणों विस्तार हो।।

१९. चूल हेमवंत देवकुमार, तिणनें आंण मनाय एकधार हो।
तिणरा महोछव कराया दिन आठ, आगे कीया ज्यूं कीया गहघाट हो।।

२०. चूल हेमवंत देवकुमार, तिणरा भरत जी थया सिरदार हो।
तिणनें पिण राचे नही कोय, संजम लेनें सिध होय हो।।

◆

१३. भरतजी ने देवताओं को सत्कार-सम्मान कर उन्हें विदा किया। घोड़ों को वापिस घेर कर रथ को मोड़ दिया।

१४. वहां से भरतजी ऋषभकूट पर आए और उससे तीन बार रथ को स्पर्श कराया। रथ को वहां रोक कर काकिनीरत्न अपने हाथ में लिया।

१५-१७. ऋषभकूट की पूर्व दिशि में भरतजी ने अपना नाम आलिखित किया। इस अवसर्पिणी काल में तीसरे आरे के तीसरे भाग में मैं चक्रवर्ती हुआ हूं। मेरा नाम भरत है। मैं इस कालचक्र का पहला चक्रवर्ती एवं पहला राजा हूं। मैंने सब शत्रुओं पर विजय प्राप्त करली है। मैं भरतक्षेत्र का स्वामी हूं। सबको अपने अधीन कर आनंदित हूं। ऐसा लिखकर रथ को वापिस मोड़ा।

१८. विजय कटक में आकर भोजन मंडप में भोजन किया। पूर्व में जैसा विस्तार किया गया है, यहां भी वैसा समझ लेना चाहिए।

१९. चूल हेमवंत देवकुमार को अपनी एकधार आज्ञा मनवाकर आठ दिनों तक पूर्वोक्त विधि के अनुसार धूमधाम से महोत्सव करवाया।

२०. भरतजी चूल हेमवंत देवकुमार के स्वामी हो गए, पर उसमें अनुरक्त नहीं हैं। संयम ग्रहण कर सिद्धत्व को प्राप्त करेंगे।

◆

दुहा

१. अठाइ महोछव पूरा हूआं, चक्ररत्न तिणवार।
आउधसाला थकी बारें नीकल्यों, ऊंचो गयों गगन मझार।।

२. दिखण दिस वेताढ साहमों चालीयों, तिण लारें हूआ भरत माहाराय।
वेताढ नें पासें उत्तर तणों, कटक उतास्यों ताहि।।

३. तिहां तेलों कीयों पोषधसाल में, नमी विनमी विद्याधर काज।
ध्यांन करे छें तेहनों, एकाग्र चित्त भरत महाराज।।

४. तीन दिन पूरा हूआं, नमी विनमी विद्याधर नांम।
त्यांनें देवता रें कहे थकें, ठीक पडी तिण ठांम।।

५. ते माहोमाहि एकठा मिली कहें, उपनों भरत खेत्तर रें माहि।
भरत नामें चक्रवत हूवों, तिणनें करां मिझमांनी जाय।।

६. जीत आचार छें आपां तणों, तीनोंइ काल मझार।
करें चक्रवत नें भेटणों, तिणसूं आपेइ चालों इणवार।।

७. आपे पिण भारी भेटणों, जाय मेलो भरत जी पाय।
जब विनमी राजा मन में चिंतवें, निज पूत्री सूपें त्यांनें जाय।।

ढाळ : ४५

(लय : थे तो छोड दो रूढ़ हीयारी रे, भवीयण)

अस्त्री रत्न अमोलक रूडी, ते पिण पुनवंती पूरी। भरत रे।।

१. विनमी नामें विद्याधर नी धूया, सुभद्रा नामें अस्त्री रत्न।
ते भरत नरिंद रा पुन प्रमांणें, मोटी कीधी छें घणें जत्न। भरत रे।

दोहा

१. आष्टाह्निक महोत्सव पूरा होने पर फिर चक्ररत्न आयुधशाला से निकलकर आकाश में ऊंचा आया।

२. वह दक्षिण दिशा में वैताढ्य पर्वत की ओर चला। भरतजी उसके पीछे-पीछे हो गए। वैताढ्य गिरि के उत्तर दिशा में अपनी सेना का पड़ाव किया।

३. वहां पौषधशाला में तेला कर नमी-विनमी विद्याधर के लिए एकाग्रचित्त से ध्यान करने लगे।

४. तीन दिन पूरे होने पर देवताओं के कहने से नमी-विनमी को इस बात का पता चला।

५. उन्होंने आपस में मिलकर कहा- भरतक्षेत्र में भरत नाम का चक्रवर्ती पैदा हुआ है। हम उसका आतिथ्य करें।

६. तीनों ही काल में हमारा यह जीत व्यवहार है कि चक्रवर्ती को उपहार प्रदान करें। इसलिए अपने को भी वहां चलना चाहिए।

७. हम भी विशिष्ट उपहार लेकर भरतजी के चरणों में प्रस्तुत करें। यह सोचकर विनमी राजा अपनी पुत्री उन्हें समर्पित करने के लिए चला।

ढाळ : ४५

स्त्री-रत्न अमूल्य, अत्यन्त पुण्यवती और रमणीय है।

१. विनमी विद्याधर ने बड़ी सुरक्षा से सुभद्रा नाम की अपनी स्त्रीरत्न पुत्री का भरतजी के पुण्य प्रमाण से पालन-पोषण किया।

२. ते ऊमांण प्रमांण माहे छें पूरी, तिणमें खोड नही छें लिगार।
एकसों आठ आंगुल प्रमांण जुगत छें, ते छें प्रमांणपेत श्रीकार।।

३. तेजवंत शरीर रूपवंत आकार, छत्रादिक लखण तिण मांहि।
अविनासी जोवन निरंतर तेहनों, केस नख कदे धवला न थाय।।

४. सर्व रोग तणी विणासणहारी, कर फरस्यां सर्व रोग जावें।
बल वीर्य नी वधारणहारी, तिण भोगवीयां बल नी विरध थावें।।

५. वंछत सीत उष्ण फरस छें तिणरों, छहुं रितु फरस मनोगन।
सीत रितें तिणरों फरस उसन, उसन रितें सीत लागें तन।।

६. तीनां ठांमां पातली छें रूडी, तीनां ठांमां छें रक्त अतंत।
वळे तीनो ठांम ऊंचा छें तिणरें, तीन ठांम गंभीर सोभंत।।

७. तीन ठांम छें काली अतंत, तीनां ठांमा स्वेत वखांण।
तीनां ठांमां छें आयतण लांबी, तीनां ठांमां छें पहली प्रमांण।।

८. समचोंरस संठांण सरीर समों छें, तिणरों रूप अनोपम भारी।
भरत क्षेतर री सर्व महिला में, इणसूं इधिकी नही नारी।।

९. सूंदर मनोहर थण छें तिणरा, मुख पुनम चंद समांण।
हाथ नें पाय नेत्र छें तिणरा, इचर्य कारी अनोपम जांण।।

१०. मस्तक ना केस नें श्रेण दांतां री, ते पिण घणों श्रीकार।
देखणहार नें रमणीक हिरदा माहे लागें, मनरी हरणहारी छें नार।।

११. सिणगार तणों आंगर घर वारू, मनोहर चारू छें वेस।
वळे चालवों बोलवों मिंत्रीचारा में, चुतराई घणी छें वशेस।।

२. वह एक सौ आठ अंगुल उन्मान-प्रमाणोपेत है। उसमें तनिक भी कमी नहीं है। वह श्रेयस्कारी है।

३. उसका शरीर तेजस्वी, आकार रूपवान, छत्र आदि लक्षणों से युक्त है। वह अक्षीण यौवना है। उसके केश नाखून कभी सफेद नहीं होते।

४. वह सब रोगों का विनाश करने वाली है। उसके हस्त-स्पर्श से ही रोग मिट जाते हैं। वह बल-वीर्य को बढ़ाने वाली है। उसके संभोग से बल की वृद्धि होती है।

५. उसका स्पर्श समशीतोष्ण तथा छहों ही ऋतुओं में मनोगत है। सर्दी में उसका स्पर्श उष्ण तथा गर्मी में शीतल होता है।

६,७. उसके शरीर के तीन स्थान पतले, तीन स्थान रक्तिम, तीन स्थान उन्नत, तीन स्थान गंभीर, तीन स्थान कृष्ण, तीन स्थान श्वेत, तीन स्थान लम्बे-आयत तथा तीन स्थान चौड़े हैं।

८. उसके शरीर का संस्थान समचतुरस्र तथा रूप अनुपम है। भरतक्षेत्र की महिलाओं में वह सर्वसुंदरी है।

९. उसके स्तन सुंदर एवं मनोहर हैं। मुख पूनम के चांद के समान है। हाथ-पैर, नेत्र अनुपम और आश्चर्यकारी है।

१०. मस्तक के केश तथा दांतों की पंक्ति भी श्रीकार, दर्शनीय, रमणीय, हृदय में चुभने वाली तथा मनोहारी है।

११. वह शृंगार का मानो आकर ही है। उसका वेष भी सुंदर-मनोहर है। वह बोलने-चलने तथा मैत्रीभाव में अत्यंत चतुर है।

१२. तिणरों हसवों गंभीर इचर्य कारी, नेत्र चेष्टा विकार अतंत।
विलास माहोमाहि बोलवों, तिणमें डाही घणी मतवंत।।

१३. इंद्र तणी अपछरा सरिखो, तिणरों रूप घणों छें अनूंप।
ओर देवंगणा इणरें तुलें न आवें, इसडों छें तिणरो रूप।।

१४. एहवी सुभद्रा नामें अस्त्री रत्न छें, भद्र किल्याणकारणी नार।
ते जोवन रे विषें वर्ते जोवन में, तिणमें सगलाइ गुण श्रीकार।।

१५. एहवों अस्त्री रत्न ल्यावें विनमी राजा, नमी राजा ल्यावें रत्न अनेक।
वळे कडा नें बाह्यां ना आभरण, नमी राजा ल्यावें छें विशेष।।

१६. उतकष्टी चाल विद्याधर नीं, चालें आया भरतजी रे पास।
नांन्हीं नांन्हीं घूघरीया जुगत सूं, तिहां ऊभा रह्या छें आकास।।

१७. त्यांरें पेंहरण वसत्र पंचवर्णा छें, प्रधांन घणा श्रीकार।
विनें सहीत बेहूं हाथ जोडी नें, नमण करें वारूं वार।।

१८. जय विजय करी वधावें नरिंद नें, विडदावलीयां बोलावें अनेक।
थे जीत लीयों सर्व भरत खेतर नें, बाकी सत्रू न राख्यों एक।।

१९. म्हे सेवग छां थांरा आग्याकारी, थांरा देस तणा वसवांन।
म्हे किंकर चाकर आप तणा छां, मुझ शिर छें तुम तणी आंण।।

२०. तिण कारण मांसूं आप किरपा करेनें, म्हारो भेटणों ल्यो माहाराय।
इम कहेनें विनमी नामें राजा, अस्त्री रत्न सूंपे दीधी ताहि।।

२१. नमी राजा रत्न गेंहणादिक आप्या, करे घणा गुणग्रांम।
जब भरतजी त्यांनें घणा सतकारे, पाछी सीख दीधी तिण ठांम।।

२२. नमी विनमी विद्याधर नमाया, त्यांनें आंण मनाइ तांम।
ते पिण थोथी माया जाण संजम लेसी, मोख में जासी अविचल ठांम।।

◆

१२. उसका हंसना गंभीर और आश्चर्यकारक है। उसकी विशाल नैत्र चेष्टा ही विकार उत्पन्न कर देने वाली है। परस्पर बातचीत में भी वह अत्यंत चतुर और समझदार है।

१३. इंद्र की अप्सरा के समान उसका रूप अत्यंत अनुपम है। देवांगना भी इसके रूप से अतुलनीय है।

१४. ऐसा भद्र और कल्याणकारी सुभद्रा नाम का वह नारीरत्न है। यौवन में प्रकट होने वाले युवती के सभी श्रीकार गुण उसमें विद्यमान हैं।

१५. विनमी राजा ऐसे नारीरत्न को लेकर तथा नमी राजा रत्न, कड़े, भुजबंध आदि लेकर आता है।

१६. विद्याधर की सर्वोत्कृष्ट गति से चलकर वे भरतजी के पास आए। नन्ही-नन्ही घुघरियों सहित उपयुक्त रूप से आकाश में खड़े हुए।

१७. उनके पहने हुए कपड़े प्रशस्त और पचरंगे हैं। वे सविनय हाथ जोड़कर बार-बार नमन कर रहे हैं।

१८. जय-विजय शब्द से राजा को वर्धापित कर प्रशस्तियां बोल रहे हैं। आपने सारे भरतक्षेत्र को जीत लिया। एक भी शत्रु शेष नहीं रखा।

१९. हम आपके आज्ञाकारी सेवक किंकर चाकर हैं। आपके देश के नागरिक हैं। हमें आपकी आज्ञा शिरोधार्य है।

२०,२१. अतः आप कृपा कर हमारा उपहार स्वीकार करें। यों कहकर गुणगान कर विनमी ने स्त्रीरत्न तथा नमी ने रत्न, आभूषण अर्पित किए। भरतजी ने सादर उनको विदा कर दिया।

२२. नमी विनमी विद्याधरों को विनत कर भरतजी ने अपनी आज्ञा मनाई। पर इसे निःसार माया जानकर संयम ग्रहण कर अविचल मोक्ष धाम में जाएंगे।

◆

दुहा

१. नमी विनमी नें सीख दीयां पछें, पोषधसाला थी नीकलीया ताहि।
सिनांन कीयों मंजण घर मझे, पछें आया भोजन घर माहि।।

२. भोजन कीयो भोजन मंडप मझे, असणादिक च्यारूं आहार।
भोजन कर तिहां थी नीकल्या, आयों उवठांण साल मझार।।

३. श्रेणी प्रश्रेणी बुलायनें, कहे छें भरत माहाराय।
नमी विनमी नें नमावीया, त्यांरा करो महोछव जाय।।

४. श्रेणी प्रश्रेणी वचन सतकार नें, महोछव करे छें ठांम ठांम।
श्री रांणी सूं भरतजी, भोगवें सुख अभिरांम।।

ढाळ : ४६

(लय : मोतीडा नी तथा सामणी चिरताली धूतारी राम की मतवाली)

१. श्री देवी नें भरत बेहूं हिल मिलीया, जांणें पय में पतासा भिलीया।।
पुनवंती राणी, भरत नें पुन उदें मिली आंणी।।

२. भारी छें पुनवंत भरत राजांन, श्री रांणी राई पुन असमांन।।

३. चोसठ सहंस भरत राजा रे रांणी, इण सरिषी ओर दुजी न जांणी।।

४. पूर्व भव तप कीधो अमोलक भारी, तिणसूं इसरी आंणें मिली नारी।।

५. श्री रांणी पिण पुन उपाया अपार, तिणसूं पायो भरत भरतार।।

दोहा

१. नमी-विनमी को विदा कर भरतजी पौषधशाला से निकलकर स्नानगृह में स्नान कर भोजनघर में आए।

२. भोजन-मंडप में असन आदि चारों प्रकार के आहार कर वहां से निकल उपस्थान शाला में आए।

३. श्रेणि-प्रश्रेणि को बुलाकर कहा- मैंने नमी-विनमी को जीत लिया, इसका महोत्सव करो।

४. श्रेणि-प्रश्रेणि ने उनके वचन को समादृत कर स्थान-स्थान पर महोत्सव किए। भरतजी श्रीरानी के साथ अभिराम सुखों को भोग रहे हैं।

ढाळ : ४६

१. श्रीदेवी एवं भरतजी दोनों आपस में ऐसे हिलमिल गए जैसे दूध में पताशा घुल जाता है। पुण्योदय से भरतजी को पुण्यवती रानी प्राप्त हुई।

२. भरतजी भारी पुण्यवान हैं। श्रीदेवी रानी का पुण्य भी अतुल्य है।

३. भरतजी के चौसठ हजार रानिया हैं, पर श्रीदेवी अद्वितीय है।

४. उन्होंने पूर्व भव में भारी तप किया था। उससे ऐसी पत्नी प्राप्त हुई।

५. श्रीदेवी ने भी अपार पुण्यों का अर्जन किया था, जिससे भरतजी जैसे पति प्राप्त हुए।

६. तिणरें अधिष्टायक देवता एक हजार, सेवग जिम रहें आगनाकार।।

७. सहंस देवता करें मन चिंतव्या कांम, किंकर जिम रूखवाला तांम।।

८. अस्त्री रत्न छें अमोलक रूडों, तिणरें मिलियों छें संजोग पूरो।।

९. कांम भोग माहे पांम रही छें आणंद, तिण वस कर लीयो भरत नरिंद।।

१०. मिनखां माहे उतकष्टा कांम नें भोग, भोगवें श्री रांणी रे संजोग।।

११. जिण काल में चक्रवत उपजें छे आय, जब अस्त्री रत्न पिण थाय।।

१२. चक्रवत विना अस्त्री रत्न न होय, तिणमें संक म राखो कोय।।

१३. भरत नरिंद जांणें पूनम चंद, ते पिण तिण दीठां पांमें आणंद।।

१४. भरत चक्रवत नें असत्री रत्न, तिणरा देवता करें छें देवता जत्न।।

१५. मनगमता संजोग मिल्या यांरें आंण, ते तों करणी तणा फल जांण।।

१६. यांरा इचर्यकारी छें भोग संजोग, त्यांरो कदेय न वांछें विजोग।।

१७. अपछरा सरिखों रूप छें जिणरों, जस कीरत घणों छें तिणरो।।

१८. ओं तो समकालें जोग मिलें छें अेंसों, जब जसा कूं मिल जाअें तेंसो।।

१९. त्यांरें प्रीत माहोमा अंतरंग लागी, राजा रांणी दोनूं बड भागी।।

६. उसके एक हजार देवता अधिष्ठायक हैं। वे सेवक की तरह उसकी आज्ञा का पालन करते हैं।

७. वे किंकर की तरह उसके चिंतित कार्यों का संपादन करते हैं।

८. वह अमूल्य नारीरत्न है। इसी से उसको यह सुयोग मिला है।

९,१०. वह काम-भोगों में आनंद प्राप्त कर रही है। उसने भरत नरेंद्र को अपने वश में कर लिया। श्रीदेवी के संयोग से भरतजी मनुष्य के उत्कृष्ट काम सुखों का उपभोग कर रहे हैं।

११. जिस काल में चक्रवर्ती पैदा होता है उसी काल में श्रीदेवी जैसा स्त्रीरत्न पैदा होता है।

१२. यह निःशंक बात है- चक्रवर्ती के बिना स्त्रीरत्न पैदा नहीं होता।

१३. भरत नरेंद्र पूनम के चंद्रमा के समान हैं पर वे भी उसे देखकर आनंदित होते हैं।

१४. भरत चक्रवर्ती के स्त्रीरत्न की देवता सुरक्षा करते हैं।

१५. इनको मनोगत संयोग प्राप्त हुए हैं यह इनकी तपस्या का फल है।

१६. इनके आश्चर्यकारी भोग-संयोग वियोग रहित हैं।

१७. इसका रूप अप्सरा जैसा है। इसकी यशकीर्ति अपार है।

१८. जैसे को तैसा यह योग समकाल में ही प्राप्त होता है।

१९,२०. इनके आपस में अंतरंग प्रेम हैं। राजा-राणी दोनों ही बड़भागी हैं। भरतजी श्रीरानी से अनुरक्त हैं। उसने क्रीड़ाओं से उनका मन मोह लिया।

२०. श्री रांणी सूं भरत रहे नित भीनों, कीला कर राजा नें मोहि लीनों।।

२१. लखण वंजण गुण तिणरा अनेक, अेंसी नही भरत खेतर में एक।।

२२. रात दिवस तिणसूं कर रह्या कीला, जांणें इंद्र पुरी समलीला।।

२३. अस्त्री रत्न सूं भरतजी करें विलासों, ग्यांन सूं तो जांणें तमासो।।

२४. तिणनें पिण निश्चे भरतजी छोडवा कामी, इण हीज भव छें सिवगांमी।।

२५. तिण रांणी सु भरत रे अतंत घणो हेज, तिणनें पिण छोडता नही जेझ।।

२६. तिणनें छोडनें संजम पालसी चोखो, करणी कर जासी पाधरा मोखो।।

◆

२१. उसके जैसे लक्षण-व्यंजन गुण भरतक्षेत्र में और किसी के नहीं हैं।

२२. इंद्रपुरी की लीला के समान वे रात-दिन उसमें क्रीड़ारत रहते हैं।

२३,२४. स्त्रीरत्न से भरतजी विलास तो कर रहे हैं पर अंतरंग में इसे एक तमाशा ही जानते हैं। निश्चय ही इसे भी त्याग कर इसी भव में मोक्षगामी होंगे।

२५,२६. यद्यपि श्रीरानी से उनका अत्यंत स्नेह है पर इसे छोड़ने में भी देरी नहीं करेंगे। उसे त्याग कर निर्मल संयम की आराधना कर सीधे मुक्ति में जाएंगे।

◆

दुहा

१. नमी विनमी विद्याधर नमावीया, त्यांरा महोछव पूरा हूआ जेह।
जब चक्ररत्न आउधसाल थी, बारें नीकलीयों तेह।।

२. सहंस देवता सहीत परवर्यों थकों, चाल्यों जाअें गगन आकास।
वाजंत्र अनेक वाजता थकां, जाअें इसांण कुण में तास।।

३. गंगा देवी ना भवण स्हांमा चालीया, भरतजी पिण चाल्या तिण लार।
नवमो तेलों कीयों तिण उपरें, संधु नदी जिम सगलों विस्तार।।

४. सहंस नें आठ कुंभ विचत्र रत्न रा, अनेक रत्न भांत चित्रांम।
नाना प्रकार ना मणी रत्न में, त्यांरा चित्रांम छें ठांम ठांम।।

५. वळे दोय सिंघासण कनक में, भेटणा में एतो फेर जांण।
सेष सिंधू देवी नीं परें जांण जो, महोछव सूधो सर्व पिछांण।।

६. गंगादेवी महोछव पूरों हूवां, चक्र नीकल्यों आउधसाला बार।
सहंस देवतां सहीत परवर्यों थकों, चाल्यों आकास मझार।।

७. गंगानदी नें पिछम कुलें, दिखण दिस गुफा खंड प्रवाह।
तिण गुफा सांहमों चक्र चालीयों, लारें चाल्या भरत माहाराय।।

ढाळ : ४७

(लय : पुत्र वसूदेव रो गजसुखमाल तो मोखगांमी)

१. खंड प्रवाह गुफा तिहां आवीया, डेरा कीया भरत जी आय रे।
तेलो कीयों पोषधसाला मझे, नटमाली देव उपर ताहि रे।
चक्रवत मोटकों, भरत नरिंद मोटों राजांन रे।।

दोहा

१. नमी-विनमी विद्याधर को विनत किया। जब उनका महोत्सव पूरा हुआ तो फिर चक्ररत्न आयुधशाला से बाहर निकला।

२,३. एक हजार देवताओं से परिवृत्त होकर वाद्ययंत्रों के बजते हुए वह आकाश मार्ग से ईशान कोण में गंगादेवी के भवन की ओर चला। भरतजी भी उसके पीछे-पीछे चले। वहां नौवां तेला किया। यहां सारा विस्तार सिंधु नदी की तरह ही जानना चाहिए।

४,५. सिंधु देवी की तरह ही गंगा देवी ने भी एक हजार आठ रत्नकुंभ उपहृत किए। उन कुंभों पर स्थान-स्थान पर नाना मणिरत्नों की चित्रकारी की हुई थी। गंगादेवी ने उनके साथ दो स्वर्ण सिंहासन विशेष रूप से भरतजी को उपहृत किए।

६,७. गंगादेवी महोत्सव संपन्न होने पर सहस्र देवों से परिवृत्त चक्ररत्न फिर आयुधशाला से आकाश में आया और गंगा नदी के पश्चिमी तट के दक्षिणी खंड प्रवाह गुफा की ओर चला। भरतजी उसके पीछे-पीछे चले।

ढाळ : ४७

भरत नरेन्द्र बहुत बड़ा चक्रवर्ती राजा है।

१. भरतजी ने दक्षिण खंड प्रवाह गुफा पर आकर पड़ाव किया। पौषधशाला में आकर नटमाली देव को लक्षित कर तेला किया।

२. तीन दिन पूरा हुआं, नटमालो देव आयो जांण रे।
भंड भाजन कडा आंणीया, सेष किरतमाली जेम मंडाण रे।।

३. नट्टमाली देव नें भरत जी, सेवग ठेंहराय पगां लगाय रे।
सीख दीधी सतकार सनमांन नें, किरतमाली देवता जिम ताहि रे।।

४. श्रेण प्रश्रेणी तेराय नें, कहें छें भरत माहाराय रे।
णट्टमाली देवता जीतीयों, तिणरा करों महोछव जाय रे।।

५. श्रेणी प्रश्रेणी सुण हरखत हूआ, महोछव कीया छें मोटें मंडांण रे।
अठाही महोछव पूरा हूआ, आग्या सूंपी भरत जी नें आंण रे।।

६. महोछव पूरा हूआं भरत जी, कहें छें सेन्यापती नें बोलाय रे।
गंगा नदी पेंलें पार जायनें, सगलें आंण माहरी वरताय रे।।

७. चूल हेमवंत वेताढ विचें, गंगा नें लवण समुद्र वीच रे।
सगलां राजां नें नमाय जे, सगलें ठांम ऊंच नें नीच रे।।

८. त्यांरा भेटणा रत्नादिक तणा, लेइ लेइ नें पगां लगाय रे।
सर्व खंड में आंण वरताय नें, म्हारी आग्या पाछी सूंपे आय रे।।

९. सेन्यापती सुण हरषत हूवों, सिंधु जिम गयों गंगा रे पार रे।
आंण मनाइ तिण खंड में, लेइ लेइ रत्नादिक सार रे।।

१०. सर्व राजां नें आंण मनायनें, भेटणा लीधा त्यांरि पास रे।
गंगा नदी उतर पाछों आवीयों, मन माहे अतंत हुलास रे।।

११. विजय कटक माहे जिहां भरतजी, आय ऊभों तिणारे पास रे।
विनय करे रूडी रीत सूं, जय विजय सूं वधाया तास रे। जय २।।

१२. रत्नादिक भेटणों आण्यों तकों, मुख आगल मूंक्यों तिणवार रे।
सिंधू पेंलों खंड साझे आवीया, तेहनी परें जाणों सर्व विस्तार रे। ते० २।।

२. तीन दिन पूरे होने पर पूर्वोक्त कृतमाली देव की ही तरह यहां नटमाली देव भंड, भाजन, कड़ा आदि लेकर उपस्थित हुआ।

३. भरतजी ने नटमाली देव को नतमस्तक कर उसे अपना सेवक स्थापित कर कृतमाली देव की तरह सत्कार-सम्मानपूर्वक विदा किया।

४. श्रेणि-प्रश्रेणि को बुलाकर भरतजी ने कहा- मैंने नटमाली देव पर विजय प्राप्त करली है। इस उपलक्ष में महोत्सव आयोजित करो।

५. श्रेणि-प्रश्रेणि यह सुन हर्षित हुए और धूमधाम से आठ दिन का महोत्सव कर राजा की आज्ञा को प्रत्यर्पित किया।

६. महोत्सव संपन्न होने पर भरतजी ने सेनापति को बुलाकर कहा- गंगा नदी के उस पार जाकर सब जगह मेरी आज्ञा प्रवर्ताओ।

७,८. चूल हेमवंत और वैताढ्य के बीच गंगा से लवण समुद्र तक ऊंची-नीची सब जगह सब राजाओं को जीतकर उनके रत्न आदि उपहार लेकर उन्हें विनत कर पूरे खंड में मेरी आज्ञा प्रवर्ताकर मेरी आज्ञा मुझे प्रत्यर्पित करो।

९,१०. सेनापति यह सुन हर्षित हुआ और सिंधु की तरह ही गंगा के पार गया। पूरे खंड में आज्ञा प्रवर्ता कर रत्न आदि का उपहार लेकर उन्हें विनत कर गंगा नदी को पार कर अत्यंत उल्लास से वापिस आया।

११. विजय कटक में भरतजी के पास आया। अच्छी तरह विनय कर जय-विजय शब्दों से उन्हें वर्धापित किया।

१२. रत्न आदि के जो उपहार लाया उन्हें भरतजी के सामने प्रस्तुत किया। सिंधु नदी के पूर्व खंड को साध कर आया उसी तरह यहां सारा विस्तार जानना चाहिए।

१३. सेन्यापती आंण्यों ते भेटणों, भरत जी कीयों छें अंगीकार रे।
सेनापती नें घणों सनमांन दें, सीख दीधी देइ सतकार रे। सी० २।।

१४. सेनापती घणों हरषत हूवों, पाछो आय निज ठिकांण रे।
पांच इंद्रीनां सुख भोगवे, ते पिण देव तणी परें जांण रे। ते०।।

१५. काल कितोंएक बीतां पछें, कहें सेनापती नें बोलाय रे।
खंड प्रवाह गुफा तणा, उत्तर ना द्वार खोलों जाय रे। उ० २।।

१६. सेनापती सुण हरषत हुवो, खंड प्रवाह ना खोल्या दुवार रे।
तमस गुफा तेहनी परें, सगलोंइ कहणों विस्तार रे। स० २।।

१७. आंण वरती गंगा पेला खंड में, वळे खंड प्रभा रा खुलीया कमाड रे।
ए पिण कारमा पुन जांणें भरतजी, छोडनें जासी मुगत मझार रे। छो० २।।

◆

१३. भरतजी ने सेनापति द्वारा लाया हुआ उपहार स्वीकार किया और उसका सत्कार-सम्मान कर उसे विदा किया।

१४. सेनापति अत्यंत हर्षित होकर अपने स्थान पर आया और देवता की तरह पांचों इंद्रियों का सुख भोगने लगा।

१५. कुछ समय बीत जाने पर भरतजी ने फिर सेनापति को बुलाकर खंड-प्रवाह गुफा के उत्तर द्वार को खोलने का आदेश दिया।

१६. सेनापति यह सुन हर्षित हुआ और खंड-प्रवाह गुफा के द्वार खोले। तामस गुफा की तरह ही यहां सारा विस्तार जानना चाहिए।

१७. गंगा के उस पार के खंड में भरतजी की आज्ञा प्रवर्ती और खंड-प्रवाह का द्वार खुला। इन सबको नश्वर पुण्य जानकर भरतजी इन्हें छोड़कर मुक्ति में जाएंगे।

◆

दुहा

१. आगें मंडला कीया तिमहीज कीया, भरत जी गुफारे माहि।
उमग निमगजला नदी उतर्‍या, आगा ज्यूं उतरीया ताहि।।

२. दिखण दुवार आफेइ उघर्‍या, जिम तमस उत्तर ना दुवार।
सारी सेन्या गुफा बारें नीकली, सीहनाद ज्यूं करता गूंजार।।

३. जब भरत नरिंद तिण अवसरें, गंगा सूं पिछम दिस माहि।
तिहां विजय कटक उतारीयों, आगली सर्व रीत वणाय।।

४. तिहां पिण तेलो कीयों छें इग्यारमों, नव निधांन काजें ताहि।
त्यांसूं एकाग्र चित्त थापीयो, त्यांरो ध्यांन ध्यावें मन माहि।।

५. तीन दिन पूरा हुआं, नव निधांन प्रगट हुआ आंण।
त्यांरा गुणां रो प्रमांण छें नही, ते राता छें अतंत वखांण।।

६. पांच वर्णा रत्नां करी, पूर्ण भर्‍या छें नवोइ निधांन।
इसरा निधांन आय परगट्या, भरत भागबली छें राजांन।।

७. ते नव निधांन छें एहवा, त्यांरा लखण गुण छें अथाय।
पिण थोड़ा सा परगट करूं, ते सुणजों चित्त ल्याय।।

ढाळ : ४८

(लय : प्रभवो चोर चोरां नें समझावे)

नव निधांन आया छें भरत निरंद रे।।

१. धुव निश्चल द्रव्य हीणा न थावें, त्यांरो खय पिण कदेय न थायो रे।
देस थकी पिण कदे हीण न होवे, सासता छें अमोलक लोकां माह्यों रे।

दोहा

१. पूर्व वर्णन में भरतजी ने जैसे गुफा में चक्राकार मंडल बनाए उन्मग्न तथा निमग्न नदी को पार किया वैसे ही यहां पार उतरे।

२. जिस तरह तामस गुफा के उत्तर द्वार अपने आप खुले, उसी तरह दक्षिण दिशा के द्वार अपने आप खुले। सारी सेना सिंहनाद का गुंजारव करती हुई बाहर निकली।

३. तब भरतजी ने गंगा नदी से पश्चिम दिशा में जाकर वहां विजय कटक का पूर्वोक्त रूप से पड़ाव किया।

४. वहां भी नौ निधान के लिए इग्यारवां तेला किया। चित्त को एकाग्र स्थापित कर मन में उनका ध्यान ध्याने लगे।

५. तीन दिन पूरे होने पर नौ निधान आकर प्रकट हुए। उनके गुणों का कोई प्रमाण नहीं है। उनकी व्याख्या अत्यंत रसीली है।

६. नौ ही निधान पंचवर्ण रत्नों से पूर्ण रूप से भरे हुए हैं। भरतजी भाग्यशाली राजा हैं जिससे उनके नौ निधान प्रकट हुए।

७. उन नौ ही निधानों के लक्षण-गुण अथाह हैं। फिर भी संक्षेप में प्रकट करता हूं। चित्त लगाकर सुनें।

ढाळ : ४८

भरत नरेंद्र ने नौ निधान प्राप्त किए।

१. वे सारे लोक में ध्रुव, निश्चल, शाश्वत, अक्षय, अमूल्य हैं। उनका एक भाग भी कभी हीन नहीं होता।

२. त्यांरा अधिष्टायक देवता करें रुखवाली, त्यां माहे पुस्तक त्या मांह्यो रे।
लोकां नों आचार री प्रवृत्ति त्यांमें, ते भरत जी रे वस हूआ आयो रे। न.।।

३. प्रसिध जस त्यांरो तीनूंइ लोक में, नवोंई निधांन छें रूडा रे।
ते सासती चीज अमोलक भारी, जिणरे होसी तिणरें पुन पुरा रे।।

४. नेसर्प नें पंडूक पिंगल तीजों, सर्व रत्न नें महापदम जांणो रे।
काल महाकाल माणवक महानिधांन, संख निधांन नवमों पिछांणो रे।।

५. नेसर्प निधांन में थापना विध रूडी, गांम नगर पाटणादिक री जांणो रे।
वळे थापना द्रोणमुख मंडप नी छें, कटक घर हाट नी विध परमांणो रे।।

६. गिणत संख्या छें पंडूक रत्न में, नालेरादिक गिणवो ते सारो रे।
वळे मापवो तोलवो तेहनों प्रमांण, धांन बीजादिक वावण रो विचारो रे।।

७. सर्व आभरण पेंहरण री विध अस्त्री पुरष नें, ते पहरणा ठांम रे ठांमों रे।
इम हीज आभरण हाथी घोडा ना, ते विध पिंगल निधांन में तांमों रे।।

८. सात रत्न एकिंद्री नें सात पंचिंद्री, चउदें रत्न चक्रवत रे जांणो रे।
त्यांरी उतपत री विध छें सर्व रत्न में, त्यांनें रूडी रीत पिछांणो रे।।

९. वस्त्र नीं उतपत विध वस्त्र नीपन विध, वळे वस्त्र रंगवानी विध सारी रे।
वळे वस्त्र धोवानी रचवानी विध छें, सगली माहापदम निधांन मझारी रे।।

१०. काल नामा निधांन तिणमें काल ग्यांन रो, सर्व जोतष सासत्र ग्यांन जांणें रे।
अतीत अनागत नें वरतमांन, त्यांरा सुभासुभ इण थी पिछांणे रे।।

११. वळे असी मसी कसी ए कामां तीनोइ, ते लोकां नें घणा हितकारो रे।
वळे एक सो सिलप कर्म जूआ जूआ छें, ते काल निधांन मझारो रे।।

१२. वळे सोना रूपा ना मणी रतनां रा आगर, मण माणक मोती प्रवालो रे।
वळे लोहादिक उतपत विध सगलां री, माहाकाल निधांन में संभालो रे।।

२. अधिष्ठायक देवता उनकी सुरक्षा करते हैं। इनमें पुस्तकें हैं। उन्हीं से लोकाचार की प्रवृत्ति होती है। वे निधान भरतजी के अधीन हुए।

३. नौ ही निधान सुरम्य हैं। तीनों लोकों में उनका यश प्रसिद्ध है। ऐसी अमूल्य शाश्वती भारी चीज जिसके पास होगी उसके पुण्य परिपूर्ण हैं।

४. नौ निधानों के नाम इस प्रकार हैं– १ नैसर्प, २ पंडूक, ३ पिंगल, ४ सर्वरत्न, ५ महापद्म, ६ काल, ७ महाकाल, ८ माणकव्रक तथा ९ शंख।

५. नैसर्प निधान के अंतर्गत ग्राम, नगर, पाटण, द्रोणमुख, मंडप, छावनी, घर, हाट आदि की सविधि जानकारी होती हैं।

६. पंडूक निधान के अंतर्गत नारियल आदि की संख्या की गणना, धान्य-बीज आदि के तोल-माप का प्रमाण तथा बोने का विचार आता है।

७. पिंगल निधान के अंतर्गत स्त्री-पुरुष, हाथी-घोड़े आदि के आभूषणों को यथास्थान पहनना आता है।

८. चक्रवर्ती के चौदह रत्न होते हैं। उनमें सात एकेंद्रिय तथा सात पंचेंद्रिय होते हैं। उनकी उत्पत्ति की विधि सर्वरत्न के अंतर्गत है, उन्हें सम्यग् रूप से जानें।

९. महापद्म निधान के अंतर्गत वस्त्र की उत्पत्ति-निष्पत्ति तथा धोने-रंगने-छापने की विधि आती है।

१०. काल निधान के अंतर्गत काल-विज्ञान, ज्योतिर्विज्ञान, अतीत, वर्तमान तथा भविष्य के शुभाशुभ की पहचान आती है।

११. काल निधान के अंतर्गत लोकहितकारी असि, मसि, कृषि तीनों कर्मों एवं सौ शिल्प कलाओं को भी अलग-अलग रूप से जाना जाता है।

१२. महाकाल के अंतर्गत सोने, चांदी, रत्नों के आकर मणि, माणक, मोती, प्रवाल, लोह आदि की उत्पत्ति की सारो विधि आती है।

१३. सूर पुरष नें कायर पुरष री उतपत, सनाह बंध सेन्या सिणगारो रे।
प्रहरण खडगादिक नें राजनीत विध, माणवक निधांन मझारो रे।।

१४. नाचण री विध नें नाटक री विध, वळे काव्य च्यार प्रकारों रे।
धर्म अर्थ वळे कांम नें मोख, त्यांरी विध संख निधांन मझारो रे।।

१५. वळे संसकृत नें प्राकत भाषा, वळे भाषा छें विविध प्रकारो रे।
वळे तुटितांगादिक वाजंत्र नी उतपत, महासंख निधांन मझारो रे।।

१६. आठ आठ पइडा छें एकीका निधांन रे, आठ आठ जोजन ऊंचा सारा रे।
नव नव जोजन रा पेंहला छें सघला, लांबा छें जोजन बारा रे।।

१७. मजूस नें आकारें संठाण छें त्यांरें, गंगानदी रे मुख छें ठिकांणो रे।
गंगा समुद में भिले तिहां रहें छें, चक्रवत रें प्रगट हुवें आंणो रे।।

१८. वेडूरय रत्नां में कवाड छें त्यांरा, कनक सोवन में नवोइ निधांनों रे।
ते विविध प्रकार ना रत्नां करेनें, प्रतिपूर्ण भरया छें असमांनों रे।।

१९. चंद्रमा ना आकार चेंहन लखण छें तिणरे, सूर्य ना चक्र ना लखण तांमों रे।
ते प्रतख चेंहन आकार छें रूडा, ते सोभ रह्या छें ठांमठांमों रे।।

२०. एहवा निधांन आय मिलीया भरत नें, त्यांनें जांणें छें माया काची रे।
त्यांनें छोड संजम ले सिवपुर जासी, नही रहसी संसार में राची रे।।

◆

१३. माणवक निधान के अंतर्गत सूरवीर-कायर पुरुष की उत्पत्ति, सेना की सन्नद्धता-शृंगार, खड्ग आदि शस्त्र तथा राजनीति की विधि आती है।

१४. शंख निधान के अंतर्गत नृत्य-विधि, नाटक-विधि, काव्य-कला, धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्ष- चार पुरुषार्थ विधि आती है।

१५. महाशंख निधान के अंतर्गत संस्कृत-प्राकृत आदि विविध भाषाओं तथा त्रुटितांग आदि वाद्ययंत्रों की उत्पत्ति आती है।

१६. एक-एक निधान के आठ-आठ पहिए हैं। वे आठ-आठ योजन ऊंचे हैं, नौ-नौ योजन चौड़े तथा बारह-बारह योजन लंबे हैं।

१७. उनका संस्थान मंजूषा के आकार का है। गंगा नदी के उद्गम पर उनका स्थान है। गंगा जहां समुद्र में मिलती है वहां आकर वे चक्रवर्ती के लिए प्रकट होते हैं।

१८. कनक स्वर्ण के इन नौ निधानों के कपाट वैडूर्य रत्नों के होते हैं। वे विविध प्रकार के रत्नों से परिपूर्ण भरे हुए हैं।

१९. उन पर सूर्य-चंद्रमा के साक्षात् लक्षण आकार-चिह्न, स्थान-स्थान पर सुशोभित हैं।

२०. ऐसे निधान भरतजी को प्राप्त हुए हैं। इन्हें भी वे विनष्ट होने वाली माया जानते हैं। वे संसार में अनुरक्त नहीं रहेंगे अपितु इन्हें छोड़ संयम लेकर मोक्ष में जाएंगे।

◆

दुहा

१. ते अत ही सम छें विषम नही, त्यां निधांन रे ऊपरे तांम।
ते निधांन नामें रहे छें देवता, त्यांरा आवास घणा अभिरांम।।

२. पल्योपम स्थित छें तेहनी, तिहां कीला करें दिन रात।
ते अधिष्टायक छें निधांन तणा, प्रसिध लोक विख्यात।।

३. अें तों इचर्यकारी निधांन छें, चीज अमोलक सार।
मोल साटें मिलें नही, तीनोई लोक मझार।।

४. निधांन रत्न छें केहवा, त्यां माहे रत्नप्रभूत।
समृधि प्रति पूर्ण भर्या, विविध प्रकारें घणा अद्‌भूत।।

५. ते निधांन तिहांथी नीकल्या, भाग बळें भरत रे जांण।
देवतां सहीत भरत नरिंद रे, वस हूआ छें आंण।।

ढाळ : ४९

(लय : कामणगारो कूकडो ए)

भाग बडों भरतेस नो रे।।

१. भाग बडो भरतेसनो रे, तिणरें पुन उदें हूआ आंण।
तिणरें रिध अचिंती आय मिली रे, सहूकों आंण करें परमांण।

२. षट खंड केरों छें अधिपती रे, भरत नरिंद राजांन।
तिणरें भाग बळें आय परगट्या रे, सार भूत नवोइ निधांन।।

३. इचर्यकारी छें अति घणा रे, नवोइ निधांन अनुप।
त्यांनें खोल जूआ जूआ देखीया रे, जब हरष्यों घणों भूप।।

दोहा

१. वे निधान अत्यंत सम हैं, विषम नहीं हैं। उन पर निधाननामक देवता रहते हैं। उनके अत्यंत अभिराम आवास हैं।

२. उनकी स्थिति एक पल्योपम की है। वे वहां दिन-रात क्रीड़ारत रहते हैं। वे उन निधानों के अधिष्ठायक के रूप में लोक में प्रसिद्ध विख्यात हैं।

३. ये निधान अमूल्य एवं आश्चर्यकारक हैं। तीनों ही लोकों में ये मूल्य के बदले में नहीं मिलते।

४. इन निधानों के अंदर प्रभूत रत्न हैं। वे विविध प्रकार की समृद्धि से अत्यंत परिपूर्ण एवं अद्‌भुत हैं।

५. वे निधान भरत के भाग्य बल से वहां से निकले हैं। अधिष्ठायक देवताओं सहित वे भरतजी के अधीन हो गए।

ढाळ : ४९

भरत राजा का भाग्य बड़ा है।

१. उनके पुण्य उदय में आए हैं। इसीलिए इन्हें अचिंत्य रिद्धि प्राप्त हुई है। सभी कोई इनकी आज्ञा को स्वीकार करते हैं।

२. भरत नरेंद्र छह खंड के अधिपति हैं। उनके भाग्य बल से ही ये नौ ही अनुपम सारभूत निधान प्रकट हुए हैं।

३. नौ ही निधान अनुपम एवं आश्चर्यकारी हैं। भरतजी ने जब इन्हें अलग-अलग खोलकर देखा तो वे अत्यंत हर्षित हुए।

४. आगें चवदें रत्न घरे परगट्या रे, वळे प्रगट्या नव निधांन।
दिन दिन इधिकी रिध संपजे रे, तिणरें प्रबल पुन छें असमांन।।

५. चक्रवत विना नही ओर रे रे, चवदें रत्न नव निधांन।
तीर्थंकर वासुदेव त्यारे पिण नही रे, नहीं छें जिण तिणनें आसांन।।

६. अश्व रथ छें अति रलीयांमणो रे, ते जांणें के देव विमांण।
पवन वेग ज्यूं चालें उतावलो रे, ते मिल्यों छें पुन जोगें आंण।।

७. भरत खेत्र ना देवी देवता रे, त्यां सगलां नें आंण मनाय।
त्यांनें सेवग ठहराया छें आपरा रे, त्यांरो भेटणो ले लेनें ताहि।।

८. पूर्व पिछम नें दिखण दिसें रे, लवण समुद्र तांइ प्रमांण।
चूल हेमवंत उत्तर दिसें रे, त्यांमें सगलें वरतें छें आंण।।

९. हाथी घोडा रथ भरत नें रे, चोरासी चोरासी लाख।
पायदल छीनूं कोड आए मिली रे, जंबूधीप पन्नत्ती में साख।।

१०. मिनखां री तो जिहांइ रही रे, देवता करें छें सेव।
वळे कार्य भरत नरिंद री रे, करें छें देवता स्वयमेव।।

११. वळे आखा भरत खेत्र मझे रे, भरत जी सरीखो नही कोय।
इंद्र तणी परें दीपतों रे, त्यांनें दीठां आणंद होय।।

१२. अनमी भोमीया वस कीया रे, कोइ माथों न सकें उपाड।
आखा भरत क्षेत्रर मझे रे, सत्रू न रह्यों लिगार।।

१३. चक्ररत्न सूर्य सारिखों रे, ते चालें गगन मझार।
देवतां सहंस सहीत सूं रे, वाजंत्र वाजें धुंकार।।

४. पूर्व में चौदह रत्न प्रकट हुए थे। अब नौ निधान प्रकट हुए हैं। भरतजी के प्रबल पुण्य से दिनोंदिन अधिक से अधिक ऋद्धि पैदा होती है।

५. ये चौदह रत्न तथा नव निधान चक्रवर्ती के सिवाय तीर्थंकर तथा वासुदेव के पास भी नहीं होते। ये हर किसी को आसानी से प्राप्त नहीं होते।

६. अश्वरथ अति मनोहर है। वह देव-विमान की तरह लगता है। वह पवन-वेग जैसा शीघ्र चलता है। वह पुण्ययोग से प्राप्त हुआ है।

७. भरतक्षेत्र के सभी देवी-देवताओं से अपनी आज्ञा स्वीकार करवाकर उनसे उपहार प्राप्त कर उन्हें अपना सेवक स्थापित किया है।

८. पूर्व, पश्चिम और दक्षिण में लवण समुद्र तक तथा उत्तर में चूल हिमवंत पूर्वत तक सब जगह इनकी आज्ञा प्रवर्तती है।

९. भरत के हाथी-घोड़े तथा रथों की संख्या चौरासी-चौरासी लाख है। छियानबे करोड़ पैदल सैनिक हैं। जंबूद्वीप प्रज्ञप्ति में इसकी साक्षी है।

१०. मनुष्य तो कहीं रहे, देवता भी इनकी सेवा करते हैं। देवता स्वयं भरतजी का कार्य करते हैं।

११. पूरे भरतक्षेत्र में भरतजी सरीखा दूसरा कोई नहीं है। वे इंद्र के समान दीप्तिमान् हैं। उन्हें देखने से ही आनंद होता है।

१२. किसी के सामने नहीं झुकने वाले भूपतियों को भी इन्होंने वश में किया है। इनके सामने कोई सिर ऊंचा नहीं कर सकता। पूरे भरतक्षेत्र में इनका एक भी शत्रु नहीं रहा।

१३. सूर्य के सरीखा चक्ररत्न सहस्र देवताओं के साथ आकाश में चलता है। वाद्ययंत्रों की धुंकार उठती है।

१४. छत्र रत्न छाया करें रे, जाझेरो अडतालीस कोस।
ते सीत तापादिक परहरें रे, टल जाअें विरक्षादिक दोस।।

१५. चर्म रत्न हेठें विस्तरे रे, नावा भूत पिछांण।
जाझेरो अडतालीस कोस में रे, मिलीयों छें पुन परमांण।।

१६. दंड रत्न पर्वत पहाड नें रे, भांज करें चकचूर।
विषम जायगा नें सम करें रे, ऊंच नीच करें सर्व दूर।।

१७. असी खडग रत्न छें एहवो रे, वजरादिक नें देवें काट।
कठण घणी वस्तु तेहनें रे, काट करे दोय वाट।।

१८. मणी रत्न घणों रलीयांवणो रे, तिणरों छें अतंत उजास।
जाझेरो अडतालीस कोस मे रे, करें चंद्रमा जेम परकास।।

१९. कागणी रत्न कनें थकां रे, घाव न लागें छें ताहि।
वळे घाव लागां उपर फेरीयां रे, घाव तुरत मिल जाय।।

२०. सेन्यापती रत्न छें एहवों रे, ते सेना रो नायक सूर।
लाखां गमे दल तेहनें रे, भांग करें चकचूर।।

२१. गाथापती रत्न में गुण घणा रे, ते धांन नीपावें छें ताहि।
धांनादिक वावें परभात रो रे, लूणें छें दिन थकां जाय।।

२२. वढइ रत्न सेन्या भणी रे, घर करे जथाजोग सेंल।
वळे करें भरत नरिंद रे रे, बयालीस भोमीया म्हेंल।।

२३. प्रोहित रत्न परधांन छे रे, ते करवा नें सतकर्म।
तिणरा पिण गुण छें अति घणा रे, ते पिण रत्न छें परम।।

२४. अनोपम रत्न छें अस्त्री रे, ते गुण रत्नां री भंडार।
इण सरीखी नही दूसरी रे, आखाइ भरत मझार।।

१४. छत्ररत्न साधिक अड़तालीस कोस छाया करता है। वह सर्दी-गर्मी का परिहार करता है। वर्षा आदि बाधाएं भी इससे टल जाती हैं।

१५. चर्मरत्न साधिक अड़तालीस कोस में नीचे विस्तीर्ण होता है। वह नौका के समान है। वह पुण्य के प्रमाण से प्राप्त हुआ है।

१६. दंडरत्न पर्वत-पहाड़ों को तोड़कर चकचूर कर देता है। वह विषम स्थल को सम बनाता है। विषमता को दूर कर देता है।

१७. असि खड्गरत्न वज्रादि को भी काट देता है। अत्यंत कठोर वस्तु को भी काटकर दो टुकड़े कर देता है।

१८. मणिरत्न अत्यंत मनोहर है। उसका प्रकाश चंद्रमा के समान साधिक अड़तालीस कोस में प्रकाश फैलाता है।

१९. काकिनीरत्न पास में होने से घाव नहीं लगता है। घाव के ऊपर स्पर्श करने से वह तुरंत भर जाता है।

२०. सेना का नायक सेनापतिरत्न ऐसा शूर है कि लाखों सैनिकों को भंग कर चकचूर कर देता है।

२१. गाथापतिरत्न में अनेक गुण हैं। वह धान्य निष्पन्न करता है। प्रभात में धान्य बोता है दिन रहते-रहते उसे काट लेता है।

२२. बढ़ईरत्न सेना के लिए यथायोग्य आवास उपलब्ध करवाता है। भरत नरेंद्र के लिए बयांलीस तले का महल बनाता है।

२३. पुरोहितरत्न सत्कर्म करने में प्रधान है। उसके भी अनेक गुण हैं। वह भी परम रत्न है।

२४. अनेक गुणों का भंडार स्त्रीरत्न अनुपम है। पूरे भरतक्षेत्र में इस सरीखी कोई नारी नहीं होती।

२५. अश्व रत्न वेरी ऊपरें रे, परें छें वीजली जिम तांम।
धणी नें आल आवण दें नहीं रे, तिणमें गुण अभिरांम।।

२६. हाथी रत्न हाथ्यां रो अधिपती रे, जांणें ऊभों अंजण गिरी पाहड।
सोभें तिण ऊपर नरपती रे, इंद्र तणें उणीयार।।

२७ चवदें रत्न छें जिण घरे रे, जिण घरे नव निधांन।
जिण घर छ खंड रो राज छें रे, ते भागबली छें राजांन।।

२८ एहवी रिध आए मिली रे, त्यांनें जांणसी धूल समांण।
संजम लेनें केवल उपाय नें रे, पांमसी पद निरवांण।।

◆

२५. अश्वरत्न वैरी पर विद्युत् की तरह गिरता है। अपने अभिराम गुण से वह स्वामी को जरा भी कष्ट नहीं आने देता।

२६. हस्तीरत्न हाथियों का अधिपति है। ऐसा लगता है जैसे अंजनगिरि खड़ा हो। उस पर नरपति इंद्र के प्रतिमान सुशोभित होते हैं।

२७. जिसके पास चौदह रत्न हैं, जिसके घर नौ निधान हैं, छह खंड का राज्य है वह राजा भाग्यशाली है।

२८. ऐसी ऋद्धि भरतजी को प्राप्त हुई है, पर वे इसे धूल के समान जानेंगे, संयम ग्रहण कर केवलज्ञान प्राप्त कर निर्वाण पद को पाएंगे।

◆

दुहा

१. नव निधांन परगट हुआ, त्यांनें जांणे लीया छें ताहि।
जब पोषधशाला थी नीकल्या, आया मंजण घर माहि।।

२. मंजण कीयों विध आगली, आया उवठांण साला माहि।
तिहां बेठा सिघासण ऊपरें, कहें छें श्रेणी प्रश्रेणी नें बोलाय।।

३. नव निधांन माहरें आय परगट्या, तिणरा करो महोछव जाय।
जब सेणी प्रश्रेणी सुण हरखीया, कीया महोछव आय।।

४. अठाइ महोछव पूरा हूआं, कहें छें सेनापति नें बोलाय।
कहें जाओं तूम्हें देवाणूपीया, गंगा पेंलें दुजें खंड जाय।।

५. तिहां आंण मनाए माहरी, भेटणो लेइ सेवग ठहराय।
सेनापती सुण तिम हीज करे, गंगा नदी नें पार जाय।।

६. भेटणों ले आंण मनायनें, पाछो आयो भरत जी रे पास।
आगें कह्यों तिम सगलोइ जांणजों, हिवें भोगवें सुख विलास।।

७. हिवें चक्र रत्न ते एकदा, आउधसाला थी नीकल्यों बार।
सहंस देवता सहीत परवर्‍यों थकों, ऊंचो गयों गगन मझार।।

८. वाजंत्र सबद पूरतो थकों, विजय कटक रे माहि।
मझोमझ थइ नें नीकल्यों, नेरत कुण वनीता दिस जाय।।

९. वनीता साहमों जांता देखनें, घणो हरष्या भरत माहाराय।
कहें छें कोडंबी पुरुष बोलाय नें, हस्ती रत्न नें सज करों जाय।।

दोहा

१. नव निधानों के प्रकट होने की बात जानकर भरतजी पौषधशाला से निकल कर स्नानगृह में आए।

२,३. पूर्वोक्त विधि से स्नान कर उपस्थान शाला में आए। वहां सिंहासन पर बैठकर श्रेणि-प्रश्रेणि को बुलाकर कहते हैं- मेरे नौ निधान प्रकट हुए हैं। जाकर इनका महोत्सव करो। श्रेणि-प्रश्रेणि के लोग यह सुन हर्षित हुए और महोत्सव किया।

४. आठ दिनों का महोत्सव संपन्न होने पर भरतजी ने सेनापति को बुलाकर कहा- देवानुप्रिय गंगा नदी के उस पार दूसरे खंड में जाओ।

५,६. वहां मेरी आज्ञा प्रवर्ताओ। उपहार लेकर उन्हें सेवक के रूप में स्थापित करो। यह सुन सेनापति ने वैसे ही किया। गंगा नदी के उस पार जाकर उपहार स्वीकार कर, आज्ञा प्रवर्ता कर पुनः भरतजी के पास आया और पूर्व में जो विस्तार कहा गया है वह सारा यहां जानना चाहिए। अब भरतजी सुख-विलास का उपभोग कर रहे हैं।

७. एक बार फिर चक्ररत्न आयुधशाला से बाहर निकला। सहस्र देवताओं से परिवृत्त होकर आकाश में गया।

८. वाद्ययंत्रों के शब्द से अकाश को आपूरित करता हुआ विजय कटक के बीचोंबीच होकर नैर्ऋत्य कोण में विनीता की ओर चलने लगा।

९. उसे विनीता नगरी की ओर जाते देखकर भरतजी हर्षित हुए। कार्यकारी पुरुष को बुलाकर हस्तीरत्न को सज्ज करने का आदेश दिया।

ढाळ : ५०

(लय : रूघपति जीतो रे)

भरत नृप जीतो रे।।

रिषभानंदण धीर, भरत नृप जीतो रे।
बाहुबल नो वडवीर, भरत नृप जीतो रे।
गिरवों नें गुणवंत, सूरो नें सतवंत।।

१. चक्र रत्न नें चालतो हो, वनीता सांहमों जातों देख।
नर नारी तिण अवसरें हो, हरषत हूआ वशेख।।

२. घर घर रंग वधावणा हो, घर घर मंगलाचार।
घर घर गावें गीतडा हो, मुख मुख जय जय कार।।

३. लोक सहू हरषत हूआ हो, निज घर आवा तांम।
उछरंग पांम्यों अति घणो हो, मन पांम्यों विसरांम।।

४. छ खंड अखंडत भरत में हो, वरती भरत री आंण।
तिणसू चक्र घरां में चालीयो हो, कर मोटें मंडांण।।

५. मागध वरदांम प्रभास देव नें हो, जीत मनाइ आंण।
सिंधु देवी जीत फतें करी हो, तिण आंण कीधी प्रमांण।।

६. वेताढगिरी देव जीपीयो हो, जीतो किरतमाली देव।
चूल हेमवंत देव नमावीयो हो, त्यांनें कीया सेवग स्वयमेव।।

७. गंगा देवी जीत सेवग करी हो, तिणनें आंण मनाय।
नमी विनमी विद्याधर जीपनें हो, दीया छें पगां लगाय।।

८. नटमाली देवता भणी हो, जीते मनाइ आंण।
नव निधांन जीता पुन जोग सूं हो, ते हाजर हुआ प्रमांण।।

ढाळ : ५०

भरत नृप जीत गया।

ऋषभ का नंदन, बाहुबल का बड़ा भाई, धीर गौरवशाली, सूरवीर गुणवंत, सतवंत भरत राजा अब सर्व विजेता बन गया।

१. चक्ररत्न को विनीता की ओर चलता देखकर उस अवसर पर सभी नर-नारी अत्यंत हर्षित हुए।

२. घर-घर में रंग-बधाइयां बंटने लगी, मंगलाचार और गीत गाए जाने लगे। मुख-मुख पर जय-जयकार गूंजने लगी।

३. विजय यात्रा के सभी संभागी अपने घर लौटने के लिए हर्षित हुए। अत्यंत उत्साह जागा। मन को विश्राम मिला।

४. अखंड भरतक्षेत्र के छहों ही खंडों में भरतजी की आज्ञा का प्रवर्तन हुआ। इसीलिए चहल-पहल के साथ चक्र घर की ओर लौटने लगा।

५-९. भरतजी ने मागध देव, वरदाम देव, प्रभाष देव, सिंधु देवी, वैताढ्य गिरिदेव, कृतमाली देव, चूल हेमवंत देव, गंगा देवी, नमी-विनमी विद्याधर, नटमाली देव, इन सभी को जीतकर नतमस्तक बना दिया। अपनी आज्ञा का प्रवर्तन किया, उन्हें अपना सेवक बनाया। पुण्ययोग से नौ निधान को जीता। वे अपने आप उपस्थित हो गए। अपने बल से देव-देवियों को नतमस्तक किया, उन्हें अपनी आज्ञा स्वीकार करवाई। उनका उपहार स्वीकार किया और उन्हें विदा किया।

९. देव देवी मनाया जोर सूं हो, जोर सूं आंण मनाय।
त्यांरो ले ले भारी भेटणो हो, सीख दीधी सेवग ठहराय।।

१०. अजित राज तिण पांमीयो हो, सत्रू सगलां नें जीत।
सर्व रत्न उपना तेहनें हो, चक्र रत्न प्रधांन वदीत।।

११. नव निधांन नों हुवो अधिपती हो, भरीया कोठार भंडार।
पाछें चालें छें राजा मोटका हो, रायवर बत्तीस हजार।।

१२. साठ सहंस वरसां लगे हो, भरत खेत्र रे माहि।
सगलें ठांमें भरत जी हो, आंण वरताइ ताहि।।

१३. हिवें भरत नरिंद तिण अवसरें हो, सेवग पुरष बोलाय।
हस्ती रत्न नें सज करे हो, माहरी आगना सूपे आय।।

१४. सेवग सुण तिमहीज कीयो हो, हस्ती सजकर सूंप्यों आंण।
तिण उपर चढीयों नरपती हो, कर मोटें मंडांण।।

१५. नगरी वनीता तिण दिसें हो, चाल्या छें भरत नरिंद।
जन्म भूम निज नगरी आपरी हो, तिणसूं पांम्यां अधिक आणंद।।

१६. हस्ती रत्न बेठां मुख आगलें हो, चालें आठ मंगलीक।
जथा अनुक्रमें चालीया हो, साथीयादिक आठोइ ठीक।।

१७. पूर्ण कलस जल भर्यों हो, वळे जल भर्यों लोट भिंगार।
महिंद्र ध्वजा चालें मुख आगलें हो, सहंस धजा तणें पिरवार।।

१८. छत्र चालें मुख आगलें हो, वळे धजा पताका विशेख।
वळे चमर मुख आगें चालता हो, इत्यादिक मंगलीक अनेक।।

१९. सिघासण मणी रत्नां जड्यों हो, मुख आगल चालंत।
आगें कह्यों छें तिम जांणजों हो, सगलोइ विरतंत।।

१०. शत्रुओं को जीतकर अपराजेय राज्य प्राप्त किया। सारे रत्न उपलब्ध हुए। सब रत्नों में चक्ररत्न प्रधान है।

११. नौ निधान के अधिपति हुए। कोठार-भंडार भर गए। बत्तीस हजार बड़े-बड़े राजे उनके पीछे चलने लगे।

१२. भरतजी ने भरतक्षेत्र के सभी स्थानों पर साठ हजार वर्षों में अपनी आज्ञा स्वीकार करवाई।

१३. अब भरत नरेंद्र अपने सेवक पुरुष को बुलाकर उसे हस्तीरत्न को सजाकर, अपनी आज्ञा को प्रत्यर्पित करने का आदेश देते हैं।

१४. सेवक ने आज्ञा के अनुसार हस्तीरत्न को सजाकर समुपस्थित कर दिया। राजेंद्र धूमधाम से उस पर सवार हुआ।

१५. अब भरतजी अपनी जन्मभूमि और राजधानी विनीता की दिशा में चल रहे हैं। इसीलिए वे बहुत आनंदित हैं।

१६. वे हस्तीरत्न पर बैठे हैं। उनके मुंह के आगे साथिया आदि अष्ट मंगल अनुक्रम से चलते हैं।

१७-१९. जल से भरा हुआ पूर्ण कलश, २ भरा हुआ भृंगार लौटा, ३ सहस्र ध्वजाओं के परिवार से महेंद्र-ध्वज, ४ छत्र, ५ ध्वजा, ६ पताका, ७ चमर, ८ मणिरत्नों से जड़ा सिंहासन आदि अनेक मांगलीक (पूर्वोक्त वृत्तांत के अनुसार) मुंह के सामने चल रहे हैं।

२०. तिवार पछें मुख आगल हो, रत्न एकंद्री सात।
अनुक्रमें चाल्या रूडी रीत सूं हो, ते प्रसिध लोक विख्यात।।

२१. चक्र छत्र रलीयांमणा हो, चर्म नें दंड वखांण।
असी मणी रत्न नें कागणी हो, चाल्या वनीता नें जांण।।

२२. नव निधांन आगें चालीया हो, नगरी वनीता नें जाय।
वळे सोल सहंस देवता हो, चाल्या अनुक्रमें ताहि।।

२३. तदानंतर पूठें चालीया हो, राजा बत्तीस हजार।
सात रत्न पंचिंद्री चालीया हो, अनुक्रमें तिणवार।।

२४. जीत लीधो ते राज छ खंड नो हो, ते तो संसार नों छें सूर।
आतमा वेरण जीतनें हो, कर्म करसी चकचूर।।

◆

२०,२१. उसके बाद मुंह के सामने लोकप्रसिद्ध मनोहर सात एकेंद्रियरत्न १ चक्ररत्न, २ छत्ररत्न, ३ चर्मरत्न, ४ दंडरत्न, ५ असिरत्न, ६ मणिरत्न, ७ कांकिणीरत्न अनुक्रम से व्यवस्थित रूप से चल रहे हैं।

२२. उसके बाद नौ निधान तथा सौलह हजार देवता विनीता नगरी की ओर *अनुक्रम से चल रहे हैं।*

२३. उनके पीछे बत्तीस हजार राजा तथा सात पंचेंद्रिय रत्न चल रहे हैं।

२४. भरतजी ने छह खंडों का राज्य जीत लिया, यह तो संसार का शौर्य है। आगे आत्मा रूपी शत्रु को जीतकर कर्मों को चकचूर करेंगे।

◆

दुहा

१. रितु कन्या छें किल्याण कारणी, त्यांरो फरस घणो सुखदाय।
सुखकारी इमृत समांण छें, ते बत्तीस सहंस छें ताहि।।

२. बत्तीस सहंस किन्या रलीयांमणी, ते पिण रूप अनूंप।
जनपद देस तणा राजा मुखी, त्यांरी पुत्री छें अतंत सरूप।

३. अें चोसठ सहंस अंतेवरी, दोय दोय वारंगणा एक एक लार।।
इतरी अस्त्री भरत नरिंद रे, एक लाख नें बाणू हजार।

४. अें पिण सारी अनुक्रमें नीकली, वनीता नगरी नें ताहि।।
बत्तीस सहंस नाटक विध बत्तीस ना, अें पिण आगल चलीया जाय।

५. रसोइदार तीन सों नें साठ छें, अनुक्रमें चाल्या रूडी रीत।।
अठारें श्रेणी प्रश्रेणी पिण चालीया, ते प्रसिध लोक वदीत।

६. घोडा हाथी रथ रलीयांमणा, चोरासी चोरासी लाख जांण।।
वळे पायक छिनूं कोडते, अें पिण चाल्या छें रीत परमांण।।

७. इत्यादिक सर्व कह्या तके, अनूक्रमें चाल्या छें जांण।
आ रिध मिली सर्व भरत नें, ते पुन तणे परमांण।।

ढाळ : ५१

(लय : झूठो बोल्यो जादवा)

मीठों छें पुन संसार में।।

१. मीठों छें पुन संसार में, तिणसूं राच रह्या सहु लोक।
पुन विना इण संसार में, लोक गिणें सहु फोक।।

दोहा

१. कल्याणकारिणी बत्तीस हजार ऋतु कन्याएं हैं। वे अमृत के समान सुखकारी हैं। उनका स्पर्श अत्यंत सुखदायक है।

२. वे मनोहर एवं अनुपम रूप वाली बत्तीस हजार कन्याएं अनेक जनपदों के राजाओं और राजप्रमुखों की पुत्रियां हैं।

३,४. एक-एक कन्या के साथ दो-दो बारंगणा के हिसाब से चौसठ हजार तथा कुल मिलाकर एक लाख बानवे हजार स्त्रियों का अंत:पुर भरतजी के साथ विनीता नगरी में अनुक्रम से चल रहा है। उनके पीछे बत्तीस हजार नर्तक बत्तीस प्रकार के नृत्य करते हुए चल रहे हैं।

५. उनके पीछे तीन सौ साठ रसोइये अनुक्रम से चल रहे हैं। उनके पीछे सर्वलोक प्रसिद्ध अट्ठारह श्रेणि-प्रश्रेणि के लोग भी चल रहे हैं।

६. फिर चौरासी लाख मनोहारी हाथी, घोड़े, रथ तथा छिन्नु करोड़ पैदल सैनिक विधिपूर्वक चल रहे हैं।

७. उपर्युक्त सभी अनुक्रम से चल रहे हैं। पुण्य के प्रमाण से भरतजी को यह ऋद्धि-संपदा प्राप्त हुई है।

ढाळ : ५१

संसार में पुण्य मधुर है।

१. इसीलिए सब लोग इसमें रुचि ले रहे हैं। पुण्य के बिना संसार में सब लोग सबको व्यर्थ मानते हैं।

२. पुन सूं पामें सर्व संपदा, पुन छें संपत मूल।
वळे पदवी पांमें मोटकी, पुन सबे अनुकूल।।

३. भरत नरिंद सर्व लोक नें, मीठों लागें अमीय समांण।
वळे पुन तणा परताप थी, कुण कुण मिलें संपत आंण।।

४. भरत नरिंद राजंद नी, करें छें देवता टेंहल।
जिहां वासो रहें तिहां करें, बयालीस भोमीया मेंहल।।

५. ते महल बयालीस भोमीया, ते सर्व रत्न जडंत।
ते दीसें घणा रलीयांमणा, त्यां मेंहलां में कील करंत।।

६. त्यां मेंहलां रे जाल्या नें गोखडा, कर रह्या अतंत उद्योत।
तिहां हीरा मणी रत्नां तणी, लागी झिगामग जोत।।

७. कटक पडाव करें तिहां, त्यां सगलां नें रहिवा निवास।
जथाजोग करें देवता, घर हाट मंदर आवास।।

८. अधीपति भरत खेत नो, जांणक पुनम चंद।
इंद्र तणी तिणनें ओपमा, तिण दीठां पांमें आणंद।।

९. देव देव्यां रा वृंद नमावीया, भेटणा ले सेवग थाप।
सीख दीधी छें आंण मनाय नें, ते पिण पुन तणो परताप।।

१० भरत खेत्र ना राजा भणी, सगलां नें कर दीधी रेत।
सगलां नें सेवग ठहराय नें, आप ठहस्या छें सगलां रा म्हेंत।।

११. हुकम फुरमावें जो एक नें, जब हाजर हुवें छें अनेक।
जी जी कार करें सहू, ते पुन तणों छें विसेख।।

२. पुण्य से संपदाएं सामने आकर मिलती हैं। यही सम्पत्ति का मूल है। पुण्य से बड़ी-बड़ी पदवियां मिलती हैं। पुण्य से सब कुछ अनुकूल हो जाता है।

३. पुण्य के प्रताप से भरत नरेंद्र सब लोगों को अमृत के समान मीठा लगता है। उसको कैसी-कैसी संपदाएं प्राप्त हुई हैं।

४. देवता भी भरत राजेंद्र की सेवा करते हैं। वह जहां निवास करता है वहां बयालीस मंजिल के महल खड़े रहते हैं।

५. वे रत्नजटित बयालीस मंजिल के महल दीखने में भी सुंदर लगते हैं। भरतजी वहां क्रीड़ा करते हैं।

६. उन महलों के जाली-झरोखे अत्यंत प्रकाशकर हैं। वहां हीरों तथा मणिरत्नों की जगमग ज्योति जग रही हैं।

७. सेना जहां पड़ाव करती हैं वहां सबके यथायोग्य घर-दुकान मंदिर आदि आवास-निवास की व्यवस्था भी देवता करते हैं।

८. भरतक्षेत्र का अधिपति पूनम के चंद्रमा के समान लगता है। उस इंद्रोपम राजा को देखने से ही आनंद का अनुभव होता है।

९. देव-देवियों के वृंद को उन्होंने नतमस्तक कर दिया। उनके उपहार लेकर उन्हें अपना सेवक स्थापित कर, आज्ञा मनवाकर उन्हें विदा किया। यह सब पुण्य का प्रताप है।

१०. भरतक्षेत्र के समस्त राजाओं को अपनी प्रजा बना लिया। सबको सेवक स्थापित कर स्वयं सबके महंत बन गए हैं।

११. वे एक को आज्ञा देते हैं तो अनेक हाजिर हो जाते हैं। सभी जी हां-जी हां करते हैं, यह पुण्य की विशेषता है।

१२. तिण बोल्यां थकां आगलों, होय जाए चुपचाप।
वळे पुन तणा परताप थी, तप तेज घणों छें आताप।।

१३. गमतो घणों लागें छें सकल नें, तिणरी बोली छें अमीय समांण।
ते बोल्यां लागें सूहांमणो, ते पुन तणा फल जांण।।

१४. सर्व संजोग आए मिल्या, शब्दादिक सुख अनूंप।
जे जे छें रिध संपदा, ते पुन तणों छें स्वरूप।।

१५. भरत नरिंद सुख भोगवें, पूर्व तपना फल जांण।
तप करतां पुन बांधीया, ते हीज उदें हूआ आंण।।

१६. ज्यां लग पुन छें जिण जीव रे, गमतो लागे छें सगलां नें ताहि।
पुन वरवारयां इण जीव रे, वाला ते वेंरी होय जाय।।

१७. पुनवंत रा सगला सझें, मन रा चिंतव्या काज।
जे हीण पुन हुवे जीवरा, त्यांनें रोयां मेले नही राज।।

१८. पुन विहूणा जे मांनवी, त्यांरो चिंतव्यों निरफल थाय।
जे आसा मन में धरें, ते आल माल हो जाय।।

१९. जे सुख भोगवें संसार में, ते पुन तणा फल जांण।
जे दुख उपजें संसार में, ते पाप तणें परमांण।।

२०. जे पुन थकी हरषत हुवें, पाप थी पामें सोग संताप।
दोनूं प्रकारें जीव बापडा, बांधें निकेवल पाप।।

२१. पुन तणा सुख कारिमा, जेहवी छें सुपना री माय।
ते वार न लागें छें विणसतां, थोडा में आल माल होय जाय।।

२२. पुन तो सुख छें संसार ना, मोख लेखें सुख छें नांहि।
ज्यां मोख तणा सुख ओलख्या, ते रीझें नहीं इण मांहि।।

१२. उनके बोलने पर सामने वाला अपने आप चुप हो जाता है। पुण्य के प्रताप से उनका तप-तेज-आताप भी विशिष्ट है।

१३. वे सबको प्रिय हैं। उनकी बोली अमृत के समान हैं। उनका बोलना सबको सुहामना लगता है। यह पुण्य का स्वरूप है।

१४. शब्द आदि की ऋद्धि-संपदा के जो भी अनुपम सुख संयोग आकर मिले हैं, वे सब पुण्य के स्वरूप हैं।

१५. पूर्व तप के फलस्वरूप भरतजी ये सब सुख भोग रहे हैं। तप करने से जो पुण्यबंध हुआ वही अब उदय में आया है।

१६. जिस जीव के जब तक पुण्य हैं तब तक वह सबको प्रिय लगता है। जब पुण्य नष्ट हो जाते हैं तो स्नेही भी बैरी बन जाता है।

१७. पुण्यवान् के मन चिंतित सब कार्य सिद्ध होते हैं। पुण्यहीन प्राणी को रोने पर भी राज्य नहीं मिलता है।

१८. पुण्यहीन मनुष्य का चिंतित भी निष्फल हो जाता है। वह मन में जो भी आशा करता है वह विलुप्त हो जाती है।

१९. संसार में जो भी सुखोपभोग किया जाता है, वह पुण्य का फल है तथा जो दुःख उत्पन्न होता है वह पाप का परिणाम है।

२०. जो जीव पुण्य से हर्षित होता है तथा पाप से शोक संतप्त होता है, इन दोनों ही प्रकारों से वह बेचारा एकांत पाप का बंधन करता है।

२१. पुण्य के सुख स्वप्न की माया की तरह नाशमान हैं। उनके विनष्ट होने में देर नहीं लगती। थोड़े में ही वे विलुप्त हो जाते हैं।

२२. पुण्य संसार के सुख हैं। मोक्ष के हिसाब से वे सुख नहीं हैं। जिन्होंने मोक्ष के सुखों को पहचान लिया वे इनमें अनुरक्त नहीं होते।

२३. पुन तणा सुख रोगला, खाज रोग तणे दिसटंत।
तिणरी तो वंछा करणी नही, ते भाख्यों छें श्री भगवंत।।

२४. पुन तणी जिण वंछा करी, तिण वंछीया काम नें भोग।
तिण सार जांण्यों छें संसार नें, तिणरे मोटो मिथ्यात नो रोग।।

२५. निरवद करणी करें जेहनें, जब पुन लागे छें आय।
ते पुन भोगवीयां विना, सिवपुर नगर न जाय।।

२६. जीव राजी हुवें पुन भोगव्यां, तो बंध जाअें पाप ना पूर।
तिण पाप थकी दुख भोगवें, दलदर रहें छें हजूर।।

२७. पुन रा तों सुख पुदगल तणा, त्यांमें कला म जांणो काय।
निज गुण रा सुख मोख में, त्यांरो अंत कदे नही आय।।

२८. इण पुन थकी भोग पांमीया, त्यांनें जांणें छें जहर समांन।
त्यांनें जाबक छांडेनें भरत जी, लेसी चारित निधांन।।

२९. त्यांनें छोडतां जेझ न आणसी, त्यांसूं जाबक विरकत होय।
दिख्या ले जावसी मोख में, सासता सुख पांमसी सोय।।

◆

२३. पुण्य के सुख पांम के दृष्टांत की तरह रुग्ण हैं। भगवान् ने कहा है– उनकी कामना नहीं करनी चाहिए।

२४. जो पुण्य की कामना करता है वह कामभोगों की कामना करता है। जिसने संसार को सारपूर्ण समझा है, उसके मिथ्यात्व का महारोग है।

२५. निरवद्य करणी करने से जब पुण्य का बंध होता है उसे भोगे बिना मोक्ष में नहीं जाया जा सकता।

२६. यदि जीव पुण्यभोग से खुश होता है तो ढेर सारे पापों का बंध हो जाता है। उससे दुःख भोगना पड़ता है। दारिद्र्य सामने उपस्थित हो जाता है।

२७. पुण्य के सुख पौद्गलिक हैं। उनमें कोई कला-कौशल नहीं समझें। आत्मसुख मोक्ष में हैं। वे अनंत हैं।

२८. भरतजी ने पुण्य से जिन भोगों को प्राप्त किया, उन्हें वे जहर के समान जानते हैं। उन्हें भी बिल्कुल छोड़कर चरित्र निधान ग्रहण करेंगे।

२९. उन्हें छोड़ने में विलंब नहीं करेंगे। उनसे बिल्कुल विरक्त हो जाएंगे। दीक्षा ग्रहण कर मोक्ष के शाश्वत सुखों को प्राप्त करेंगे।

◆

दुहा

१. भरत नरिंद राजंद रा, भारी छें पुन असमांन।
ते आवे छें वनीता नें चालीयों, त्यांरें साथे घणा छें राजांन।।

२. मोटें मंडांण सूं आवें चालीया, लारें कह्यों ते सर्व विसतार।
सुखे सुखे मिजल करता थका, चक्र रत्न तणें अनुसार।।

३. सारी सेन्या सहीत परवरया थका, पडें वाजंत्र ना धूंकार।
बत्तीस विध नाटक पडावता, एहवा नाटक बत्तीस हजार।।

४. त्यांरा मुख आगें कुण कुण चालीया, अनुक्रमें जथातथ जांण।
आगें कह्या नें कहूं वळे, तिणरी बुधवंत करजों पिछांण।।

ढाळ : ५२

(लय : धर्म दलाली चित करें)

ते चालें भरत जी रें आगलें।।

१. घणा खडग लीयां थका हाथ में, लष्टि नें धनुष ना धरणहारो जी।
पासा नें पुस्तक हाथां झालीया, घणा रे वीणा हाथ मझारो जी।

२. तंबोलधरा नें दीवीधरा, चाल्या पोंता पोंता नें सरूपों जी।
पोता पोता नें वसत्र पहरणें, मुख आगलें चालें दीसें अनूपो जी।।

३. वळे कुण कुण चालें मुख आगलें, अनूक्रमें सोभें रूडी रीतो जी।
घणा दंडधरा दंडी लीयां, जटाधरा ते जटा सहीतो जी।।

४. मोर पीछीधरा पिण अनेक छें, वळे मुस्तक मूंडा अनेको जी।
सिखाधारी सिखावंत अनेक छें, हासा ना करणहार वशेखो जी।।

दोहा

१. भरत राजेंद्र के पुण्य प्रबल हैं, अतुल्य हैं। वे विनीता की ओर चले हुए आ रहे हैं। उनके साथ में अनेक राजा हैं।

२,३. पूर्वोक्त विस्तार के अनुसार वे बड़े आडंबर से सुखे-सुखे मंजिल-दर-मंजिल चलते हुए, सारी सेना से परिवृत्त होकर, वाद्ययंत्रों की धुंकार के साथ, बत्तीस प्रकार के बत्तीस हजार नाटक करवाते हुए चक्ररत्न की गति के अनुसार चल रहे हैं।।

४. उनके आगे-आगे यथायोग्य अनुक्रम से कौन-कौन चले उनका पीछे भी वर्णन किया, आगे फिर कह रहा हूं। बुद्धिमान उनकी सही पहचान करें।

ढाळ : ५२

ये भरतजी के आगे-आगे चल रहे हैं।

१. अनेक लोग हाथ में खड्ग लिए हुए हैं, अनेक लोग लाठी तथा धनुषधारी हैं, अनेक लोग हाथ में पासे, पुस्तक लिए हुए हैं, अनेकों के हाथ में बीणा है।

२. अनेक तम्बोलधारी एवं मशालची अपने-अपने स्वरूप तथा अपनी-अपनी वेष-भूषा में आगे-आगे चलते हुए अनुपम दीख रहे हैं।

३. फिर अनेक दंडधारी दंड लिए हुए तथा जटाधारी जटा सहित आगे-आगे अनुक्रम से चलते हुए सुशोभित हो रहे हैं।

४. अनेक मोरपिंछीधारी हैं, अनेक मुंड मस्तक हैं, अनेक सुशिक्षित विदूषक भी है।

५. द्रव्यकारी कतूलकारी घणा, कंदरप री कथा कहता अनेको जी।
कुंकुई कुचेष्टा करें घणा, मुखअरी वाचाल विशेखो जी।।

६. गीत गावता मुख आगल घणा, घणा वजावंता तामो जी।
नाचता हसता रमता थका, केइ कीला करंता ठांम ठांमो जी।।

७. केइ गीत माहोमा सीखावता, केई संभलावे माहोमा गीतो जी।
केइ सुभ वचन मुख बोलता, केइ सुभ बोलावता रूडी रीतो जी।।

८. केइ सोभा सिणगार करता थका, केइ करता अनेक विध फेंनों जी।
केई ओरां तणों रूप देखता, यां सगलां रा जूआ जूआ चेंहनों जी।।

९. केइ जय जय सब्द प्रजूंजता, केइ जय जय बोलतां तांमो जी।
केइ मुख मंगलीक बोलता थका, मुख आगल बोले छें ठांम ठांमों जी।।

१०. अनुक्रमें सगलाइ चालता, उवाइ सुतर रे अनुसारो जी।
जाव आश्व नें आश्वधरा, त्यांरो विविध प्रकारें विस्तारो जी।।

११. नाग हस्ती बेहूं पासें चालता, वळे त्यांरा झालणहारो जी।
वळे बेहूं पासें रथ नें पालख्यां, चालता सोभें छें श्रीकारो जी।
भरत वनीता नें चालीयो।।

१२. हस्ती रत्न बेठों सोंभें नरपती, जांणक पुनम चंदो जी।
रिध करनें परवर्‍यों थकों, जांणें सांप्रत दीसें देविंदो जी।।

१३. चक्ररत्न देखाले मारगें, चालें छें भरत नरिंदो जी।
त्यारिं पूठें पूठें आवें चालीया, अनेक राजां रा वृंदो जी।।

१४. मोटें आडंबर सूं आवता, समुद्र नी परें करता किलोंलो जी।
सर्व रिध जोत करनें परवर्‍या, सीहनाद ज्यूं करता हिलोलो जी।।

५. अनेक कौतुक करने वाले, कंदर्प कथा कहने वाले, अनेक कौत्कुच्य करने वाले तथा मुखर वाचाल भी हैं।

६. अनेक गीत गाते हुए, अनेक वाद्य बजाते हुए तथा अनेक नृत्य करते हुए, हंसते हुए, स्थान-स्थान पर क्रीड़ा रमत करते हुए।

७. अनेक परस्पर गीत सिखाते हुए-परस्पर गीत सुनाते हुए, अनेक मुंह से शुभ वचन बोलते-बुलबाते हुए।

८. अनेक शोभा-शृंगार तथा अनेक प्रकार के फेन-फितूर करते हुए।

९,१०. अनेक जय-जय शब्दों का प्रयोग करते हुए, अनेक मुंह से मंगल वाचन करते हुए, स्थान-स्थान पर मुख के आगे घोड़े-घुड़सवार आदि विविध विस्तार के साथ औपपातिक सूत्र के अनुसार अनुक्रम से चल रहे हैं।

११. दोनों ओर नाग हस्ती उनके महावत, रथ तथा पालकियां सम्यग् रूप से चलती हुई सुशोभित हो रही है। इस तरह भरत विनीता की ओर चल रहा है।

१२. भरत नरपति हस्तीरत्न पर बैठे हुए पूनम के चंद्रमा की तरह सुशोभित हो रहे हैं। ऋद्धि से परिवृत्त प्रत्यक्ष देवेंद्र की तरह दिखाई देते हैं।

१३,१४. चक्ररत्न के द्वारा दिखाए गए मार्ग से भरत नरेंद्र चल रहे हैं। उनके पीछे-पीछे राजाओं के अनेक वृंद समुद्र की तरह कल्लोल करते हुए बड़े आडंबर से आ रहे हैं। वे सर्वरुद्धि ज्योति से परिवृत्त सिंहनाद की तरह हिलोरें ले रहे हैं।

१५. निरघोष वाजंत्र वाजता थका, सुखें सुखें चालें तांमों जी।
जोजन जोजन रें आंतरें, लेता थका विसरांमों जी।।

१६. अें तो नगर वनीता आयनें, करसी वनीता नो राजो जी।
राज छोडेनें जासी मोक्ष में, सारसी सर्व आत्म काजो जी।।

◆

१५. निर्घोष वाद्ययंत्र के बजते हुए सुखपूर्वक एक-एक योजन के अंतराल से विश्राम करते हुए चल रहे हैं।

१६. भरतजी विनीता में आकर विनीता का राज्य कर अंत में इसे छोड़कर मोक्ष में जाएंगे, आत्मा के सारे कार्य सिद्ध करेंगे।

◆

दुहा

१. इण विध वनीता आवतां विचें, गांम नगरादिक ताहि।
त्यां सगलां नें आंण मनायनें, भेटणों लेइ सेवग ठहराय।।

२. वासो लेता लेता आवीया, वनीता राजध्यांनी तांम।
वनीता सूं नेंरा अलगा नहीं, कटक उतार्यों तिण ठांम।।

३. वनीता राजध्यांनी तेहनों, बारमों तेलों कीयों तिण ठांम।
तिणरों विस्तार छें पाछली परें, ते सगलोंइ कहणों छें आंम।।

४. तीन दिन पूरा हूआं, नीकल्या पोषधसाला थी बार।
पाछें कही छें तिण विधें, हस्ती रत्न हुआ असवार।।

५. नव निधांन नें सेन्या चउरंगणी, त्यांनें थापे वनीता बार।
सेष पिरवार सहीत सूं, हूआ वनीता नें त्यार।।

६. भरत जी नें जांण्यां आवता, घणा हरष हूआ छें ताहि।
ते वधावें छें भरत नरिंद नें, ते विध सुणजों चित्त ल्याय।।

ढाळ : ५३

(लय : सुखे नें वधावो किसन नरिंद नें रे)

सुखे नें वधावो रे भरत नरिंद नें रे।।

१. सुखे नें वधावो रे भरत निरंद नें रे, भर भर मोतीडां री थाल।
वळे मण मांणक हीरा पना तेहथी रे, वधावों भरत भूपाल।

२. एहवा सबद सुणे सहू हरखीया रे, हुय गया तुरत तयार।
रत्नादिक ना भारी भारी भेटणा रे, त्यां लीधां छें हाथ मझार।।

दोहा

१. इस प्रकार विनीता आते समय बीच में जो भी ग्राम-नगरादि आते हैं, वहां अपनी आज्ञा स्वीकार करवाकर, उपहार स्वीकार कर अपने सेवक स्थापित करते हैं।

२. यों विश्राम लेते हुए विनीता राजधानी के न निकट न दूर अपनी सेना का पड़ाव करते हैं।

३. विनीता नगरी में आकर बारहवां तेला करते हैं। इसका सारा विस्तार पूर्वोक्त रूप से कहना चाहिए।

४. तीन दिन पूरे होने पर पौषधशाला से बाहर निकल कर पूर्वोक्त रूप से हस्तीरत्न पर सवार हुए।

५. नौ निधान तथा चतुरंगिणी सेना को विनीता के बाहर स्थापित कर, शेष परिवार के साथ नगरी में प्रवेश कर रहे हैं।

६. भरतजी के आगमन की बात जानकर सभी हर्षित होते हैं। वे भरत नरेंद्र का वर्धापन करते हैं उस विधि को चित्त लगाकर सुनें।

ढाळ : ५३

सुखपूर्वक भरत नरेन्द्र का वर्धापन करो।

१. मोती, मणि, माणक, हीरा तथा पन्ना के थाल भर-भरकर सुखपूर्वक भरत नरेंद्र का वर्धापन करो।

२. ऐसे शब्द सुनकर सब हर्षित हुए। रत्नादि के बड़े-बड़े उपहार हाथ में लेकर तुरंत तैयार हो गए।

३. सगलों साथ भेलों होय नीकल्यों रे, भरत जी स्हांमा जाय।
मन रो उछाव छें त्यांरे अति घणो रे, जांणें वेगा वधावां जाय।।

४. वाजंत्र गीत नाद रलीयांमणा रे, साथीयादिक श्रीकार।
ध्वजा पताकादिक मंगलीक नों रे, त्यांरो वहुत कीयों विस्तार।।

५. हीरां नें फेस्या दासी चिमरी थकी रे, साथीयो कीयों श्रीकार।
इसरो बल कह्यों छें दासी तणो रे, ओं तों कही छें कथा अनुसार।।

६. ते हीरा वजर कठण छें एहवा रे, त्यांनें मेहलें अेंहरण मझार।
कोइ बलवंत घणरी देवें जोरसुं रे, तिणरें मोचें न पडें लिगार।।

७. कें तों उछल हीरों अलगों पडें रे, के पेसें अेंरण मझार।
के पेसें हीरो घण तेहमें रें, पिण मोचों न पडें लिगार।।

८. एहवा हीरा फेस्या चमटी थकी रे, ते दासी घणी बलवांन।
त्यां हीरां तणों दासी कीयों साथीयो रे, वधावण भरत राजांन।।

९. ते नगर वनीता विचें होय नीकली रे, गया भरत जी रें पास।
भरत नरिंद राजा नें देखनें रे, त्यांरें हूवों हरष हुलास।।

१०. अंजली जोड बोलें विडदावली रे, करें घणा गुणग्रांम।
विविध प्रकारें लेवें छें उवारणा रे, विनें सहीत बोलें सीस नांम।।

११. थे सुखे समाधे भलांइ पधारीया जी, वनीता नगर मझार।
तुम्ह दरसणरा हुंता म्हे साभला रे, ते म्हें दीठों छें आज दीदार।।

१२. विरहो पड्यों तुमना दरसण तणो जी, साठ हजार वरष एक धार।
इत्यादिक अनेक वचन कहिता थका रे, हरष आंसूं काढें तिणवार।।

१३. भारी भारी भेटणा आंण्या तके रे, मेल्या भरत जी रे पाय।
त्यांरा तो भेटणा लीया छें रूडी रीत सूं रे, जू जूआ मीठें वचन बोलाय।।

३. सारा सार्थ (परिवार) सम्मिलित होकर मन में अत्यंत उत्साह से भरतजी के सामने जा रहा है। सोचता है कि जल्दी जाकर वर्धापन करें।

४. श्रेष्ठ रुचिकर गीत-संगीत, वाद्ययंत्र, स्वस्तिक, ध्वजा, पताका आदि मांगलिकों का बहुत बड़ा विस्तार किया गया।

५. दासी ने अपनी चिमटी से हीरे को पीसकर श्रेष्ठ स्वस्तिक किया। दासी का ऐसा जो बल कहा गया है यह कथा के अनुसार है।

६. हीरे वज्र के समान इतने कठोर होते हैं कि उन्हें एरण पर रखकर कोई बलशाली घन से जोर से चोट करे तो भी जरा-सी खरोच नहीं आती।

७. या तो हीरा उछलकर अलग पड़ जाता है या एरण में प्रवेश कर जाता है या वह घन में प्रवेश कर जाता है पर उसमें किंचित् भी मोच नहीं आती।

८. ऐसे हीरों को दासी ने चिमटी से पीस दिया। वह दासी बड़ी बलवती है। उसने ऐसे हीरों से स्वस्तिक उकेर कर वर्धापन किया।

९. वह विनीता नगरी के मध्य से होकर निकली और भरतजी के पास पहुंची। भरत नरेंद्र को देखकर उसको अत्यंत हर्ष-उल्लास हुआ।

१०. अंजली जोड़कर प्रशंसा करती हुई गुणगान करती है। विविध प्रकार की बलैया लेती है, शीष झुकाकर विनयपूर्वक बोलती है।

११. आप सुख-समाधिपूर्वक विनीता नगरी में भले पधारे। हम आपके दर्शन के लिए सामने आए हैं। हमें आज आपके दर्शन हुए।

१२. हमें लगातार साठ हजार वर्षों तक आपके दर्शनों का विरह पड़ा। इस प्रकार अनेक वचन कहते हुए हर्ष के आंसू निकल पड़े।

१३. वे जो बड़े-बड़े उपहार लाए थे, उन्हें भरतजी के चरणों में उपस्थित किए। भरतजी ने भी प्रसन्नता से उनके उपहारों को स्वीकार किया। उन्हें अलग-अलग मधुर वचन से आश्वस्त किया।

१४. त्यांमें केयक तो न्यातीला आपरा रे, केयक निज परिवार।
केयक नगरी मांहें हुंता मोटका रे, त्यांरों काण कुरब इधिकार।।

१५. त्यां सगलां नें भरत नरिंद रूडी रीत सूं रे, दीयों घणों सनमांन।
वळे सतकार दीयो सगलां भणी रे, जथाजोग भरत राजांन।।

१६. सीख दीधी सगलां नें संतोषनें रे, मीठें वचन बोलाय।
सेवग नें सांमी री रीत सू रे, घणा राजी करनें ताहि।।

१७. वनीता राजध्यांनी रे बाहिरे रे, उतरीया भरत जी आय।
ते खबर हुई वनीता नगरी मझे रे, हरष हूवों छें घर घर मांहि।।

१८. उछाव लागों लोकां रे अति घणो रे, देखण रो लग रह्यो ध्यांन।
उछछल होय रह्या छें अति घणा रे, जांणक देखां भरत राजांन।।

१९. घणा लोक माहोमा मिलनें इम कहें रे, भलां उगो दिन आज।
भरतजी नगरी वनीता आवीया रे, भरत खेत्र छ ही खंड साज।।

२०. राजा देस साहजे घर आवीया रे, दुख नहीं दे किणनें लिगार।
वळे सार संभाल करें सर्वलोक री रे, तिणसूं हरखें छें घर घर मझार।।

२१. पुन परतापें हरख सारां तणे रे, तिण हरख नें कारमों जांण।
ते हरष छोडेनें चारित लेवसी रे, कर्म काटे जासी निरवांण।।

◆

१४,१५. उन लोगों में कुछ तो ज्ञाति-न्यातिजन थे, कुछ पारिवारिकजन थे। कुछ नगर के प्रतिष्ठित जन थे। उनके मान, प्रतिष्ठा और अधिकार के अनुसार भरतजी ने सम्यग् रूप से सबको यथोचित सम्मान-सत्कार दिया।

१६. सेवक और स्वामी की रीति के अनुसार मधुर वचन से संतुष्ट कर सबको विदा किया।

१७. भरतजी के विनीता नगरी राजधानी के बाहर उतरने की खबर हुई तो नगरी में घर-घर में खुशियां छा गईं।

१८. लोग उन्हें देखने के लिए अत्यंत उत्साहित हो गए। उत्कंठित होकर प्रतीक्षा करने लगे कि कब भरतजी के दर्शन करें।

१९. बहुत सारे लोग परस्पर मिलकर ऐसा कहने लगे कि आज भला दिन उदित हुआ है। भरतजी छहों ही खंडों को सिद्ध कर विनीता नगरी में आए हैं।

२०. भरतजी विदेशों को सिद्ध कर घर आए हैं। किसी को किंचित् भी दुःख नहीं देते। सबकी सार-संभाल करते हैं, इसलिए घर-घर में हर्ष हो रहा है।

२१. पुण्य के प्रताप से सब लोग हर्षित हैं। वे उस हर्ष को भी अनित्य जानकर उसे छोड़कर चारित्र ग्रहण कर कर्म काटकर मोक्ष में जाएंगे।

◆

दुहा

१. हिवें भरत राजंद तिण अवसरें, कर मोटें मंडांण।
आवें नगरी वनीता मझे, हरष घणों मन आंण।।

२. निरघोष वाजंत्र वाजतां थका, सीहनाद ज्यूं करता गूंजार।
निज भवन घर स्हांमां चालीयां, साथे लीयां रिध विसतार।।

३. वनीता राजध्यांनी तेह में, प्रवेस कीयों तिणवार।
कुण कुण महोछव देवता करें, ते सुणजों विसतार।।

ढाळ : ५४

(लय : राम पधारीया जी)

भरत पधारीया जी।।

१. भरत राजंद पधारीया जी, नगर वनीता तेह।
त्यांरा महोछव करें छें देवता जी, आंणी इधिक सनेह।

२. एक एक देवता तिण समें जी, आंणी पोरस पूर।
वनीता नें बाहिर भिंतरें जी, कचरों कर दीयो दूर।।

३. एक एकीका देवता जी, करें महोछव आंम।
वनीता नें अभिंतर बाहिरे जी, पांणी छड़के ठांम ठांम।।

४. एक एकीका देवता जी, करवा लागा छें आंम।
वनीता नें अभिंतर बाहिरें जी, लीपें छें ठांम ठांम।।

५. एक एकीका देवता जी, पांच वरणा रंगा नीं तांम।
वनीता नें अभिंतर बाहिरें जी, धजा पताका बांधे ठांम ठांम।।

दोहा

१. अब प्रसन्नमना भरत राजेंद्र ठाठ-बाट के साथ विनीता नगरी में प्रवेश रहे हैं।

२. वाद्ययंत्रों के निर्घोष के बीच सिंहनाद की तरह गुंजारव करते हुए ऋद्धि-विस्तार के साथ अपने भवन-घर की ओर बढ़ रहे हैं।

३. विनीता राजधानी में प्रवेश करते समय देवता कैसे-कैसे महोत्सव करते हैं, उसका विस्तार सुनें।

ढाळ : ५४

भरतजी पधार रहे हैं।

१. भरत नरेंद्र विनीता नगर में पधार रहे हैं। देवता सस्नेह उनका महोत्सव कर रहे हैं।

२. उस समय कुछ देवताओं ने पूरे पौरुष के साथ विनीता के अंदर तथा बाहर का कचरा दूर कर दिया।

३. कुछ देवताओं ने विनीता के अंदर और बाहर स्थान-स्थान पर जल छिड़क कर महोत्सव मनाया।

४. कुछ देवताओं ने विनीता को अंदर और बाहर से स्थान-स्थान पर लीपना शुरू कर दिया।

५. कुछ देवता विनीता के भीतर और बाहर स्थान-स्थान पर पंचरंगी ध्वजा-पताकाएं बांधने लगे।

६. एक एकीका देवता जी, चंदरवा बांधें ठांम ठांम।
केइ गोसीसा चंदण तणा जी, छापा देवें अभिरांम।।

७. केइ रक्त चंदण तणा जी, ठांम ठांम छापा दें ताहि।
केइ फुल तणी विरखा करें जी, नगरी बाहिर नें माहि।।

८. केइ ठांम ठांम करें धूपणों जी, अगर तगर उखेव।
केइ सुगंध तणी विरखा करें जी, एकीका देवता सयमेव।।

९. केइ रूपा तणी विरखा करें जी, केइ सोवन वरसावें तांम।
केइ रत्न तणी विरखा करें जी, माहि नें बाहिर ठांम ठांम।।

१०. केइ देवता वजर हीरां तणी जी, विरखा करें तिण वार।
केइ आभरण विविध प्रकार ना जी, त्यांरी विरखा करें वारूंवार।।

११. केइ मांचा उपर मांचा मांडता जी, रूडी रीत रचें छें तांम।
इत्यादिक कीया सर्व देवता जी, भरतजी रा महोछव कांम।।

१२. घर घर रंग वधावणा जी, घर घर मंगलाचार।
घर घर गावें गीतडा जी, मुख मुख जय जयकार।।

१३. घर घर महोछव जू जूआ जी, महोछव मंडाणा ताहि।
रंगरली घर घर हुइ जी, मन माहे हरष न माय।।

१४. वळे वनीता नगरी मझे जी, प्रवेस करत तिणवार।
तीन च्यार मारग मिलें तिहां जी, वळे माहापंथ मझार।।

१५. तिहां केइ अर्थनां लोभीया जी, ते मुख सूं करें गुणग्रांम।
केइ अर्थी कांमभोग ना जी, लाभ अर्थी छें तांम।।

१६. केइ अर्थी छें विविध प्रकार नी जी, रिध ना अर्थी अनेक।
ते पिण तिहां आए मिल्या जी, त्यांर जू जूइ चाहि विशेख।।

६. कुछ देवता स्थान-स्थान पर वितान बांधने लगे तो कुछ देवता गोशीर्ष चंदन के आकर्षक छापे लगाने लगे।

७. कुछ देवता नगरी के भीतर और बाहर रक्त चंदन के छापे लगाने लगे तो कुछ देवता फूलों की वर्षा करने लगे।

८. कुछ देवता स्वयमेव स्थान-स्थान पर अगर-तगर के धूप का उत्क्षेप करने लगे तो कुछ सुगंध की वर्षा करने लगे।

९. कुछ देवता अंदर और बाहर स्थान-स्थान पर सोने-चांदी की वर्षा करने लगे तो कुछ देवता रत्नों की वर्षा करने लगे।

१०. कुछ देवता वज्र हीरों की वर्षा करने लगे तो कुछ बारंबार विविध प्रकार के आभरणों की वर्षा करने लगे।

११. कुछ देवता मंचों पर मंचों की सम्यग् प्रकार से रचना करने लगे। इस प्रकार सभी देवता भरत जी के महोत्सव के कार्य में जुट गए।

१२. घर-घर में रंग-बधावणा और मंगलचार हो रहा है। घर-घर में गीत-गान हो रहा है। मुख-मुख पर जय-जयकार हो रहा है।

१३. घर-घर में विविध प्रकार के महोत्सव शुरू हो गए। घर-घर में खुशियां छा गईं। सबका मन हर्ष से भर गया।

१४,१५. विनीता नगरी में प्रवेश के अवसर पर तिराहों-चौराहों तथा राजमार्ग पर कुछ धनार्थी, कुछ काम-भोगार्थी, कुछ लाभार्थी मुंह से गुणगान कर रहे हैं।

१६. ऋद्धि तथा विविध प्रकार की कामनाओं वाले लोग भी वहां एकत्र हो गए।

१७. संखधरा नें चक्रधरा जी, मुह मंगलीया जांण।
ते पिण अर्थ ना लोभीया जी, बोलें छें मीठी बांण।।

१८. बंस ना खेलणहारा तिहां जी, पाटिया नां देखाडणहार।
इत्यादिक बहू आवीया जी, जातां थकां मारग मझार।।

१९. जे जे शब्द बोलें घणा जी, ते पडें भरत जी रे कांन।
त्यांने जांण विटंबणा त्यागसी जी, जासी पांचमीं गति परधांन।।

◆

१७. अनेक शंखधर, चक्रधर, मंगलवाचक भी अर्थलुब्ध होकर मधुर वाणी बोल रहे हैं।

१८. अनेक बांसों पर करतब दिखाने वाले, चित्रपट दिखाने वाले भी रास्ते में आ गए।

१९. वे जो-जो शब्द बोल रहे हैं, वे भरतजी के कानों में पड़ रहे हैं। वे इन सबको विडंबना जानकर उनका त्याग कर मोक्ष में जाएंगे।

◆

दुहा

१. ते वचन बोलें इष्ट कारीया, कंत कारीया वचन विशेख।
पीत कारी वचन रलीयांमणा, मनोज्ञ वचन बोलें छें अनेक।।

२. कल्याण नें मंगलीक कारणी, इसडी वांणी बोले रह्या तांम।
तिण वांणी रा भेद अनेक छें, निरंतर बोंलें छें ठांम ठांम।।

३. अभिणंदता विरध वचन छें, ते बोलें छें वचन आसीस।
अभीथुणंता वचन सतुत छें, ते बोलें छें नमणकर सीस।।

४. जय जय णंदा शब्द बोलें घणा, थांरें होयजो विरध विशेख।
जय जय भद्दा शब्द कहें घणा, तुमनें होयजों किल्यांण अनेक।।

५. वळे भरत जी नें देखनें, विकसत हुवा छें नेंण।
वळे आसीस देता रूडी रीत सूं, किण विध बोलें गमता वेंण।।

ढाळ : ५५

(लय : वेग पधारो महल थी)

थें भला पधास्या राजा भरत जी।।

१. थे अण जीतां नें जीपजों, करों जीतां री प्रतिपाल।
थे जीता छें त्यां माहे वसो, इम बोलें वचन रसाल।

२. इंदर विराजें देवतां मझे, करें देवलोक माहे राज।
तिण विध राज तुम्हें करों, सीह ज्यूं करता ओगाज।।

३. चंदरमा तारां मझे, राज करें श्रीकार।
तिण विध राज तुम्हें करों, भरत खेतर मझार।।

दोहा

१. सभी विविध प्रकार के इष्टकारक, प्रीतिकारक, मनोज्ञ, कांत और रुचिकर वचन बोल रहे हैं।

२. वे लगातार स्थान-स्थान पर कल्याणकारिणी, मंगलकारिणी अनेकरूपिणी वाणी बोल रहे हैं।

३. कुछ लोग अभिनंदन करते हुए यशोगान कर रहे हैं, कुछ लोग आशीर्वाद की भाषा बोल रहे हैं, कुछ लोग नत मस्तक होकर अभ्युत्थान मुद्रा में स्तवना कर रहे हैं।

४. कुछ लोग 'जय-जय नंदा', 'जय जय भद्दा' वचन बोल कर उनके कल्याण की कामना कर रहे हैं।

५. भरतजी को देखकर उनके नयन उत्फुल्ल हो गए हैं। वे आशीष देते हुए इस प्रकार के रुचिकर वचन बोल रहे हैं।

ढाळ : ५५

राजा भरतजी भले पधारे।

१. आप योगक्षेमकर हैं। आप सदा विजित लोगों के बीच निवास करें, ऐसे मधुर वचन बोल रहे हैं।

२. जैसे देवलोक में देवताओं के बीच इन्द्र विराजते हैं, राज्य करते हैं-उसी तरह आप राज्य करें। सिंहनाद की तरह आगाज करें।

३. जैसे चंद्रमा तारों के बीच श्रेयस्कर राज्य करता है उसी प्रकार आप भरत क्षेत्र में राज्य करें।

४. चमर इंद्र असुर कुमार में, राज करें अभिरांम।
तिण विध भरत खेत्र मझे, राज कीजों सर्व ठांम।।

५. धरणेद नाग कुमार में, राज करे छें वदीत।
तिण विध भरत खेत्र मझे, राज करों रूडी रीत।।

६. अनेक लाखां पूर्व लगें, राज कीजों वनीता मांहि।
वळे अनेक कोड पूर्व लगें, राज कीजों सुखदाय।।

७. अनेक पूर्व कोडाकोड रो, थे कीजों अखंडत राज।
आखा भरत खेतर मझे, वनीता माहि विराज।।

८. छ खंड तणी परजा पालजों, लीजों जस सोंभाग।
राज कीजों थें मोटें मंडाण थी, थांरा पुन छें अतंत अथाग।।

९. इत्यादिक अनेक विरदावली, लोक बोंलें छें ठांम ठांम।
भरत नरिंद नें चालतां, नगरी वनीता नें तांम।।

१०. सहंसांगमे माला नयणां तणी, ते देखें छें ठांम ठांम।
वळे सहंसांगमे माला वदन री, ते मुख सूं करता गुणग्रांम।।

११. हिरदय माला सहंसांगमे, हरष पांमें हीयों देख।
ते देख देख तिरपत हुइ नही, देखण री वंछा विशेख।।

१२. आंगुलीयां माला सहंसांगमे, एक एक नें तिण काल।
जीमणी अंगुलीयां सुं भरत नो, रूप दिखालें रसाल।।

१३. हजारांगमे नर नारीयां, त्यांरी अंजली माला अनेक।
ते लेतों थकों ग्रहतो थकों, ते सगलाइ बोले वशेष।।
१४. सगलां सांह्यों जोवतों थकों, त्यांनें देतो थकों सनमांन।
गमावें नही किणनें गाफलें, इसडों छें सावधांन।।

४. जैसे चमरेंद्र असुरकुमार देवों में अभिराम राज्य करता है, वैसे ही आप भरतक्षेत्र में सब जगह राज्य करें।

५. जैसे धरणेंद्र नागकुमार देवों में राज्य करता है वैसे ही आप भरतक्षेत्र में कुशलता से राज्य करें।

६. आप अनेक लाख पूर्व-करोड़ पूर्व तक विनीता में सुखद राज्य करें।

७. आप विनीता में विराज कर अनेक कोडाकोड पूर्व तक पूरे भरत क्षेत्र में अखंड राज्य करें।

८. छह खंडों की प्रजा का पालन कर यश-सौभाग्य प्राप्त करें। आप पूरे ठाठ-बाट से राज्य करें। आपके पुण्य अथाह हैं।

९. भरत नरेंद्र के विनीता में चलते हुए इस तरह स्थान-स्थान पर लोक प्रशंसा कर रहे हैं।

१०. सहस्रों आंखों की माला उन्हें स्थान-स्थान पर देख रही है। सहस्रों मुखों की माला मुख से गुणगान कर रही है।

११. सहस्रों हृदयों की माला उन्हें देख कर हर्षित हो रही है। वह देखते-देखते तृप्त ही नहीं होती है। देखने की उत्कंठा बनी हुई है।

१२. सहस्रों अंगुलियों की माला एक-दूसरे को दांए हाथ की अंगुलियों से भरतजी के रसाल रूप को दिखा रही हैं।

१३-१५. हजारों-हजार नर-नारियों की अंजली माला को स्वीकार करते हुए सबके सामने देखते हुए, सबको सम्मान देते हुए, किसी की उपेक्षा नहीं रहते हुए जगह-जगह रुकते हुए, निर्घोष वाद्ययंत्रों के बजते हुए, अत्यंत आडंबर के साथ भरतजी अपने घर आ रहे हैं।

१५. इण विध आवें छें निज घरे, देतों देतों म्हें लांण।
निरघोष वाजंत्र वाजता थका, आयों मोटें मंडांण।।

१६. ए मंडांण जांणें सर्व कारिमा, भरत जी अंतरंग मांहि।
त्यांनें छोड संजम सुध पालसी, मोख विराजसी जाय।।

◆

१६. भरतजी अंतरंग में इस सारे आडंबर को नश्वर जानते हैं। इनको त्याग कर शुद्ध संयम का पालन कर मोक्ष में विराजमान होंगे।

◆

दुहा

१. जिहां पोताना आवास छें, तिण प्रसाद नों बारलो दुवार।
तिहां हस्ती रत्न उभों राखनें, हेठा उतरीया तिणवार।।

२. हिवें सोलें सहंस देवतां भणी, घणों दीयों सनमांन सतकार।
वळे बत्तीस सहंस राजा तेहनें, सतकाऱ्या सनमांन्या तिणवार।।

३. सेनापती गाथापती रत्न नें, वढइ प्रोहित रत्न नें जांण।
यां च्यारूं रतनां नें भरत जी, घणों दीयो सतकार सनमांन।।

४. रसोइदार तीनसों साठां भणी, वळे सेणी प्रश्रेणी अठार।
त्यां सगलां नें रूडी रीत सूं, दीयों सनमांन नें सतकार।।

५. राजा इसर तलवर आदि दे, त्यांनें पिण सनमांने सतकार।
निज भवण माहें पेसतां, किण किण नें लीधा छें लार।।

ढाळ : ५६

(लय : श्रावक धर्म करो सुख)

भरत जी देस साझे घर आया।।

१. भरत जी निज भवन माहे चाल्या, अस्त्री रत्न त्यांरें लारो जी।
वळे छ रित ना सुख नी करणहारी, अस्त्री साथे बत्तीस हजारो जी।

२. वळे बत्तीस सहंस किल्याणीक अस्त्री, जनपद देस राजां री बेटी जी।
ते पिण साथे भवण में जातां, त्यांरा रूप रे कुण आवें जेटी जी।।

३. बत्तीस विध रा नाटक बत्तीस हजार, त्यां सहीत भरत राजांनों जी।
निज अवास माहे प्रवेस करें छें, मन माहे घणों हरषवांनों जी।।

दोहा

१. अपने आवास स्थल के प्रासाद के बाहरी दरवाजे पर हस्ती रत्न को खड़ा करके भरतजी नीचे उतरते हैं।

२. उस समय सोलह हजार देवताओं तथा बत्तीस हजार राजाओं को बहुत-बहुत सत्कार-सम्मान देते हैं।

३. सेनापति रत्न, गाथापति रत्न, बढ़ई रत्न तथा पुरोहित रत्न, इन चारों को भी सत्कार-सम्मान देते हैं।

४. तीन सौ साठ रसोइयों तथा अठारह श्रेणि-प्रश्रेणि का उचित रूप से सत्कार-सम्मान करते हैं।

५. राजा, ईश्वर, तलवर आदि को भी सत्कार-सम्मान देकर अपने भवन में प्रवेश करते हुए अपने साथ किन-किन को ले जाते हैं-यह वर्णन आगे है।

ढाळ : ५६

भरतजी देशों को जीत कर अपने घर आए हैं।

१. भरतजी अपने निजी भवन में प्रवेश कर रहे हैं। स्त्री-रत्न उनके साथ है। छह ऋतुओं के सुख को प्रदान करने वाली बत्तीस हजार स्त्रियां भी साथ हैं।

२. विविध जनपदों-देशों के राजाओं की बत्तीस हजार पुत्रियां, कल्याणकारी अतुल्य रूपवती स्त्रियां भवन में प्रवेश करते समय उनके साथ हैं।

३. बत्तीस प्रकार के नाटकों को करने वाले बत्तीस हजार नाटकिए उनके साथ हैं। भरतजी निजी घर में प्रवेश कर रहे हैं। मन में अत्यंत हर्षित हैं।

४. वेसमण देवता देवतां रो राजा, मोटें मंडाण आवें केलासों जी।
परवत् जिम उंचा छें ज्यांरें, सिखरबंध मेंहल आवासो जी।।

५. मित्र न्यातीला सूं आय मिलीया वळे, सगा सजनादिक जांणों जी।
परिजन दास दासी आदि देइ, त्यांनें बोलावे कर कर पिछांणो जी।।

६. कुसल खेम समाचार पूछें, बोलावें सनेह सहीतो जी।
सनेहदिष्ट त्यां सांहमों जोवें, जथाजोग करता थका प्रीतो जी।।

७. जथाजोग सगला सूं मिलता, वळे पूछता थका समाचारो जी।
जब हरष रा आंसूं पडें आंख्यां मांसूं, देख देख भरत जी रो दिदारो जी।।

८. इण विध न्यातीलां सूं मिलनें भरतजी, गया मंजण घर मांह्यों जी।
मंजण करनें भोजन घर आया, तेला रो पारणों कीयों ताह्यो जी।।

९. भोजन कीयां पछें सुखे समाधे, बेठा प्रसाद मझारो जी।
मादल मस्तक फूटे रह्या छें, नाटक पडें बत्तीस प्रकारो जी।।

१०. वर प्रधांन तुरणी अस्त्रीयां संघातें, भोगवे छें कांम नें भोगो जी।
मोटें मंडाण आडंबर करनें, आय मिलीयों छें सर्व संजोगों जी।।

११. एहवा भोग संजोग मिलीया ते, सारा ग्यांन सूं जांणे वमन अहारो जी।
त्यांनें त्यागसी वैराग भाव आणनें, इण भव जासी मोख मझारो जी।।

◆

४. जिस प्रकार देवताओं का अधिपति वैश्रमण धूमधाम से कैलाश पर्वत पर आता है, उसी प्रकार भरतजी पर्वताकार शिखरबंध प्रासाद में प्रवेश करते हैं।

५. ज्ञाति, मित्र, सगे, स्वजन, परिजन, दास-दासी आदि से मिलते हैं। उनसे सस्नेह बात करते हैं।

६. उनके कुशलक्षेम समाचार पूछते हैं तथा स्नेहपूर्वक उनसे बात करते हैं। स्नेहपूर्ण दृष्टि से उनके सामने देखते हैं तथा यथायोग्य प्रीति करते हैं।

७. सबसे यथायोग मिलते हैं, उनके समाचार पूछते हैं। भरतजी की छवि को देख देखकर सबकी आंखों से हर्ष के आंसू छलक पड़ते हैं।

८. इस प्रकार ज्ञातिजनों से मिलकर भरतजी स्नानगृह में गए। स्नान कर भोजनगृह में आए और तेला का पारणा किया।

९. भोजन करने के बाद सुख-समाधिपूर्वक प्रासाद में बैठते हैं। मृदंगों के सिर पर थाप पड़ती है और बत्तीस प्रकार के नाटक शुरू हो जाते हैं।

१०. श्रेष्ठ प्रधान तरुणी स्त्रियों के साथ कामभोग भोगते हैं। बड़े ठाठ-बाट और आडंबर का यह सर्व संयोग उन्हें मिला है।

११. ऐसे भोग-संयोग मिले हैं पर वे उन्हें अपने ज्ञान से वमन के आहार के समान जानते हैं। वैराग्य भाव प्राप्त कर इन्हें त्याग कर इसी भव में मुक्ति में जाएंगे।

◆

दुहा

१. काल कितोएक वीतां पछें, एकदा प्रस्तावें ताहि।
राज-धुरा चिंतवता थका, उपनों मन नों अधवसाय।।

२. हूं भरत खेतर जीतो सर्वथा, म्हारें बल प्राक्रम करे तांम।
चूल हेमवंत नें समुद्र विचें, आंण वरताइ सर्व ठांम।।

३. हूं संपूर्ण भरत खेतर जीतनें, सगलें वरताई आंण।
तो श्रेय किल्याण छें मो भणी, राज बेंसणों मोटें मंडांण।।

४. एहवी रीते करेय विचारणा, सूर्य ऊगां हुओ परभात।
जब गया मंजण घर तेहमें, सिनांन कीयों आगा ज्यूं विख्यात।।

५. पछें मंजण घर थी नीकले, आया उवठांण साल मझार।
तिहां बेठा सिंघासण उपरें, भरत नरिंद तिणवार।।

ढाळ : ५७
(लय : जिण भाखें सुण)

१. देवता सोंलें हजार, सताब बोलावीया रे।
ते देवता आगनाकार, सताब सूं आवीया रे।।

२. वळे बत्तीस सहंस राजांन, त्यांनेंइ तेडावीया रे।
ते पिण घणा विनेंवान, सताब सूं आवीया रे।।

३. सेनापती गाथापती ताहि, वढइ नें प्रोहित भणी रे।
यां च्यारां नें लीया बोलाय, भरतेसर सिर धणी रे।।

दोहा

१. इस प्रकार कुछ समय व्यतीत होने पर एक बार राज-धुरा का चिंतन करते हुए उनके मन में अध्यवसाय पैदा होता है।

२. मैंने अपने बल-पराक्रम से सारे भरतक्षेत्र पर विजय प्राप्त की है। चुल्ल हेमवंत और लवण समुद्र के बीच अपनी आज्ञा प्रवर्तायी है।

३. मैंने संपूर्ण भरतक्षेत्र को जीतकर अपनी आज्ञा स्वीकार करवाई है। इसलिए मेरे लिए यही श्रेयस्कर एवं कल्याण कर है कि ठाठ-बाट से राज्याभिषेक करवाऊं।

४. रात में ऐसा चिंतन कर सूर्योदय के बाद प्रभात हुआ तब स्नानगृह में गए और पूर्वोक्त रूप से स्नान किया।

५. स्नानगृह से निकल कर उपस्थान शाला में आए और सिंहासन पर बैठे।

ढाळ : ५७

१. तत्काल सोलह हजार देवताओं को बुलाया। सारे आज्ञाकारी देवता तत्काल उपस्थित हो गए।

२. फिर बत्तीस हजार राजाओं को आमंत्रित किया। वे भी विनीत भाव से तत्काल उपस्थित हो गए।

३. सेनापति, गाथापति, बढ़ई तथा पुरोहित, इन चारों को भी बुलाया। भरतेश्वर उनके स्वामी हैं।

४. तीन सो साठ रसोइदार, त्यांनें तेडीया इहां रे।
श्रेण प्रश्रेणी अठार, त्यांनेंइ तेरया तिहां रे।।

५. वळे बीजाइ घणा राजांन, इसर तलवर घणा रे।
सार्थवाह परधांन, इधिकारी बहू जणा रे।।

६. इत्यादिक सगलाइ आय, विनो भगत करी रे।
अंजली जोडी छें ताहि, सीस नमण करी रे।।

७. त्यांनें कहें छें भरत जी जांण, म्हें म्हारें बल करी रे।
म्हें फेरी भरत म्हें आंण, म्हें जीत फतें करी रे।।

८. तिण कारण थें म्हांनें राज, बेसांणों मो भणी रे।
ज्यूं सीझें मन चिंतव्या काज, आछी लागें घणी रे।।

९. इम कहत पांण राजांन, आया सारा जणा रे।
हूआ घणा हरषवांन, आणंद पाम्यां घणा रे।।

१०. सारा बोल्या जोडी कहें हाथ, ए आप आछी कही जी।
थे छ खंड सिर धणी नाथ, आ थांनें जुगती सही जी।।

११. ए वचन करे प्रमांण, भरत राजांन नें जी।
पाछा गया निज ठिकांण, कह्यों सर्व मांननें जी।।

१२. माहाराज अभीषेक काज, मंडाण करे घणा जी।
ते पिण छोडे देसी राज, ग्रिधी नही तेह तणा जी।।

१३. संजम ले होसी सूर, कर्मा नें काटसी जी।
सिध होसी सूखां में पूर, ए खाटवा खाटसी जी।।

◆

४. तीन सौ साठ रसोइयों और अठारह श्रेणि-प्रश्रेणि को भी बुलाया।

५. तथा अन्य अनेक राजा, ईश्वर, तलवर, सार्थवाह, प्रधान अधिकारी आदि बहुत जनों को भी बुलाया।

६. सभी ने आकर भरतजी की विनय भक्ति की। अंजलि को जोड़कर मस्तक झुकाया।

७,८. भरतजी ने उनसे कहा- मैंने अपने बल से भरतक्षेत्र में अपनी आज्ञा प्रवर्तायी, जीत-फतेह की। अतः तुम मेरा चक्रवर्ती के रूप में अभिषेक करो, जिससे मेरे मन चिंतित काम सिद्ध हों तथा सबको अच्छा लगे।

९. यों कहते ही आए हुए सारे राजा हर्षित और आनंदित हुए।

१०. सारे हाथ जोड़कर बोले- आपने यह उपयुक्त कहा। आप छह खंड के स्वामी हैं। आपके लिए यही उपयुक्त है।

११. सब राजा भरतजी के वचन एवं कथन को स्वीकार कर अपने- अपने स्थान को लौट गए।

१२. भरतजी अब राज्याभिषेक के लिए बड़ा आडंबर रचते हैं। पर वे राज्यलोलुप नहीं हैं। इसे भी छोड़ देंगे।

१३. संयम ग्रहण कर शूरवीरता से कर्मों को काटेंगे, उनसे निजात पाएंगे, सुखपूर्वक सिद्धि को प्राप्त करेंगे।

◆

दुहा

१. यां सगलां ठिकांणें गयां पछें, भरत जी पोषधशाला आय।
राज निरविघन निमतें कीयों, तेरमों तेलों ताहि।।

२. निरविघन राज माहरों, सदाकाल रहजों एक धार।
एहवो ध्यांन एकाग्र ध्यावंता, पोषधसाल मझार।।

३. एहवो ध्यांन ध्यावता थकां, तीन दिन पूरा हूआ ताहि।
जब अभीयोगी देव बोलायनें, तिणनें कहें छें भरत माहाराय।।

४. जावो तुम्हें देवाणुप्रिया, इसांण कूण रें मांहि।
राज अभीषेक करवा जोग मांडवो, ते वेगों विक्रूवों जाय।।

५. ते मंडप कीजों अति मोटकों, ते घणो रलीयांमणों अनूप।
ते करनें म्हारी आगन्या, सताब सूं पाछी सूंप।।

६. ते सुणनें आभियोगीया देवता, घणों हरष हूवों मन मांहि।
हिवें मंडप विकूर्वे किण विधें, ते सुणजों चित्त ल्याय।।

ढाळ : ५८

(लय : जंबू दीप मझार रे)

१. नगर वनीता बार रे, कुण इसांण में।
तिहां गयो आभीयोगी देवता ए।।

२. वेक्रेंय समुदघात रे, कीधी तिण सक्त सूं।
निज प्रदेस विसतर्‌या ए।।

दोहा

१. सबके अपने अपने स्थान पर चले जाने के बाद भरत जी ने निर्विघ्न राज्य करने के लिए तेरहवां तेला किया।

२. मेरा साम्राज्य सदा एकधार निर्विघ्न रहे ऐसा ध्यान पौषधशाला में करने लगे।

३. इस प्रकार का ध्यान करते हुए तीन दिन पूरे हुए तब आभियौगिक देव को बुलाकर भरतजी कहते हैं-

४. देवानुप्रिय! तुम ईशानकोण में जाओ और राज्याभिषेक करने के लिए जल्दी से जल्दी मंडप की विकुर्वणा करो।

५. मंडप ऐसा करना जो विशाल, मनोरम और अनुपम हो। उसका निर्माण कर शीघ्र मेरी आज्ञा मुझे प्रत्यर्पित करो।

६. यह सुनकर आभियौगिक देवता मन में अत्यंत प्रसन्न हुआ। अब वह मंडप की विकुर्वणा कैसे करता है उसे चित्त लगाकर सुनें।

ढाळ : ५८

१. आभियौगिक देवता विनीता नगरी के ईशानकोण में गया।

२. वैक्रिय समुद्घात कर उस शक्ति से आत्म-प्रदेशों का विस्तार किया।

३. तिण ठांमें कीयों दंड एक रे, अति रलीयांमणो।
संख्याता जोजन तणो ए।।

४. तिण बादर पुदगल न्हांख रे, सुखम खांचे लीया।
सोंलें जातरा रतन नें ए।।

५. वळे दुसरी वार रे, समुदघात करी।
सम कीधी रमणीक भोंमका ए।।

६. मृदंग वाजंत्र ढोल रे, मांखण सारिखों।
तिणसूं सुहालो आंगणो ए।।

७. तिण भोम भाग रे मध्य रे, तिण ठांमें कीयों।
अभीषेक मंडप रच्यों ए।।

८. अनेक सइकडां थंभ रे, तिण मंडप तणें।
सुरीयाभ तणी परें जांणजों ए।।

९. तिणरों छें घणों विसतार रे, रायप्रसेणी ए।
पेक्षाघर मंडप ज्यूं कह्यों ए।।

१०. अभीषेक मंडप मध्य भाग रे, एक मोटों रच्यों।
अभीषेक चोंतरो विक्रूरवीयो ए।।

११. ते निरमल जल रहीत रे, दीठां जल हलें।
ते सुखम पुदगल रत्नां तणों ए।।

१२. अभीषेक पीढ रें तांम रे, तीन दिसां भणी।
पावडीया तिहां विक्रूव्या ए।।

१३. तिण पावडीया रो वर्णव रे, रायप्रसेणी ए।
जाव तोरण तांइ कीयो ए।।

३. वहां सर्वप्रथम सख्यात योजन का एक मनोरम दंड बनाया।

४. उसमें से स्थूल पुद्गलों को दूर कर, सूक्ष्म पुद्गलों में से सोलह प्रकार के रत्नों को खींच लिया।

५. फिर दूसरी बार वैक्रिय समुद्घात कर रमणीय समतल भूमि का निर्माण किया।

६. मृदंग, वाद्ययंत्र, ढोल का निर्माण किया। आंगन को मक्खन सरीखा चिकना बनाया।

७. उस भूमि भाग के मध्य में अभिषेक मंडप की रचना की।

८. उस मंडप में सूर्याभदेव के मंडप की तरह सैकड़ों स्तंभ बनाए।

९. राजप्रश्नीय सूत्र में उस प्रेक्षाघर-मंडप का बहुत बड़ा विस्तार है।

१०. अभिषेक मंडप के मध्य भाग में विशाल अभिषेक चबूतरों की रचना की।

११. चबूतरा निर्मल एवं जल रहित था। पर सूक्ष्म पुद्गलों के रत्नों से ऐसा लगता था जैसे जल तरंग चमक रही है।

१२. अभिषेकपीठ की तीन दिशाओं में सीढ़ियों का निर्माण किया।

१३. उन सीढ़ियों से लेकर तोरण तक का वर्णन उसी प्रकार है, जैसा राजप्रश्नीय सूत्र में किया गया है।

१४. अभीषेक पीढ रे तांम रे, मध्य भागें कीयों।
एक मोटों सिंघासण दीपतों ए।।

१५. तिण सिंघासण रो वरणव रे, कह्यों सिधांत में।
सुरीयाभ तणी पर जांणजों ए।।

१६. फुलां री माला अनेक रे, दडा फूलां तणा।
सिंघासण रें लहकता ए।।

१७. अभीषेक मंडप रे पीठ रे, वळे सिंघासणें।
सुरीयाभ तणी परें जांणजों ए।।

१८. अभिषेक मंडप अनूप रे, अति रलीयांमणों।
आभीयोग देवता विक्रूव्यों ए।।

१९. ते करनें आयो सताब रे, भरत राजा कनें।
कहे अभीषेक मंडप कीयो ए।।

२०. आभीयोग देवता पास रे, सुणनें भरतजी।
हर्ष संतोष पांम्यों घणों ए।।

२१. हिवें भरत नरिंद तिण वार रे, पोषधसाला थी।
ततखिण बारें नीकल्या ए।।

२२. सेवग नें कहें बोलाय रे, देवाणुप्रीया।
पट हस्ती रत्न नें सज करों ए।।

२३. हय गय रथ पायक तांम रे, सेन्या चउरंगणी।
सज करों वेग सताब सूं ए।।

२४. सेवग पुरुष ततकाल रे, सेन्या सज करी।
पाछी सूंपी तिण आगना ए।।

१४. अभिषेकपोठ के मध्य भाग में एक दीप्तिमान् वृहद् सिंहासन रखा।

१५. उस सिंहासन का वर्णन आगम में किया गया है, उसे सूर्याभ की तरह ही जानें।

१६. फूलों की अनेक मालाएं, गुच्छे सिंहासन पर लहरा रहे हैं।

१७. अभिषेक मंडप की पीठ तथा सिंहासन भी सूर्याभ की ही तरह जानें।

१८. आभियौगिक देवता ने अनुपम और मनोहर मंडप की विकुर्वणा की।

१९. यह सब करके शीघ्र भरत राजा के पास आया और कहा कि अभिषेक मंडप तैयार है।

२०. आभियौगिक देवता से यह सुनकर भरतजी हर्षित एवं संतुष्ट हुए।

२१. अब भरत नरेन्द्र तत्क्षण पौषधशाला से बाहर निकले।

२२. सेवक को बुलाकर कहा– देवानुप्रिय! पटहस्तीरत्न को सजाओ।

२३. हाथी, घोड़े, रथ तथा पैदल चतुरंगिणी सेना को शीघ्र सज्ज करो।

२४. सेवक पुरुष ने तत्काल सेना को सज्ज कर भरतजी की आज्ञा को प्रत्यर्पित किया।

२५. ए वचन सुणेनें तांम रे, गया मंजण घरे।
सिनांन कीयों विध आगली ए।।

२६. मोंलेंकर मूंहघा ताहि रे, हलका तोल में।
एहवा आभूषण पेंहरीया ए।।

२७. अभीषेक हस्ती रत्न रे, तिण उपर चढ्या।
आठ आठ मंगलीक मुख आगलें ए।।

२८. जब आया वनीता माहि रे, जब महोछव कीया।
तेहीज विध सारी जांणजों ए।।

२९. जब एक एकीका देव रे, विरखा करें रत्न री।
केइ सोवन तणी विरखा करें ए।।

३०. एक एकीका देव रे, वज्र रत्नां तणी।
केइ विरखा करें रूपा तणी ए।।

३१. कीयों वनीता में प्रवेस रे, जब विरखा करी।
ते सगली विध इहां करी ए।।

३२. कर मोटें मंडांणें तांम रे, वनीता नगरीयें।
मध्यो मध्य थइ नीकलें ए।।

३३. इसांण कुण रें माहि रे, अभिषेक मंडप छें।
तिण दुवारें आय ऊभा रह्या ए।।

३४. हस्ती रत्न तिण ठांम रे, ऊभों राखीयों।
हस्ती थी हेठा उतस्या ए।।

३५. अंतेवर चोसठ हजार रे, अस्त्री रत्न वळे।
त्यां संघातें परवस्यों थको ए।।

२५. यह वचन सुनकर भरतजी ने पूर्वोक्त विधि से स्नानगृह में जाकर स्नान किया।

२६. मूल्य में महंगे तथा वजन में हल्के आभूषणों को धारण किया।

२७. अभिषेक हस्तीरत्न पर सवार हुए। मुंह के सामने आठ मांगलिक चिह्न हैं।

२८. विनीतामें प्रवेश के अवसर पर जैसे महोत्सव किया, वही विधि यहां जानें।

२९,३०. तब कुछ देवता रत्न की वर्षा कर रहे हैं, कुछ देवता सोने, चांदी तथा रत्नों की वर्षा कर रहे हैं।

३१. विनीता में प्रवेश के अवसर पर जैसी वर्षा की वैसी ही सारी यहां समझें।

३२. ठाठ–बाट पूर्वक विनीता नगरी के बीच से होकर चल रहे हैं।

३३. ईशान कोण में जहां अभिषेक मंडप है उसके द्वार पर आकर खड़े हुए।

३४. हस्तीरत्न को वहां खड़ा कर उससे नीचे उतरे।

३५. श्री रानी तथा चौसठ हजार स्त्रियों के अंत:पुर से परिवृत्त हैं।

३६. वळे नाटक बत्तीस हजार ए, बत्तीस प्रकार ना।
त्यां संघातें परवस्यों थकों ए।।

३७. अभीषेक मंडप रे माहि रे, प्रवेस कीयों तिहां।
अभिषेक पीठ तिहां आवीया ए।।

३८. अभीषेक-पीठ नें तांम रे, प्रदिखणा करी।
पूर्व पावडीयां चढ्या ए।।

३९. तिहां रच्यों सिघासण तांम रे, तिण ठांमें आयनें।
बेठा सिघासण उपरें ए।।

४०. पूर्व साह्मों मुख राख रे, रूडी रीत सुं।
बेठा सिंघासण उपरें ए।।

४१. सेष सहू परवार रे, ते आवें किण विध।
एक मना थइ सांभलों ए।।

४२. एहवा करें मंडांण रे, राज वेंसवा।
पिण तिण में नही राचसी ए।।

४३. आंणे सुमता रस पूर रे, राज त्यागनें।
इण भव जासी मुकत में ए।।

◆

३६. बत्तीस प्रकार के नाटक करने वाले बत्तीस हजार नाटककारों से परिवृत्त हैं।

३७. अभिषेक मंडप में प्रवेश कर अभिषेक पीठ के पास आए।

३८. अभिषेक पीठ को तीन बार प्रदक्षिणा कर पूर्व दिशा की सीढ़ियों से ऊपर चढ़े।

३९. वहां सिंहासन की रचना की गई थी, उस स्थान पर आकर सिंहासन पर आसीन हुए।

४०. सिंहासन पर पूर्व दिशा की ओर मुंह कर विधिपूर्वक बैठे।

४१. शेष सारा परिवार किस प्रकार आता है, उसे एकाग्रमना होकर सुनें।

४२. यह राज्यारोहण का आडंबर किया पर उसमें आसक्त नहीं होंगे।

४३. समता रस से भर कर राज्य को त्याग कर इसी भव में मुक्ति में जाएंगे।

◆

दुहा

१. बत्तीस सहंस राजा तिण अवसरें, आया अभीषेक मंडप माहि।
अभीषेक पीढ रें प्रदिखणा करें, चढीया उत्तर पावडीया ताहि।।

२. जिहां भरत राजा तिहां आयनें, अंजली करें जोडी हाथ।
विनों कीयों सीस नमायनें, जांणें सिर धणी नाथ।।

३. जय विजय करे वधायनें, नेंरा आय ऊभा तिण ठांम।
सुश्रषा करता एकाग्र चित्त, सेवा भगत करें गुणग्रांम।।

४. सेनापती रत्न नें गाथापती, वढइ नें प्रोहित पिण आंम।
शेष राजादिक कह्या तके, दिखण पावडीयें चढीया छें तांम।।

५. अें पिण प्रदिखणा करता थका, राजां कीयों तिमहीज तांम।
सेवा भगत तिम हीज करें, भरत जी रा करें गुणग्रांम।।

६. जब आभीयोगी देवता भणी, बोलाए कहें भरत जी आंम।
सिघ्र करो देवाणुप्रीया, राज अभीषेक कांम।।

७. महर्थ मणी रत्नादिक तणों, मोटां जोग अनूंप।
राज अभीषेक करवा भणी, सर्व सझ करे आंण सूंप।।

८. ते देव सुण हरषत हूवों, वचन कर लीधो परमांण।
ते इसांणकुण में जायनें, वेक्रें समुदघात कीधी जांण।।

९. ते विजय पोलीया नी परें, अठें कहणें सर्व इधकार।
ते जीवाभिगम उपंग में, जोय लेंणों विसतार।।

दोहा

१. बत्तीस हजार राजे अभिषेक मंडप में आए और अभिषेक पीठ को प्रदक्षिणा कर उत्तर दिशा की सीढ़ियों से ऊपर चढ़े।

२. भरत राजा के पास आकर उन्हें अपना स्वामी समझकर बद्धांजली होकर मस्तक झुकाकर विनय किया।

३. वहां निकट आकर खड़े रहकर जय-विजय शब्द से वर्धापित कर एकाग्र चित्त होकर सुश्रुषा, सेवाभक्ति एवं गुणगान कर रहे हैं।

४. सेनापति, गाथापति, बढ़ई तथा पुरोहित, ये चारों रत्न तथा शेष राजा आदि दक्षिण की सीढ़ियों से अभिषेक पीठ पर चढ़े।

५. इन्होंने भी पूर्व राजाओं की तरह भरतजी की प्रदक्षिणा सेवाभक्ति और गुणगान किए।

६. फिर आभियौगिक देवता को बुलाकर भरतजी ने कहा- देवानुप्रिय! अब राज्याभिषेक का कार्य शुरू करो।

७. बड़े लोगों के अनुरूप बहुमूल्य मणिरत्नों की राज्याभिषेक सामग्री सज्ज कर मेरी आज्ञा मुझे प्रत्यार्पित करो।

८. देवता यह सुनकर हर्षित हुआ। उनके वचन को स्वीकार किया। ईशान कोण में जाकर वैक्रिय समुद्घात की।

९. यहां सारा अधिकार विजय पोलिये की तरह कहना चाहिए। जीवाभिगम उपांग में उसका विस्तार देख लेना चाहिए।

ढाळ : ५९

(लय : चुतर विचार करेनें देखो)

भरत नरिंद नें राज बेसावें ।।

१. एक हजार नें आठ कलसा, सोना रा वेक्रें कीया श्रीकारो जी।
वळे वेक्रें कीया कलस रूपा रा, आठ नें एक हजारों जी।

२. एक सहंस नें आठ मणी रत्न में, कलसा कीया वेक्रें अनूंपो जी।
एक सहंस नें आठ सोवन नें रूपा में, वेक्रें कीया धर चूंपो जी।।

३. एक सहंस नें आठ सोवण मणी में, कलसा विक्रुव्या तांमो जी।
एक सहंस नें आठ रूपा नें मणी में, ते पिण कलसा घणा अभिरांमोजी।।

४. सोवन रूपों नें मणी रत्न में, कलसा एक सहस नें आठो जी।
सहंस नें आठ माटीनां विक्रुव्या, कर कर वेक्रेना थाटो जी।।

५. ए आठ हजार नें चोसठ कलसा, देवता रूडी रीत सूं करीया जी।
ते खीरोदधी आदि पाणी तीर्थ ना, गंधोदक जल करनें भरीया जी।।

६. एक सहंस ने आठ भिंगार लोटा, आरीसा एक सहंस नें आठो जी।
एक सहंस नें आठ थाली नें पात्री, वेक्रें कीया छें रूडें घाटों जी।।

७. एक सहंस नें आठ रत्न करंडीया, फूल चंगेरी सहंस नें आठों जी।
एक सहंस नें आठ छत्र रत्न नें चामर, देवता कीया वेक्रेनां थाटों जी।।

८. धूप कुडछा कीया सहंस नें आठ, इत्यादिक अनेक प्रकारो जी।
ते विसतार तों छें जीवाभिगम में, विजें पोलीया नें इधिकारो जी।।

९. ए वेक्रे कीया ते एकठा करनें, वनीता नगरी आयों ताह्यों जी।
वनीता नें प्रदिखणा. करतों, अभीषेक मंडप तिहां आयो जी।।

ढाळ : ५९

भरत नरेन्द्र का राज्याभिषेक करते हैं।

१. वैक्रिय विधि से एक हजार आठ सोने के और एक हजार आठ चांदीके श्रीकार कलश तैयार किए।

२. एक हजार आठ अनुपम कलश मणिरत्नों के विकुर्वित किए। एक हजार आठ कलश चतुराई से सोने-चांदी में विकुर्वित किए।

३. एक हजार आठ अभिराम कलश स्वर्ण मणि में विकुर्वित किए तो एक हजार आठ रूप्य मणि में विकुर्वित किए।

४. एक हजार आठ स्वर्ण-रूप्य एवं मणिमय कलश विकुर्वित किए तो एक हजार आठ मिट्टी के कलश विकुर्वित किए।

५. इस प्रकार देवता ने कुशलता से सारे आठ हजार चौसठ कलश विकुर्वित किए। उन्हें क्षीरोदधि आदि तीर्थों के पानी तथा गंधोदक जल से भरा।

६. एक हजार आठ भृंगार लोटा, एक हजार आठ दर्पण, एक हजार थाली के सुरूप पात्र भी विकुर्वित किए।

७. एक हजार आठ रत्न मंजुषाएं, एक हजार आठ फूल चंगेरी, एक हजार आठ छत्र, रत्न एवं चामर भी देवताओं ने विकुर्वित किए।

८. एक हजार आठ धूप, कुड़छा आदि अनेक प्रकार की चीजें विकुर्वित कीं, जिनका विस्तार जीवाभिगम आगम में विजय पोलिये के अधिकार में है।

९. इन सबको एकत्रित करके विनीता नगरी में आया। विनीता को प्रदक्षिणा करता हुआ अभिषेक मंडप में आया।

१० अभीषेक मंडप जिहां भरत जी बेंठा, विनों कीयों आंण हुलासों जी।
राज अभीषेक काजें कीया ते, आंण मेल्या भरत जी रे पासो जी।।

११. जब बत्तीस सहंस मुकटबंध राजा, सोभनीक भली तिथ जांणी जी।
वळे निरमलों दिवस नें नखत्र रूडों, मोहरत रूडो पिछांणी जी।।

१२. उत्तरा भद्रपद नखतर रूडो, विजय मुहरत चोखी जांणो जी।
तिण काले राज अभीषेक करावें, राज बेंसांणें मोटें मंडांणों जी।।

१३. आठ सहंस नें चोसट कलसा जल भरीया, सुरभी गंधोदक त्यांमें पांणी रे।
त्यांनें आभीयोगी देव वेक्रें कीया ते, कमल उपर मेल्या छें आंणी रे।।

१४. तिण सुरभी गंध जल करनें राजांन, मस्तक उपर जल ढोयो ताह्यों रे।
राज अभीषेक करायों मोटें मंडांणें, जूओं जूओं सगलांइ रायों रे।।

१५. इण विध सेनापती गाथापती रत्न, वढइ नें प्रोहित तिण वारो रे।
तीनसों नें साठ रसोइदार सारा, वळे श्रेणी प्रश्रेणी अठारो जी।।

१६. वळे इसर तलवर सार्थवाह ते, इत्यादिक सारा आया ते जांणो जी।
त्यां पिण अभीषेक राजा ज्यूं करायो, जूअें जूअें जल सिंच्यो छें आंणो जी।।

१७. वळे सोलें सहंस देवता आया त्यां पिण, अभीषेक करायों छें एमो रे।
त्यां सुखमाल वस्त्र अनोपम, तिणसूं अंग लूह्यों धर पेमो रे।।

१८. चंदण चरच नें वस्त्र गेंहणा पेंहराया, वळे मस्तक मुगट पहरायो रे।
इत्यादिक आभूषण विविध प्रकारें, सारो सिणगार देवां करायो रे।।

१९. देवतां सिणगार करायो ते भरत जी, जांणें सर्व तमासो रे।
त्यांनें पिण त्यागेनें संजम लेसी, मुगत में जाय करसी वासो रे।।

◆

१०. अभिषेक मंडप में जहां भरतजी बैठे थे वहां आकर उत्साहपूर्वक उनका विनय किया और राज्याभिषेक के लिए जो तैयारियां की थीं उन्हें प्रस्तुत किया।

११. बत्तीस हजार मुकुटबंध राजाओं ने शुभ तिथि, निर्मल दिवस, अच्छा नक्षत्र और अच्छा मुहूर्त देखा।

१२. उत्तराभद्रपद नक्षत्र और विजय मुहूर्त को शुभ जानकर साडंबर अभिषेक कर भरत को राज्यपद पर आरोहित करते हैं।

१३. आभियौगिक देव द्वारा विकुर्वित आठ हजार चौसठ कलशों में जल तथा गंधोदक भर कर उन्हें कमल दल पर स्थापित किया।

१४. उस सुरभिगंध जल से सभी राजाओं ने अलग-अलग रूप से भरतजी के मस्तक पर डाल कर राज्याभिषेक किया।

१५,१६. इसी प्रकार सेनापति, गाथापति, बढ़ई तथा पुरोहित रत्न और तीन सौ साठ रसोइये, अट्ठारह श्रेणि-प्रेश्रेणि, ईश्वर, तलवर, सार्थवाह आदि आए और उन्होंने भी राजाओं की तरह जल सींच कर अलग-अलग अभिषेक कराया।

१७. सोलह हजार देवताओं ने भी वहां आकर इसी प्रकार अभिषेक किया। अनुपम, सुकोमल वस्त्रों से प्रेमपूर्वक शरीर को पोंछा।

१८. चंदन से चर्चित कर वस्त्राभूषण पहनाए। मस्तक पर मुकुट पहनाया। देवताओं ने ही विविध प्रकार के आभूषणों से शृंगार करवाया।

१९. देवताओं ने यह जो शृंगार करवाया भरतजी इस सबको एक तमाशा समझते हैं। इन्हें भी त्यागकर संयम ग्रहण कर मुक्ति में जाकर वास करेंगे।

◆

दुहा

१. वळे देवता चंदण छापा दीया, तिणमें गंध सुगंध छें पूर।
वळे बहू परवत थी आंणीया, कसतूरी चंदण कपूर।।

२. त्यां करनें गातर छांटीयों, तिणरों पिण गंध अपार।
दिव्य प्रधांन माला फूलां तणी, देवतां घाली गला रे मझार।।

३. कहि कहि नें कितरों कहूं, तिणरों घणों विसतार।
विभूषित कीयों अंग देवतां, जांणें इंदर तणें उणीयार।।

४. राज अभीषेक कीयों भरत जी, तिणरों छें बोहत विसतार।
ते जीवाभिगम थी जांणजों, विजें पोलीया रे इधिकार।।

५. अभीषेक करावतां जू जूआ, बोल्या वचन रसाल।
राजादिक नें सर्व देवता, ते सुणजों सुरत संभाल।।

ढाळ : ६०

(लय : जोगण रूडी बे। अरे हां)

राजंद रूडो बे, अरे हां सुग्यांनी।
पुनवंत पूरो बें ।।

१. प्रतेख प्रतेख जू जूआ बोलें, सगलाइ राजांन।
वळे मोटें मोटे शब्दां करी, विनें सहीत देता सनमांन। भरतेसर।

२. इष्टकारीवांणी वलभ बोलें, प्रीतकारी मनोंहर जांण।
आसीस देता भरत नरिंद नें, वांणी बोलें छें अमीय समांण।।

दोहा

१. देवताओं ने अनेक पर्वतों से लाए हुए कस्तूरी-चंदन आदि के जो तिलक-छापे लगाए उनसे गंध-सुगंध का प्रवाह बह रहा है।

२. उनके छींटे लगाए उसकी गंध भी अपार है। देवताओं ने दिव्य उत्कृष्ट फूलमालाएं भी गले में पहनाई।

३. देवताओं ने भरतजी के अंग को जिस तरह विभूषित किया उससे उनकी मुखाकृति इंद्र जैसी हो गई। उस विस्तार को कह-कह कर मैं कितना कह सकता हूं।

४. भरत का राज्याभिषेक किया उसका विस्तार जीवाभिगम आगम के विजय पोलिये के अधिकार से जानें।

५. अभिषेक कराते समय राजाओं तथा सर्व देवताओं ने जिन रसाल शब्दों को उच्चारण किया उन्हें सुनें।

ढाळ : ६०

राजेंद्र! आप सर्वोत्तम, सुज्ञानी एवं पुण्यवान् हैं।

१. समस्त राजा अलग-अलग रूप से ससम्मान विनयपूर्वक उच्च स्वरों में बोलते हैं।

२. इष्टकर, वल्लभ, प्रीतिकर, मनोहर, अमृतोपम वाणी बोलकर भरत नरेन्द्र को आशीर्वाद प्रदान करते हैं।

३. आ नगरी वनीता देवलोक सरीखी, देवतां नीपजाइ तांम।
राज कीजों तुम्हें एहनों, छ खंड रा पृथीपति सांम।।

४. घणा लाखां गमे पूर्व लग आप, घणा कोडां थी लग पूर्व जांण।
घणा कोडा कोड पूर्वा लगें, राज कीजों थें मोटें मंडांण।।

५. तारां मझे राज करें चंदरमा, देवता माहे इंद्र माहाराज।
तिम राज कीजो वनीता मझे, सिझ जों मन वंछत काज।।

६. असुर कुमार में राज करे चमइंद्र, नाग कुमार में धरिणंद।
तिम राज कीजों वनीता मझे, दिन दिन इधिक आणंद।।

७. मुख मुख जय जय शबद कहें छें, वळे विजय शब्द विशेष।
मंगलीक शबद मुख उचारें, भरत नरिंद नें देख देख।।

८. वनीता नगरी माहे प्रवेस करतां, भरत नरिंद तिण वार।
जब मंगलीक मुख बोलता, तिण विध कहिणों सर्व विस्तार।।

९. बत्तीस सहंस राजा इम बोल्या, च्यारू रत्न पिण बोल्या एम।
श्रेणी प्रश्रेणी इम बोलीया, आसीस देता धर पेम।।

१०. सार्थवाहादिक सगला आया ते, मंगलीक बोल्या एकधार।
वळे इण हीज विध सर्व बोलीया, देवता पिण सोलें हजार।।

११. इण विध मोटें मंडाण करेनें, भरत जी बेठा राज।
फलीया मनोरथ तेहना, सरीया मन चिंतवीया काज।।

१२. राज अभीषेक करे भरत जी, सेवग पुरष नें कहें छें बोलाय।
हस्ती खंधें तूं बेसनें, सताब सूं वनीता में जाय।।

१३. तीन च्यार मारग तिण ठामें, चचर नें महापंथ जांण।
तिहां मोटे-मोटे शब्दें करी, घोषणा कीजें मोटें मंडांण।।

३,४. देवताओं ने देवलोक के समान विनीता नगरी का निर्माण किया है। आप छह खंड के पृथ्वीपति स्वामी हैं। आप इसका लाखों पूर्व, करोड़ो पूर्व, करोड़ों-करोड़ों पूर्व तक पूर्ण ठाट-बाट से शासन करें।

५. जैसे तारों में चंद्रमा तथा देवताओं में इंद्र राज्य करते हैं वैसे ही आप प्रतिदिन सानंद विनीता में राज्य करें।

६. जैसे असुरकुमार में चमरेंद्र, नागकुमार में धरणेंद्र राज्य करते हैं वैसे ही आप दिन-प्रतिदिन सानंद विनीता में राज्य करें।

७. भरत नरेन्द्र की ओर निहार कर मुख से जय-विजय मांगलिक शब्दों का उच्चारण कर रहे हैं।

८. भरत नरेंद्र के विनीता नगरी में प्रवेश करते समय लोगों ने जो मांगलिक वचन मुंह से बोले थे उसी तरह सारा यहां विस्तार समझना चाहिए।

९-१०. बत्तीस सहस्र राजे, चार नररत्न, श्रेणि-प्रश्रेणि, सार्थवाह, सोलह हजार देवता आदि सभी आते हैं और इसी प्रकार प्रेमपूर्वक एक धार मांगलिक शब्द एवं आशीर्वाद बोल रहे हैं।

११. इस प्रकार बड़े आडंबर से भरतजी राज्यासीन हुए। मनचिंतित सारे मनोरथ सफल हो गए।

१२,१३. राज्याभिषेक के अनंतर भरतजी ने सेवक पुरुष को बुलाकर कहा- तू शीघ्र हस्ती के कंधे पर बैठकर विनीता के तिराहे, चौराहे, राजपथ आदि स्थानों में जाकर उच्च स्वर से साडंबर घोषणा करना।

१४. कहिजें दांण मापों थांनें सर्वथा मूंक्यो, गवादि कर मूंक्यो छें तांम।
तोला नें माप वधारजों, सगली नगरी नें ठांम ठांम।।

१५. किणरें घरे राजा रों पुरष म जावों, दंड पिण नही लेणों लिगार।
कुदंड पिण लेंणों नही, सर्व नगर नें देस मझार।।

१६. जें किणरेंइ माथें रिणों हुवें तो, देजों तुरत चुकाय।
जों घर में न हुवें तेहनें, देजों दुरबार सूं ले जाय।।

१७. आज पेंहली कोइ देंणों म राखो, वनीता नगरी रे मांहि।
जो खावा नें न हुवें घर मझे, तो ले जावों दुरबार सूं आय।।

१८. वळे वनीता नगर में धरणों मत पाडों, वळे मत करों कजीया राड।
उसभ किरतब करों मती, इण वनीता नगर मझार।।

१९. घर-घर महोछव हरष सूं मांडो, घर घर बांधो फूलमाल।
घर-घर रंग वधावणा, घर-घर गावो गीत रसाल।।

२०. रंगरली घर-घर माहे कीजो, कोइ मत कीजों सोग लिगार।
महामहोछव बारां बरसां लग, कीजों वनीता नगर मझार।।

२१. इत्यादिक महोछव विविध प्रकारें, कीजों नगरी में अनेक।
बारे बरसां लग कीजें नवनवा, दिन दिन हरष विशेष।।

२२. इण विध उदघोषणा जाय कीजों, वनीता नगर मझार।
ठांम ठांम सुणाए सर्व नें, तिणरी मतकर ढील लिगार।।

२३. इत्यादिक कह्या ते कार्य करेनें, पाछी आगना सूपे आंण।
ते सेवग सुण हरषत हूवों, वचन कर लीधो परमांण।।

१४. नगरी में स्थान-स्थान पर कहना कि सब प्रकार की चूंगी, गौ आदि कर मुक्त कर दिया गया है। तोल-माप में बढ़ोतरी करो।

१५. किसी के घर कोई राजपुरुष न जाए, दंड भी न ले। पूरे नगर और देश में कुदंड तो लेना ही नहीं है, दंड भी न लें।

१६. किसी के सिर पर ऋण हो तो उसे तुरंत चुका दे। यदि किसी के घर में न हो तो राज-दरबार से ले जाए।

१७. विनीता नगरी में आज तक का कोई ऋण न रखे। यदि किसी के घर में खाने का अभाव हो तो वह भी राज-दरबार से ले जाए।

१८. विनीता नगरी में कोई धरणा मत पाड़ना। कोई लड़ाई-झगड़ा मत करना। कोई भी गलत काम न करना।

१९. घर-घर में हर्ष से महोत्सव करें। घर-घर में फूल बांधो। घर-घर में रंग-बधामणा करो। घर-घर में सुरीले गीत गाओ।

२०. विनीता में घर-घर में खुशियां मनाओ। किसी भी प्रकार का तनिक भी शोक न करो। बारह वर्षों तक महामहोत्सव करते रहो।

२१. बारह वर्षों तक प्रतिदिन नगरी में सहर्ष नए-नए विशेष महोत्सव मनाओ।

२२. नगरी में स्थान-स्थान पर सबको सुना-सुनाकर यह उद्घोषणा करना। इसमें किंचित भी ढील-देरी मत करना।

२३. मैंने जितने कहे हैं वे सारे कार्य करके मेरी आज्ञा मुझे प्रत्यर्पित करना। सेवक यह सुनकर बहुत हर्षित हुआ। भरतजी की आज्ञा स्वीकार करली।

२४. सेवग हस्ती खंध बेंस चाल्यों, आयो वनीता मांहि।
भरतजी कह्यों सगलों करें, पाछी आगना सूंपी आय।।

२५. मंगलीक कीधा राज बेंठण रा, भरत नरिंद महाराज।
ते तों संजम लेसी राज छोडनें, मोख जासी सारे निज काज।।

◆

२४. सेवक हाथी के कंधे पर बैठ कर चला और विनीता में आकर भरतजी ने जो कहा वह सारा कार्य करके उनकी आज्ञा को प्रत्यार्पित किया।

२५. भरतजी ने राज्यारोहण का मंगलाचार किया, पर राज छोड़कर संयम लेकर मोक्ष में जाकर अपना कार्य सिद्ध करेंगे।

◆

दुहा

१. सेवग आय कह्यां पछें, सिंघासण सूं उठ्या तिण वार।
अस्त्री रत्न साथे हूइ, वळे अंतेवर चोसठ हजार।।

२. वळे नाटक बत्तीस हजार सूं, परवस्था थकां तिण वार।
पूर्व नें पावडीयें उतरे, हूआ हस्ती असवार।।

३. बत्तीस सहंस राजा उतस्था, उत्तर पावडीयां आय।
सार्थवाहादिक नें च्यारू-रत्न, दिखण दिस उतरीया ताहि।।

४. जिम चढीया तिम ऊतस्था, अभीषेक पीढ थी ताहि।
हस्तीरत्न चढीया थका भरतजी, पाछा आवें वनीता माहि।।

५. आठ आठ मंगलीक मुख आगलें, अनुक्रमें चाले छे तेथ।
आगें कह्यों वनीता में पेंसतां, ते सगली विध कहणी एथ।।

६. सतकार कस्यों लोकां घणों, विरदावलीयां अनेक विध जांण।
वळे मेंहलां पधास्या भरतजी, आगें कह्यों तिम सर्व पिछांण।।

७. कुबेर ते वेसमण नांमें देवता, चढें मेरू परवत केलास।
इण रीतें भरतजी मेंहलां चढ्या, सिखर भूत गगन आकास।।

ढाळ : ६१

(लय : आबू गढ तीरथ राजा)

१. हिवें भरत नरिंद तिण वार, गया मंजण घर मझार।
सिनांन कीयो छें रे, भरतेसर पूनबली परें।।

दोहा

१. सेवक के आने और सारी बात कहने के बाद सिंहासन से उठे। स्त्रीरत्न तथा चौसठ हजार अंत:पुर उनके साथ हो गया।

२. बत्तीस हजार नृत्यकारों से परिवृत्त होकर पूर्व दिशा की सीढ़ियों से नीचे उतर कर हाथी पर सवार हुए।

३. बत्तीस हजार राजा भी उत्तर दिशा की सीढ़ियों से नीचे उतरे। सार्थवाह आदि चारों रत्न दक्षिण दिशा से नीचे उतरे।

४. जिस प्रकार अभिषेक पीठ पर चढ़े उसी प्रकार उतरे। भरतजी हस्तीरत्न पर चढ़कर विनीता की ओर लौट रहे हैं।

५. आठ मांगलिक मुंह के सामने अनुक्रम से चल रहे हैं। विनीता में प्रवेश करते समय सारी विधि कही उसे यहां कहना चाहिए।।

६. लोगों ने उनका भरपूर सत्कार किया। अनेक प्रकार की विरुदावलियां बोलीं। पूर्वोक्त रूप से भरतजी महल में पधारे।

७. वैश्रमण नाम का कुबेर देवता जैसे मेरु पर्वत की कैलाश चोटी पर चढ़ता है उसी प्रकार भरतजी आकाश में शिखर की तरह अपने महलों में चढ़े।

ढाळ : ६१

१. अब पुण्यबली भरतजी स्नानघर में जाकर स्नान करते हैं।

२. पछें भोजन मंडप पेंस, सुखकारी आसण बेंस।
तिहां तेरमा तेला रो रे, भरतेसर कीधो पारणो।।

३. भोजन करे तिण वार, तिहां थी नीकलीया बार।
महिलां माहे बेंठा रे, सारां उपरली भूमका।।

४. ते महिल छें पांच प्रकार, त्यांरो बोहत कह्यो विसतार।
त्यांनें देवता नीपजाया रे, रत्न अमोलक तेहमें।।

५. आरीसा मेंहल अचंभ, तिण माहे दीसे प्रतिबिंब।
तिण महलां में रे, भरतेसर केवल पांमसी।।

६. सिखर भूत गगन आकास, ऊचा छें मेंहल आवास।
बयालीस भोम्या रे, मेंहल घणा रलीयांमणा।।

७. ते मेंहल छें रत्न जडंत, ते देख देख हरखंत।
तिहां उद्योत रत्नां रो रे, मेंहलां में सदा होय रह्यो।।

८. तिहां पुतलीयां मनहरणी, ते अनोपम सोवन वरणी।
ते जांणक इंद्राणी रे, मुख आगल नाटक नाचती।।

९. रंग मंडप तोरण जाली, कोरणीयां अति रूपाली।
खांत खांताली रे, ते दीसें अति रलीयांमणी।।

१०. तिहां रूप चित्रांम अनेक, ते सोभ रह्या छें विशेख।
त्यांरो रूप मनोज्ञ रे, लागें नयणां नें सुहांमणों।।

११. किंनर देवतां रां रूप, ते दीसें घणूं अनूंप।
विद्याधर ना जोडा रे, रूपाला मांड्या मेंहिल में।।

१२. वळे लहस्या भांत अनूंप, त्यांनें कीधी घणी धर चूप।
ते केसर क्यारी ज्यूं रे, पंचवरणी बुट्यां खुल रही।।

२. फिर भोजन मंडप में प्रवेश कर सुखकारी आसन में बैठकर वहां तेरहवें तेले का पारणा करते हैं।

३. भोजन करके वहां से निकलकर महलों में सर्वोच्च मंजिल पर विराजमान हुए।

४. महलों के पांच प्रकारों का बहुत बडा विस्तार कहा गया है। देवताओं ने उनका निर्माण किया। उनमें अनेक अमूल्य रत्न भरे हैं।

५. आदर्श महल (काच महल) तो अत्यंत आश्चर्य कारक है। उसमें प्रतिबिंब दिखाई देता है। उसी महल में भरतजी केवलज्ञान प्राप्त करेंगे।

६. आकाश में शिखर के समान समुन्नत बयालीस भौमिक (मंजिल) महल अत्यंत मनोहर हैं।

७. उन रत्नजटित महलों को देख देखकर हर्षित होते हैं। वहां निरंतर रत्नों का उद्योत होता है।

८. वहां अनुपम स्वर्णवर्णी मनोरम पुतलियां ऐसी लगती हैं जैसे मुंह के सामने इंद्राणी नृत्य कर रही हो।

९. रंग-मंडप, तोरण तथा जालियों की कोरणियां अत्यंत मोहक हैं। उनकी खुदाई बहुत मनोरम है।

१०. वहां अनेक रूपचित्र सुशोभित हो रहे हैं। उनका मनोज्ञ रूप आंखों को सुहामना लगता है।

११. किन्नर देवताओं के अनेक अनुपम रूप उसमें चित्रित हैं। विद्याधरों के युगलों के मोहक चित्र भी चित्रित हैं।

१२. अनुपम लहरियों की खुदाई बड़ी चतुराई से की गई है। उनमें केशर-क्यारी की पंचवर्णी फूलपत्तियां खिल रही हैं।

१३. त्यां मेंहलां में अतंत उद्योत, तिहां लागी झिगामिग ज्योत।
चंदरमा शरीखो रे, उजवालों तिण म्हेंलां तणों।।

१४. राते वीजलीयां झलकें, तिम मेंहल भरत रा भलकें।
सूर्य किरण सरीखों रे, मेंहलां रो चलकों चिहूं दिसां।।

१५. ते म्हेंल घणा श्रीकार, त्यांरो सूंदर रूप आकार।
देवतां नीपजाया रे, त्यां म्हेंलां रो कहिवो किसूं।।

१६. म्हेंलां रो घणो विसतार, तिणरो जांण लेजों अणुसार।
इंदर तणा म्हेंलां री रे, तिण महिलां छें ओपमा।।

१७. मादल ना मस्तक फूटें, त्यांरा सबद मनोगन उठें।
सहंस बत्तीस नाटक करें, पडे छें बत्तीस प्रकार ना।।

१८. अस्त्री रत्न संघात, सुख भोगवें दिन रात।
तिणसूं भोग भोगवे रे, मनोगन पंच प्रकार ना।।

१९. अंतेवर चोसठ हजार, ते अपछर रे उणीयार।
त्यांसूं पिण मनोगन रे, रात दिवस सुख भोगवें।।

२०. भोगवें भोग रसाल, इम सुखे गमावें काल।
अभिषेक महोछव रे, करतां बारें वरस नीकल्या।।

२१. महा महोछव रूडों, बारें वरसें हूवो पूरो।
जब भरत राजेसर रे, आया मंजण घर तेहमें।।

२२. सिनांन करे तिण काल, पछें आया उवठांण साल।
तिहां सिंघासण बेठा रे, भरतजी पूर्व सनमुखें।।

२३. देवता सोलें हजार, सनमानें सतकार।
त्यांनें सीख देइनें रे, निज ठिकांणें मेलीया।।

१३. उन महलों में चंद्रमा सरीखे उद्योत की जगमगाहट लग रही है।

१४. रात्रि में जैसे विद्युत झलकती है उसी प्रकार भरतजी के महल झलक रहे हैं। चारों दिशाओं में उनकी चमक सूर्य की किरणों सरीखी है।

१५. वे महल अत्यंत श्रीकार हैं। उनका रूपाकार भी सुंदर है। जिन महलों का निर्माण स्वयं देवताओं ने किया है उनका क्या कहना?।

१६. उन महलों का बहुत बड़ा विस्तार है। इंद्र के महलों से इन्हें उपमित किया जा सकता है। उसके अनुसार ही सारी बात जाननी चाहिए।

१७. मृदंग के मस्तक पर थाप पड़ रही है। उसके मनोज्ञ शब्द उठ रहे हैं। बत्तीस हजार नृत्यकार बत्तीस प्रकार के नाटक कर रहे हैं।

१८. स्त्रीरत्न के साथ दिन-रात पांचों इंद्रियों के मनोज्ञ काम-भोग सुखपूर्वक भोग रहे हैं।

१९. उनका चौसठ हजार अंत:पुर भी अप्सराओं की प्रतिकृति वाला है। उनसे भी वे रात-दिन मनोज्ञ सुखों का भोग कर रहे हैं।

२०. इस प्रकार रसाल भोग भोगते हुए सुखपूर्वक काल व्यतीत हो रहा है। यों अभिषेक महोत्सव के बारह वर्ष निकल गए।

२१,२२. मोहक महामहोत्सव के बारह वर्ष पूरे हो जाने पर भरतजी स्नानगृह में आकर स्नान कर उपस्थान शाखा में आते हैं। पूर्वाभिमुख होकर सिंहासन पर बैठते हैं।

२३. सोलह हजार देवताओं को सत्कार-सम्मान देकर अपने ठिकानों की ओर विदा करते हैं।

२४. वळे बत्तीस सहंस राजांन, सेनापती रत्न निधांन।
गाथापती वढइ रे, वळे चौथा प्रोहित रत्न नें।।

२५. तीनसो साठ रसोइदार, श्रेणी प्रश्रेणी अठार।
वळे अनेक राजेसर रे, सार्थवाहादिक तेहनें।।

२६. यां सगलां नें भरत राजांन, घणों सतकारे सनमांन।
त्यांनें सीख देइनें रे, निज ठिकांणे म्हेलीया।।

२७. सगलां नें सीख देइ ताहि, आया निज मेंहिलां माहि।
तिहां सुख मनोज्ञ रे, तिण मेंहलां माहे भोगवें।।

२८. त्यांनें जांणें आल-पंपाल, ए मोटों माया जाल।
त्यांनें अंतरंग माहे रे, जांणें छें विष फल सारिखा।।

२९. त्यांसूं उत्तर जासी हेज, छोडतां नही करसी जेझ।
संजम लेइनें रे, सिध गति में जासी पाधरा।।

◆

२४-२६. इसी प्रकार बत्तीस हजार राजाओं, सेनापति, गाथापति, बढ़ई तथा पुरोहित रत्न को, तीन सौ साठ रसोइयों, अठारह-अठारह श्रेणि-प्रश्रेणि तथा अनेक राजेश्वर, सार्थवाह आदि सभी को अत्यंत सत्कार-सम्मान देकर भरतजी ने अपने ठिकानों की ओर विदा किया।

२७. सबको विदा कर अपने महलों में आए और वहां मनोज्ञ सुखों का उपभोग करने लगे।

२८. पर अंतरंग में उन्हें बड़ा प्रपंच, मायाजाल तथा विष-फल सरीखा जानते हैं।

२९. इनसे स्नेह उतर जाएगा उसके बाद छोड़ने में जरा भी देर नहीं करेंगे। संयम लेकर सीधे सिद्धगति में जाएंगे।

◆

दुहा

१. चक्ररतन नें छत्ररतन, दंड ने असी रत्न वखांण।
एं च्यारूंइ रत्न एकइंदरी, आवधसाला में उपनां आंण।।

२. चर्म रत्न नें मणी कागणी, ए तीनूं रत्न एकंदरी ताहि।
नव निधांन में श्रीघर भंडार छें, तिण माहे उपनां आय।।

३. सेनापती नें गाथापती, वढइ नें प्रोहित ताहि।
ए च्यारूंइ रत्न पंचिइंदरी, उपना छे वनीता माहि।।

४. अश्व रत्न हस्ती रत्न ते, ए दोनूं रत्न पंचिदंरी जांण।
ते वेताढ पर्वत तेहनें, मूलें उपनां आंण।।

५. सुभद्रा नांमें अस्त्री रतन ते, वेताढ नें उत्तर दिस तांम।
तिहां विद्याधरनी श्रेण छें, अस्त्री रत्न उपनी तिण ठांम।।

६. ए चवदें रत्नां री उतपत कही, त्यांरों अधिपती भरत माहाराय।
त्यांरी रिध तणों वरणव करूं, ते सांभलजो चित्त ल्याय।।

ढाळ : ६२

(लय : कपूर हुवे अति ऊजलो रे)

पुन तणा फल जोय, पुन पाप दोनूं खय हुवें जी।।
तब मुगत तणा सुख होय।।

१. तिणकालें नें तिण समें जी, नगरी वनीता नांम।
लोक बहु सुखीया वसें जी, मोटा राजानों ठांम। भरतेसर।।

दोहा

१. चक्ररत्न, छत्ररत्न, दंडरत्न तथा असिरत्न– ये चारएकेंद्रिय रत्न आयुध-शाला में आकर उत्पन्न हुए।

२. चर्मरत्न, मणिरत्न तथा काकिणीरत्न– ये तीन एकेंद्रिय रत्न नौ निधान के श्रीघर में आकर उत्पन्न हुए।

३. सेनापतिरत्न, गाथापतिरत्न, बढ़ईरत्न तथा पुरोहितरत्न– ये चार पंचेंद्रिय रत्न विनीता नगरी में उत्पन्न हुए।

४. अश्वरत्न तथा हस्तीरत्न– ये दोनों पंचेंद्रिय रत्न वैताढ्य पर्वत के मूल में आकर उत्पन्न हुए।

५. सुभद्रा नाम का स्त्रीरत्न वैताढ्य पर्वत की उत्तर दिशा में जहां विद्याधरों की श्रेणि है, उस स्थान में उत्पन्न हुआ।

६. इस प्रकार चौदह रत्नों की उत्पत्ति हुई। भरतजी उनके अधिपति हैं। उनकी ऋद्धि का वर्णन कर रहा हूं। चित्त लगाकर सुनें।

ढाळ : ६२

पुण्य का फल देखें। पुण्य-पाप दोनों के क्षीण होने से मुक्ति के सुख प्रकट होते हैं।

१. उस काल और उस समय में विनीता नाम की नगरी है। वहां लोग सुखपूर्वक रहते हैं। भरतजी वहां के महान् राजा हैं।

२. भाइ नीनांणू भरत ना जी, जांणी इथर संसार।
श्री आदेसर आगलें जी, पालें संजम भार।।

३. मोरा देवी मुगते गया जी, भावे भावना सार।
केवलग्यांनी वखाणीयों जी, साल रूंख रे साल पिरवार।।

४. सितंतर लाख पूर्व नीकल्या जी, जब राज बेंठा साहसीक।
एक सहंस वरस लगें रह्या जी, मोटा राजा मंडलीक।।

५. सहंस वरस मंडलीक राजा रह्या जी, सीह जिम करता ओगाज।
पछें पुन जोग सूं आवी मिल्या जी, चक्रवत पदवी नां साज।।

६. साठ सहंस वरसां लगें जी, वरताइ भरत में आंण।
वस कीया सहु भोमीया जी, केहनों न चालें प्रांण।।

७. चवदें रतन त्यांरें घरे जी, वळे प्रगट्या नव निधांन।
सोलें सहंस देवता सेवा करें जी, वळे बत्तीश सहंस राजांन।।

८. बत्तीस सहंस रितू किल्याणका जी, रितू रितूना सुख नीं देणहार।
बत्तीस सहंस राजा री बेटीयां जी, ते किल्याणका बत्तीस हजार।।

९. ए चोसठ सहंस अंतेवरीजी, दोय दोय एकण लार।
गिणती आइ छें एतली जी, एक लाख नें बांणू हजार।।

१०. इतला रूप चक्रवत करें जी, तेहसूं भोगवें भोग।
पूर्व पुन उदें हूआ जी, तिणसूं मिलीयो जोग।।

११. चोसठ सहंस राजेसरू जी, सेवा करें मन मोड।
तप वरतायों एहवों जी, केहनो न चालें जोड।।

१२. बत्तीस सहंस नाटक पडें जी, त्यांरा उठ रह्या धुंकार।
इचर्यकारी अति घणा जी, ते जूआ जूआ बत्तीस परकार।।

२. भरतजी के निन्नाणवें भाई संसार को अस्थिर जानकर आदिनाथ के सम्मुख संयम का पालन कर रहे हैं।

३. भरतजी की माताजी मोरांदेवी शुभ भावना भा कर केवलज्ञानी होकर मुक्ति में गईं। शालवृक्ष का परिवार भी शाल जैसा ही होता है।

४. सितत्तर लाख पूर्व बीतने पर भरतजी साहस के साथ राज्यासीन हुए। एक हजार वर्षों तक वे बड़े मांगलिक राजा के रूप में रहे।

५. एक हजार पूर्व तक वे मांडलिक राजा के रूप में सिंह तरह ओगाज करते रहे। फिर पुण्ययोग से उन्हें चक्रवर्ती पद के सारे साज प्राप्त हुए।

६. साठ हजार वर्षों तक उन्होंने भरतक्षेत्र में आज्ञा का प्रवर्तन किया। सभी राजाओं को उन्होंने वश में किया। उनके सामने किसी का जोर नहीं चलता।

७. चौदह रत्न तथा नौ निधान उनके घर में प्रकट हुए। सोलह हजार देवता तथा बत्तीस हजार राजा उनकी सेवा करते हैं।

८. बत्तीस हजार राजाओं की बत्तीस हजार पुत्रियां कल्याणिकाएं उन्हें ऋतु-ऋतु का सुख प्रदान करती हैं।

९. एक-एक कल्याणिका के साथ दो-दो सेविकाएं होने से भरतजी के अंतःपुर की संख्या एक लाख बाणवें हजार हो गई।

१०. चक्रवर्ती इतने रूप बनाकर उनके साथ भोग भोगता हैं। पूर्व पुण्य के उदय से यह सारा योग मिला।

११. चौसठ हजार राजेश्वर मान का त्यागकर उनकी सेवा करते हैं। उन्हें ऐसे तेजस्व का प्रवर्तन किया कि उनके सामने किसी का जोर नहीं चलता।

१२. बत्तीस प्रकार के अत्यंत आश्चर्य कारक विभिन्न नाटकों के बत्तीस हजार नर्तकों के धुंकार उठ रहे हैं।

१३. रसोइदार तीनसों नें साठ छें जी, बुधवंत चतुराइदार।
वळे आग्याकारी छें भरत ना जी, वळे श्रेणी प्रसेणी अठार।।

१४. घोडा हाथी रथ अति घणा जी, चोंरासी चोंरासी लाख।
वळे पायदल छिनूं कोड छें जी, त्यांरी सूतर में छें साख।।

१५. बोहीत्तर सहंस नगर कह्या जी, गांम छें छीनूं कोड।
अड़तालीस सहंस पाटण अछें जी, दलबल पायक जोड।।

१६. बत्तीस सहंस जनपद देस छें जी, द्रोणमुख छें निनांणूं हजार।
चोवीस सहंस कवड कह्या जी, चोवीस सहंस मंडप विचार।।

१७. सोना रूपादिक तेहना जी, आगर वीस हजार।
सोलें सहंस खेड कह्या जी, सोलें सहंस संबाह सुविचार।।

१८. छपन अंतरोदक पांणी मझे जी, गुणचास भीलां पर कुराज।
इत्यादिक सगलाइ तेहनों जी, अधिपती भरत माहाराज।।

१९. चुल हेमवंत नें समुद्र विचें जो, सगलें भरतजी री आंण।
संपूर्ण भरत खेतर मझे जी, सारा आंण करें परमांण।।

२०. सार्थवाह राजा सहू जी, इत्यादिक सगलाइ जांण।
त्यांरो अधिपतीपणों करतो थको जी, विचरें छें मोटें मंडांण।।

२१. महल बयालीस भोमीया जी, चोबारा चित्रसाल।
बत्तीस विध नाटक पडें जी, एम गमावें काल।।

◆

१३. तीन सौ साठ बुद्धिमान तथा चतुर रसोइये तथा आज्ञाकारी अठारह श्रेणि-प्रश्रेणि हैं।

१४. चौरासी-चौरासी लाख हाथी, घोड़े और रथ तथा छियानबे करोड़ पैदल सैनिक हैं। आगम उनके साक्ष्य हैं।

१५-१७. बहोत्तर हजार नगर, छिन्नाणवें करोड़ ग्राम, अड़तालीस हजार पाटण, बत्तीस हजार जनपद, निन्नाणु हजार द्रोणमुख, चौबीस हजार कवड़, चौबीस हजार मडंब, सोने-चांदी की बीस हजार खानें, सोलह हजार खेड, सोलह हजार संवाह हैं।

१८. छप्पन द्वीप पानी में हैं। गुणचास भीलों के आदिवासी कुराज्य हैं। इन सबके अधिपति भरतजी हैं।

१९. चूल हेमवंत से लेकर लवण समुद्र तक सब जगह भरतजी की आज्ञा प्रवर्तित होती है। पूरे भरतक्षेत्र में सारे लोग उनकी आज्ञा मानते हैं।

२०. सार्थवाह, राजा आदि सभी लोगों पर आधिपत्य करते हुए वे साडंबर विहार करते हैं।

२१. बयालीस भौमिक महलों के चौबारों-चित्रशालों में बत्तीस प्रकार के नाटक देखते हुए अपना काल व्यतीत करते हैं।

◆

दुहा

१. कोई वेंरी दुसमण नही तेहनें, सुखे करें छें राज।
मन रा मनोरथ पूरतो थकों, करें मन चिंतवीया काज।।

२. राज करें छें निरभय थका, दिन दिन इधिक अणंद।
कांम भोग मनोगन भोगवें, षटखंड केरों छें इंद।।

३. काल गमावें काम भोग में, चिंता फिकर नही छें लिगार।
भरत नरिंद रा सुखां तणों, पूरो कह्यों न जायें विसतार।।

४. एहवा सुख आए मिल्या, पूर्व तपनों फल जांण।
तप करतां पुन बांधीया तके, उदे हुआ छें आंण।।

५. कथा माहे इम कह्यों, भरतजी करें छें विचार।
रखे काम भोग में खूतों थकों, काल कर जाऊं राज मझार।।

६. महारें लेंणों छें निश्चें साधुपणों, कांम भोग देणा छें छिटकाय।
रखे भूल पडे यूंही रहूं, तो याद आवें ते करणों उपाय।।

ढाळ : ६३

(लय : कुमार इसो मन चिंतवे)

भरत भावे रूडी भावना।।

१. हिवें भरत नरिंद मन चिंतवें, म्हारें लेंणों छें निश्चें संजम भार।
जो हूं काल करूं इण राज में, तो हूं जाऊं रे निश्चें नरक मझार।

दोहा

१. भरतजी के कोई भी बैरी-दुश्मन नहीं हैं। मनचिंतित कार्य करते हुए, मन के मनोरथों को पूर्ण करते हुए वे सुखपूर्वक राज्य करते हैं।

२. वे इंद्र के समान दिन-प्रतिदिन सानंद निर्भय होकर छह खंड का राज्य करते हैं। मनोज्ञ कामभोग का सेवन करते हैं।

३. उनका पूरा काल कामभोगों में ही बीतता है। किंचित् भी चिंता-फिक्र नहीं है। भरत नरेंद्र के सुखों का पूरा विस्तार कहना असंभव है।

४. पूर्व तप के प्रभाव से ऐसे सुख प्राप्त हुए हैं। तप करते समय जिन पुण्यों का बंधन हुआ था वे ही आकर उदित हुए हैं।

५. कथा में ऐसा कहा जाता है कि भरतजी ने विचार किया कि कहीं ऐसा नहीं हो कि मैं काम-भोगों में आसक्त रह कर राज्यकाल में ही मर जाऊं?।

६. निश्चय ही मुझे काम-भोगों को त्यागकर साधुत्व ग्रहण करना है। कहीं ऐसा नहीं हो कि मैं व्यर्थ ही भूल में पड़ा रह जाऊं? इसलिए मुझे ऐसा उपाय करना चाहिए जिससे वह स्मृति बनी रहे।।

ढाळ : ६३

भरत शुभ भावना भाते हैं।

१. अब भरत नरेंद्र मन में चिंतन करते हैं- मुझे निश्चय ही संयमभार ग्रहण करना है। यदि मैं राजा रहते हुए मरा तो निश्चय ही नरक में जाऊंगा।

२. एहवी करेय विचारणा, घडीयालो रे बंधायों छें तांम।
घडी घडी जूइ जूइ वाजीयां, विचार लेसूं रे मन में तिण ठांम।।

३. घडी घडी घटी भरत ताहरी, आउ मांसूं रे घटी जांण सूं ताहि।
मोनें याद रहसी घर छांडणों, तो हूं लेसूं रे संजम सुखदाय।।

४. इण कारण घडीयालों बांधीयों, ते सुणतां-२ रे वितों कितों एक काल।
वळे बीजों करें छें जाबतो, तिणसूं म्हारे रे हीए लेसूं संभाल।।

५. दोय सेवग बोलायनें इम कहें, हूं आय बेसूं रे सिंघासण दरीखांन।
जब थें कहिजों वार-वार मों भणी, चेत चेत हो चेत भरत राजांन।।

६. अें दोनूंइ जाबता बांधीया, ते तों निश्चें रे दिख्या लेवा रें काज।
पिण कर्म उदें छें भोगावली, तिणसूं त्यांनें रे मीठों लागे छें राज।।

७. जब जब आय बेसें सिंघासणें, राज सभा रें तिहां करें दरीखांन।
तब तब सेवग इम उचरें, चेत चेत हो चेत भरत राजांन।।

८. ते वचन सुणेनें भरतजी, मन माहे रे घणों हरषत थाय।
दिख्या लेवा री मन माहे लग रही, तिण कारण रे एहवा कीधा उपाय।।

९. कांम भोग मनोगन तेहनें, अंतरंग में रे जांणें जाल समांन।
तिणसूं चारित लेवा री भावना, साचें मन रें भावें भरत राजांन।।

१०. एहवा परिणांम छें तेहना, त्यांरा सीझें रे मन वंछित कांम।
जो कर्म थोडा हुवें तेहना, एकधारा रे चोखा रहें परिणांम।।

◆

२. यह सोचकर ही उन्होंने एक घडियाल बंधवाया। हर घड़ी में अलग-अलग आवाज होगी तब मैं यह विचार करता रहूंगा।

३. भरत! तुम्हारे आयुष्य की घड़ी-घड़ी में एक घड़ी घट गई है। इससे मुझे गृहत्याग की स्मृति बनी रहेगी और मैं यथासमय सुखदायक संयम ग्रहण कर लूंगा।

४. इसीलिए उन्होंने एक घड़ियाल बंधवाया। उसे सुनते-सुनते कुछ समय व्यतीत हो गया। इसी बीच अपने हृदय की संभाल के लिए वे एक दूसरा उपाय भी करते हैं।

५. दो सेवकों को बुलाकर ऐसा कहते हैं- मैं दरबार में सिंहासन पर बैठूं तब तुम आकर मुझे कहना- 'भरत राजा चेतो, चेतो, चेतो!'।

६. दीक्षा लेने के निश्चय के लिए ही ये दोनों उपाय किए। पर अभी तक भोगावली कर्म उदय में हैं इसलिए राज्य मीठा लगता है।

७. जब-जब वे दरबार में आकर राजसभा में बैठते हैं तो वे दोनों सेवक उच्चारण करते हैं- 'भरत राजा! चेतो, चेतो, चेतो!'।

८. उन वचनों को सुनकर भरतजी मन में अति हर्षित होते हैं। दीक्षा लेने की मन में चाह है उसी से ऐसे उपाय किए हैं।

९. काम-भोग मनोज्ञ तो हैं पर अंतरंग में उन्हें जाल के समान जानते हैं। इसलिए भरत राजा सच्चे मन से चरित्र लेने की भावना भाते हैं।

१०. उनके ऐसे परिणाम हैं। इसीलिए उनके मनवांछित कार्य सिद्ध होते हैं। जिसके कर्म अल्प होते हैं उनके एकधार अच्छे परिणाम रहते हैं।

◆

दुहा

१. तिण कालें नें तिण समें, वनीता नगर मझार।
तिहां रिषभ जिणंद पधारीया, साथे साधां रो बहु परिवार।।

२. ते आय उतरीया वाग में, भव जीवां रे भाग।
मारग दिखावें मोख रो, उपजावें वेंराग।।

३. खबर हुई नगरी मझे, लोक आवें हरष मन आंण।
भरत जी सुणे मन हरखीया, वांदण आया छें मोटें मंडांण।।

४. वंदणा कीधी हरख सूं, बेंठा सनमुख आय।
भगवंत दीधी देसना, सगलां नें हित ल्याय।।

५. वांणी सुणनें परिखदा, आइ जिण दिस जाय।
हिवें भरत नरिंद पूछा करें, ते सुणजों चित्त ल्याय।।

ढाळ : ६४

(लय : सांमी म्हारा राजा नें धर्म.....)

हूं अरज करूं छूं वीणती।।

१. हाथ जोडी वीनती करें, नींचो सीस नमाय हो सांमी।
आ परिखदा आय मिली घणी, त्यांमें वडवडा मुनीराय हो सांमी।

२. सारा साधु नें साधवी, श्रावक-श्रावका जांण हो सांमी।
ते मोडा-वेगा पेंहलां पछें, सगला जासी निरवांण हो सांमी।।

३. ते पूछा हूं करूं नही, त्यांरी संका पिण नही काय हो सांमी।
पिण परखदा आय मिली घणी, पिण आप सरीखों कोइ थाय हो।।

दोहा

१. उस काल और उस समय में विनीता नगरी में ऋषभ जिनेंद्र अपने बड़े साधु परिवार के साथ पधारते हैं।

२. भव जीवों के भाग्य से वे उपवन में आकर उतरे। मोक्ष का मार्ग दिखलाते हुए वैराग्य को जगाते हैं।

३. नगरी में नागरिकों को पता चला तो हर्षित होकर वहां आने लगे। भरतजी भी यह सुनकर हर्षित हुए और सज-धज कर वंदना करने के लिए आए।। ३।।

४. हर्ष से वंदना की और सामने आकर बैठ गए। भगवान् ने सब के हित के लिए उपदेश दिया।

५. उपदेश सुनकर परिषद् जिस दिशा से आई थी उसी दिशा में चली गई। अब भरत नरेंद्र प्रश्न करते हैं उसे चित्त लगाकर सुनें।

ढाळ : ६४

मैं आपसे विनयपूर्वक एक प्रश्न कर रहा हूं।

१,२. हाथ जोड़कर नतमस्तक होकर पूछते हैं– स्वामिन्! अभी इतनी परिषद् जुड़ी है, इसमें बड़े-बड़े मुनिराज, साधु-साध्वी, श्रावक-श्राविकाएं आए हैं। आगे-पीछे, जल्दी या देरी से, ये सारे निर्वाण को प्राप्त होंगे।

३. मुझे इसमें शंका नहीं है। इसलिए मैं यह प्रश्न भी नहीं करता हूं। मैं तो यही पूछता हूं– इतनी बड़ी परिषद् में क्या आप जैसा कोई तीर्थंकर भी होगा?।

४. जब रिक्षभ जिणेसर इम कहें, सुण तूं राखे चित्त ठांम हो भरत।
ओ तिरदंडीयों बेटो तांहरो, मरीच तिणरो नांम हो भरत।
ओ होसी तीर्थंकर चोवीसमों।।

५. ते पेंहली दोय पदवी पांमसी, वासूदेव चक्रवत सोय हो।
वळे असंख्याता भव कीधां पछें, छेंहलों तीर्थंकर होय हो।
वीर जिणंद चोंवीसमों।।

६. ए वचन सुणेनें भरत जी, मन में हरखत थाय हो सांमी।
ए आप कह्यों ते सतवाय छें, म्हारें संका नही मन मांहि हो सांमी।
ओ होसी तीर्थंकर चोवीसमों।।

७. वंदणा करनें नीकल्या, आया समोसरण बार हो भरत जी।
तिहां मरीच बेठों तिणनें कह्यों, तूं होसी तीर्थंकर अवतार हो। मरीच।
तूं वीर जिणंद चोवीसमों।।

८. ए वचन सुणे मरिच हरखीयों, पांमें मन में अणंद हो सांमी।
रोम उकसत हुआ तेहनां, जांण्यों हूं होय सूं जिणंद हो सांमी।
हूं वीर जिणंद चोवीसमों।।

९. हिवें गणधर रिक्षभ जिणंद ना, वीनोकर सीस नमाय हो सांमी।
प्रश्न पूछूं हूं आपनें, किरपा करदों वताय हो सांमी।
हूं अरज करूं छूं वीनती।।

१०. भरत नरिंद मोटों राजवी, छ खंड रों सिरदार हो सांमी।
काल करेनें इहां थकी, जासी किण गति मझार हो सांमी।
हूं अरज करूं छूं वीनती।।

११. रिषभ जिणेसर इम कहें, सुण तूं चित्त लगाय हो मुनीवर।
भरत आउखों पूरों करे, जासी सिध गति माहि हो मुनीवर।
कर्म आठोइ खपायनें।।

४. तब ऋषभ जिनेश्वर ने कहा– भरत! तू चित्त को स्थिर रखकर सुन, बाहर त्रिदंडधारी मरीची नाम का तुम्हारा पुत्र है, यह चौबीसवां तीर्थंकर होगा।

५. उससे पहले यह वासुदेव और चक्रवर्ती की दो पदवियां और पाएगा। असंख्य भव करने के बाद यह अंतिम चौबीसवां वीर जिनेंद्र होगा।

६. यह वचन सुनकर भरतजी मन में हर्षित हुए। आपने कहा वह सत्य वचन है। मेरे मन में कोई शंका नहीं है। यह चौबीसवां तीर्थंकर होगा।

७. भरतजी वंदना कर वहां से निकलकर समवसरण के बाहर आए। बाहर मरीची बैठा था। उसे कहा– तू चौबीसवें तीर्थंकर वीर के रूप में अवतार लेगा।

८. यह वचन सुनकर मरीची हर्षित हुआ, मन में आनंदित हुआ, उसका रोम-रोम उत्कर्षित हुआ। उसने जाना, मैं वीर नाम का चौबीसवां तीर्थंकर होऊंगा।

९. अब ऋषभ जिनेंद्र के गणधर ने सिर झुकाकर विनय कर पूछा– स्वामिन्! मैं आपको प्रश्न पूछता हूं। आप कृपा कर बताएं।

१०. छह खंड का बड़ा सरदार बड़ा राजा भरत नरेंद्र यहां से काल (मर) कर किस गति में जाएगा?।

११. ऋषभ जिनेश्वर ने कहा– मुनिवर! तू चित्त लगाकर सुन। भरत यहां से आयुष्य पूरा कर आठों कर्मों का क्षय कर सिद्ध गति में जाएगा।

१२. ए वचन सुणेनें परखदा, हिवडें हरखत थाय हो सांमी।
आप कह्यों ते सतवाय छें, तिणमें संका न रही काय हो सांमी।
भरत मुकत जासी इण भवे।।

◆

१२. यह वचन सुनकर परिषद् हृदय से हर्षित हुई। आपने कहा वह वचन सत्य है। इसमें कोई शंका नहीं है। भरत इसी भव में मुक्ति जाएगा।

◆

दुहा

१. ए वात लोकां में विसतरी, रिषभ देव जी कह्यो छें आंम।
भरत जी आउखों पूरों करे, मोख जासी अविचल ठांम।।

२. काल कितोएक वीतां पछें, भरत जी बेंठा सभा मझार।
कोटवाल पकड़ एक चोर नें, तिणनें लेइ आया दरबार।।

३. चोर आंण्यों उभों देखनें, पूछें छें भरत माहाराज।
इणनें बांध आंण्यों किण कारणें, इण कांइ कीधो छें अकाज।।

४. जब कोटवाल कहें हाथ जोडनें, इण चोरी कीधी नगरी माहि।
इम सुणनें कहे छें भरत जी, इणनें मारो इहां थी ले जाय।।

५. जब चोर विनो करे बोलियो, जोडे दोनूंइ हाथ।
आप अबके छोडों मोनें जीवतों, हूं चोरी न करूं पृथीनाथ।।

६. जब भरतजी कहें कोटवाल नें, इणरी घात मत करजो आज।
चोरी छोड्यां तो चोर मर गयों, हिवें इणनें मारों किण काज।।

७. तिण चोर नें जीवतों छोडीयों, ते चोर गयों निज ठांम।
तिण चोर चोरी कीधी वळे, जब वळे पकड लीयों तांम।।

८. चोर नें फेर ल्यायों सभा मझे, आंणनें उभों राख्यों ताहि।
भरत जी सूं मालिम करी, चोर उहीज छें माहाराय।।

९. जद कहितों हूं चोरी करूं नही, वळे चोरी कीधी घर फोड।
जब भरतजी कह्यों कोटवाल नें, इणरो मस्तक न्हांखो तोड।।

दोहा

१. लोगों में यह बात फैल गई। ऋषभदेवजी ने कहा है कि भरतजी आयुष्य पूरा कर अविचल स्थान मोक्ष-स्थान में जाएंगे।

२. कुछ समय बाद भरतजी सभा के बीच बैठे थे। कोटवाल एक चोर को पकड़ कर दरबार में आया।

३. लाए हुए चोर को खड़ा देखकर भरत महाराज ने पूछा- इसको बांधकर क्यों लाए हो? इसने क्या अनर्थ कार्य किया है?।

४. कोटवाल ने हाथ जोड़कर कहा- इसने नगर में चोरी की है। यह सुनकर भरतजी ने कहा- इसे यहां से ले जाकर मार डालो।

५. तब चोर दोनों हाथ जोड़कर विनयपूर्वक बोला- आप इस बार मुझे जीवित छोड़ दें। पृथ्वीनाथ! अब मैं कभी चोरी नहीं करूंगा।

६. भरतजी ने कोटवाल से कहा- इसे आज मत मारना। चोरी छोड़ने से चोर तो अपने आप मर गया। अब इसे किसलिए मारा जाए।

७. चोर को जीवित छोड़ दिया गया। वह अपने घर गया। पर थोड़े दिनों बाद उसने फिर चोरी की और पकड़ा गया।

८. कोटवाल ने फिर चोर को सभा में लाकर खड़ा किया। भरतजी को मालूम किया- महाराज! यह वही चोर है।

९. उस समय इसने कहा था कि अब चोरी नहीं करूंगा। इसने फिर घर को फोड़ कर चोरी की है। तब भरतजी ने कहा- इसका मस्तक काट डालो।

ढाळ : ६५

(लय : मेघ मुनीसरू०)

कर्म बिटंबणा।।

१. ए वात प्रसिध हुइ लोक में रे हां, भरतजी मरायो छें चोर।
केइ धर्म तणा धेषी हुता रे हां, त्यांरो लागों हिवें जोर।

२. एक अग्यांनी धेषी धर्म नों रे हां, रिषभदेवजी भाख्यों छें आंम।
भरत मुगत जासी इण भवे रे हां, त्यां पिण कीधी खुसाबंदी तांम।।

३. मिनख मरावता भरत जी रे हां, संके नही तिलमात।
तिणनें मोख जासी कहें इण भवें रे हां, ओ प्रतिख झूठ साख्यात।।

४. कांम भोग मनोगन भोगवें रे हां, वळे छ खंड रो करें राज।
वळे घात करें मिनखां तणी रे हां, इसडा करे छें अकाज।।

५. इसडा अकारज करतों थकों रे हां, मुगत जासी आतम काज साझ।
तो निनाणूं बेटां भणी रे हां, क्यांनें छोडावता राज।।

६. राज करता मिनख मारता रे हां, ते जाअें मुगत मझार।
ते वात झूठी छें सर्वथा रे हां, ते हूं साच न मांनूं लिगार।।

७. ते वात चलती-चलती गई रे हां, भरत नरिंद रे कांन।
झूठा घाल्या जांण्यां भगवांन नें रे हां, कोप्या छें भरत राजांन।।

८. तिणनें बोलायनें कहें भरत जी रे हां, थे आ वात कही के नांहि।
जब ओं कहें म्हें कहीतो खरी रे हां, म्हारें नीकल गइ मुख मांहि।।

९. जब भरतजी कहें छें एहनें रे हां, म्हें क्यूं न जावां मोख माहि।
थें रिषभ जिणंद नें झूठा कह्या रे हां, ते किस्य ग्यांन रे न्याय।।

ढाळ : ६५

यह कर्मों की विडंबना है।

१. सब लोगों में यह बात प्रसिद्ध हो गई कि भरतजी ने चोर को मरवाया है। इससे कुछ धर्मद्वेषी लोगों का बल बढ़ गया।

२. एक धर्मद्वेषी अज्ञानी आदमी ने कहा– ऋषभदेवजी ने कहा है कि भरत इसी भव में मुक्ति जाएगा। लगता है उन्होंने भरत की झूठी प्रशंसा की है।

३. भरतजी को मनुष्य मरवाने में भी तिलमात्र शंका-डर नहीं है। उन्हें इसी भव में मोक्षगामी कहना प्रत्यक्ष झूठ है।

४. ये मनोज्ञ कामभोगों का सेवन करते हैं। छह खंड का राज्य करते हैं और मनुष्यों को मारने जैसा अकार्य करते हैं।

५. ऐसा अकार्य करते हुए भी यदि भरतजी मोक्ष जाएंगे तो ऋषभदेवजी ने अपने निन्नाणवें पुत्रों से राज्य क्यों छुडवाया?।

६. राज्य करते हुए तथा मनुष्य को मरवाते हुए भी मुक्ति जाएंगे तो यह बात सर्वथा झूठी है। मैं इसे सत्य नहीं मानता।

७. यह बात चलती-चलती भरत नरेश्वर के कानों तक पहुंच गई। भगवान् को झूठा ठहराने से वे अत्यंत कुपित हुए।

८. भरतजी ने उसे बुलाकर कहा– तुमने यह बात कही या नहीं? उसने कहा– मैंने कही तो थी। सहज ही मेरे मुंह से यह बात निकल गई।

९. तब भरतजी ने उससे पूछा– हम मुक्ति में क्यों नहीं जाएंगे? तुमने ऋषभ जिनेंद्र को किस न्याय से झूठा कहा?।

१०. जब ओं कहे दोनूं हाथ जोडनें रे हां, मोमें ग्यांन अकल नही कांय।
हूं तो विना विचार्‍यों बोलीयो रे हां, सुध-बुध विना काढी वाय।।

११. जब भरत जी इणनें समझायवा रे हां, कहें सेवग पुरुष बोलाय।
नगरी बारें इणनें ले जायने रे हां, जूआ करों जीव काय।।

१२. इम सुणनें लागों धर धर धूजवा रे हां, मरण सूं डरीयो ताहि।
जब ओ कहें मोनें मारो मती रे हां, म्हारो सर्व धन ल्यो माहाराय।।

१३. भरत जी कहें इमतों छोडूं नहीं रे हां, छोडण री छें एक वात।
चिहूं दिस फिरें बाजार में रे हां, तेल भरीयों वाटकों ले हाथ।।

१४. तेल टबकों न्हांखे नही रे हां, पाछों कुसले ल्यावें मो तांय।
जब तोनें छांडां जीवतो रे हां, ओर उपाय तो नहीं कांय।।

१५. जब ओं कहें ओंतों म्हांसूं हुवें नहीं रे हां, जीवा राखों भावों न्हांखो मार।
जब किणही कह्यों तूं मांन ले रे हां, वचन कर लें अंगीकार।।

◆

१०. वह हाथ जोड़कर बोला– मेरे में ज्ञान–अक्ल नहीं है। मैं बिना विचार किए बोल गया। होश–हवाश के बिना यह बात निकल गई।

११. भरतजी ने इसे समझाने के लिए सेवक पुरुष को बुलाकर कहा– नगरी के बाहर ले जाकर इसकी हत्या कर दो।

१२. यह सुनकर वह थर–थर कांपने लगा। मृत्यु से डर गया। कहने लगा– मेरा सारा धन ले लो, पर मुझे मारो मत।

१३. भरतजी ने कहा– ऐसे तो नहीं छोडूंगा। हां, छोड़ने का एक ही उपाय है। तेल से डबाडब भरा कटोरा लेकर चारों दिशाओं में बाजार में घूमो।

१४. तेल का एक टपका भी नहीं गिराए, कुशलतापूर्वक लौट आए तो तुम्हें जीवित छोड सकता हूं। और कोई उपाय नहीं है।

१५. उसने कहा– चाहे जीवित रखो, चाहे मार डालो। यह तो मेरे से असंभव है। पर किसी ने सलाह दी कि तू मानले, भरतजी के वचन को स्वीकार करले।

◆

दुहा

१. जब डरतों थकों आरे हूवों, तेल भर वाटकों दीयों हाथ।
च्यार पुरषा रा हाथ में खडग दे, त्यांनें मेल्या छें तिणरे साथ।।

२. जब तेल टबकों बारें पडें, जब मारजों इणनें तिण ठांम।
इण सांभलतां तो इम कह्यों, छांनें कह्यों मत मारजों तांम।।

३. वाटकों हाथ में ले नीकल्यों, हद कीधी तठा तांइ तांम।
तिहां नाटक विविध प्रकर ना, मंडाय दीया ठांम ठांम।।

४. ओ धीरें-धीरें चालतों थकों, राखे वाटकी उपर ध्यांन।
हद कीधी तिहां सगलें फिरें, आंयो जिहां भरत राजांन।।

५. हाथ जोडी नें इम कहें, म्हें सार्‌या मन वंछित काज।
ओ तेल भर्‌यों लों बाटकों, हूं वचियों छूं माहाराज।।

६. जब कहें भरत जी एहनें, तूं फिर आयों सगली ठांम।
तिहां विरतंत कांइ देखीया, ते कहि वताय तूं आंम।।

७. जब हाथ जोडी नें इम कहें, म्हारी निजर थी वाटकें माहाराज।
ओर वसतु देखूं हूं किहां थकी, म्हारें विपत गलें पडी आज।।

८. जब वलता भरत इसडी कहें, हूं करे करमां रो सोख।
जिम थारी निजर थी वाटकें, तिम माहरी निजर छें मोख।।

९. हूं संजम ले कर्म काटनें, हूं जासूं मुगत गढ मांहि।
रिषभ देवजी कह्यों ते सत छें, जा तूं इसरी म काढजे वाय।।

दोहा

१. तब डरते हुए उसने स्वीकार कर लिया। तेल भरा कटोरा उसके हाथ में दिया। चार पुरुषों को हाथ में खड्ग देकर उसके साथ भेजा।

२. जब भी तेल की एक बूंद बाहर पड़ जाए तो वहीं इसकी हत्या कर देना। उसके सुनते हुए तो ऐसा कहा पर गुप्त रूप में नहीं मारने का कहा।

३. वह हाथ में कटोरा लेकर निकला। उसकी जो सीमा तय की गई थी उसमें स्थान-स्थान पर भांति-भांति के नाटक शुरू करवा दिए।

४. वह कटोरे पर ध्यान रखता हुआ धीमे-धीमे चलता हुआ जो सीमा निर्धारित की गई थी उसमें घूम आया।

५. हाथ जोड़कर ऐसे बोला- महाराज! मेरे मनवंछित कार्य सिद्ध हो गए। यह भरा हुआ तेल का कटोरा लें। मैं बच गया हूं।

६. भरतजी ने उससे कहा- तुम सारे स्थानों पर घूम आए। वहां तुमने क्या-क्या वृत्तांत देखे, यह मुझे बताओ।

७. उसने हाथ जोड़कर कहा- महाराज! मेरी दृष्टि तो कटोरे पर टिकी हुई थी। मैं और वस्तुओं को कैसे देख सकता था? आज मेरे गले में आफत पड़ी हुई थी।

८. भरतजी ने पलटकर ऐसा कहा- जैसे तुम्हारी दृष्टि कटोरे पर टिकी हुई थी उसी तरह मेरी दृष्टि मोक्ष पर टिकी हुई है। मैं कर्मों का नाश करूंगा।

९. मैं संयम लेकर कर्मों का नाश कर मुक्तिगढ़ में जाऊंगा। ऋषभदेवजी ने जो कहा वह सत्य है। जा, तुम फिर इस तरह की बात मत करना।

ढाळ : ६६

(लय : सोरठियां दुहां की)

१. हिवें भरत तिण वार रे, भोग मनोगन भोगवें।
छ खंड तणा सिरदार रे, राज रीत सर्व जोगवें।।

२. छ खंड केरो राज रे, करता विचरें छें भरत जी।
त्यांरों किण विध सीझें काज रे, एक मना थइ सांभलो।।

३. एक दिवस मझार रे, सिनांन करेनें भरत जी।
ते करे घणों सिणगार रे, आया आरीसा भवण में।।

४. तिहां बेंठा सिघासण आय रे, पूर्व दिस सनमुख करी।
निज रूप निरखें छें ताहि रे, ते देख-देख हरखत हुवें।।

५. बेंठा थका तिण वार रे, नही हाथ री मंदडी।
जब देही जांण असार रे, प्रतिबूध्या भरतेसरू।।

६. जब एक आंगुली तांम रे, अडोली दीसें वूरी।
जब विचार करे तिण ठांम रे, उसभ कर्म दूरा हूआं।।

◆

ढाळ : ६६

१. छह खंड के सरदार भरतजी अब मनोगत भोगों का भोग करते हुए कुशलतापूर्वक राजा की रीति का निर्वाह कर रहे हैं।

२. छह खंड का राज्य करते हुए भी उनका कार्य कैसे सिद्ध होता है इसे एकाग्र होकर सुनें।

३. एक दिन भरतजी आदर्श भवन में आकर स्नान कर शृंगार करते हैं।

४. वहां सिंहासन पर पूर्व दिशा के सम्मुख बैठकर अपने रूप को निहारकर हर्षित होते हैं।

५. वहां बैठे हुए उस समय उनके हाथ में मुद्रिका नहीं थी। तब शरीर को असार जानकर भरतेश्वर प्रतिबुद्ध हो गए।

६. एक अंगुली भी आभूषण के बिना कुरूप लगती है। यों विचार करते हुए वहीं उनके अशुभ कर्म दूर हो गए।

◆

दुहा

१. भरत नरिंद तिण अवसरें, किण विध ध्यावें ध्यांन।
किण विध केवल उपजें, ते सुणों सुरत दे कांन।।

ढाळ : ६७

(लय : मुगध नर सूतो रे)

भरत नृप खूतो रे, खूतो रे भइया जांण विगूतो।
रे जीव ओं संसार असार, भरत नृप खूतो रे।।

१. काच तणा महिलां मझे रे, आंगली विदरूप देख।
तिण अवसर श्री भरत जी, जब कीयों विचार विशेख।।

२. विना मुंदडी आंगली रे, दीसें छें विदरूप
ते रूप नही भरत ताह रों, ओंतो पुदगल नों छें सरूप।।

३. तूं जांणें रूप ताहरो रे, ते रूप थारों नांहि।
तिणमें तूं राचें किसूं, ते तों सोच देख मन मांहि।।

४. भाइ निनाणूं तेहनों रे, थें खोसे लीयों राज।
इण विषीया रस कें कारणें, थें तों कीया अनेक अकाज।।

५. देस बत्तीस सहंस म्हें साजीया रे, फिर फिर मनाई आंण।
वडवडा राय नमावीया रे, वळे गाल्या घणां रा मांन।।

६. देव देवी म्हें नमावीया रे, ते सेवग ज्यूं रहें हजूर।
तूं हूवो सगलां रो अधिपती, ते तो जाबक सर्व फितूर।।

दोहा

१. उस अवसर पर भरत नरेंद्र कैसे ध्यानस्थ होते हैं और कैसे उन्हें केवलज्ञान प्राप्त होता है, इसे कान लगाकर ध्यान देकर सुनें।

ढाळ : ६७

भरत! तूं गड गया रे गड गया। ज्ञान से विमुक्त हो गया। अरे जीव! यह संसार तो असार है।

१. आदर्श महल में अंगुली को विद्रूप देखकर भरतजी ने उस समय ऐसा विशिष्ट विचार किया।

२. बिना मुद्रिका के अंगुली विद्रूप दिखाई देती है। भरत! यह रूप तुम्हारा नहीं है। यह तो पुद्गल का स्वरूप है।

३. तू समझता है यह रूप तेरा है, पर यह रूप तेरा नहीं है। तू उसमें क्यों अनुरक्त होता है? मन में कुछ सोचकर देख।

४. तू ने निन्नाणु भाइयों का राज्य छीन लिया। इस विषय-रस के कारण तू ने अनेक अनर्थ किए।

५. बत्तीस हजार देशों को जीता। घूम-घूमकर उन्हें आज्ञा स्वीकार करवाई। बड़े-बड़े राजाओं को नतमस्तक किया। अनेकों के मान का मर्दन किया।

६. अनेक देव-देवियों को नतमस्तक किया। वे सेवक की तरह प्रस्तुत रहे हैं। तू सबका अधिपति बना। यह सब पाखंड है।

७. काम भोग म्हें भोगव्या रे, ते सर्व जहर समांण।
ते मीठा लागा मो भणी, ते तो मोह कर्म वस जांण।।

८. चोसट सहंस अंतेउरी रे, ते अपछर रे उणीयार।
पुन जोगें आए मिली, ते तो ले जावें नरक मझार।।

९. आगे चक्रवत हूआ घणा रे, त्यांरो कहिता न आवें पार।
जे कांम भोग माहे मूंआ, ते गयां निश्चें नरक मझार।।

१०. कांम भोग छें एहवा रे, ते किंपाकफल सम जांण।
भोगवतां मीठा लगें, पिण आगें दुखां री छें खांन।।

११. चवदें रत्न छें माहरे रे, वळे म्हारें नव निधांन।
यांसूं निज कार्य सीझें नही, पाडें मुगत सुखां री हांन।।

१२. जे जे कांमां म्हें कीया रे, ते सार नही छें लिगार।
जों अें कामां छोडूं नही, तो वध जाअें अनंत संसार।।

१३. भव अनंता म्हें कीया रे, त्यांरों कहितां न आवें पार।
जिण धर्म विना ओ जीवडों, घणो रडवडीयों संसार।।

१४. रिध संपत आए मिली रे, तिणमें कण नही मूल लिगार।
जों इणमें राचे रहूं, तो हूं हारू नर अवतार।।

१५. भाई निनांणु म्हारा रे, राज छोड हुआ अणगार।
हूं राज माहे राचे रह्यों, धिग धिग मांहरों जमवार।।

१६. चारित लेऊं हिवें चूंप सू रे, राज रमण रिध छोड।
करणी करे जाऊ मुगत में, जब तो पूरीजें मन रा कोड।।

◆

७. मैंने काम-भोगों का भोग किया। वे सब जहर के समान हैं। मुझे मोहवश वे मीठे लगे थे।

८. मेरा अप्सराओं की मुखाकृति वाला चौसठ हजार का अंतःपुर है। पुण्य योग से मुझे प्राप्त हुई, पर ये सब नरक में ले जाने वाली हैं।

९. पहले भी अनेक चक्रवर्ती हुए हैं। कहते-कहते उनका पार नहीं आता। कामभोग में मुग्ध होकर मर कर वे निश्चय ही नरक में गए।

१०. कामभोग किंपाक फल के समान हैं। भोगते समय तो मीठे लगते हैं पर आगे दुःखों की खान हैं।

११. मेरे पास चौदह रत्न तथा नौ निधान हैं। इनसे आत्मा के काम सिद्ध नहीं हो सकते। मुक्ति सुखों की क्षति होती है।

१२. मैंने जो-जो कार्य किए उनमें किंचित् भी सार नहीं है। यदि मैं इनको छोडूंगा नहीं तो अनंत संसार बढ़ जाएगा।

१३. मैंने पूर्व में भी अनंत भव किए हैं। कहते-कहते उनका पार नहीं आता। जिनधर्म के बिना यह जीव संसार में भटकता है।

१४. जो ऋद्धि-संपत्ति प्राप्त हुई है उसमें कणभर भी सार नहीं है। यदि मैं इनमें अनुरक्त रहा तो नर अवतार को हार जाऊंगा।

१५. मेरे निन्नाणु भाई राज्य छोड़कर अणगार बन गए। मैं यदि राज्य में अनुरक्त रहा तो मेरा जीवन धिक्कार योग्य होगा।

१६. अब राज, ऋद्धि, रमणियों को छोड़कर उत्साह से चारित्र ग्रहण करूं। साधना कर मुक्ति में जाऊं तभी मेरे मन की अभिलाषा पूरी होगी।

◆

दुहा

१. आभूषण पेंहरण थकां, कीया सर्व सावद्य रा त्याग।
ते पचख्या मन परिणाम सूं, वळे चढीयों छें अतंत वेराग।।

२. भरत नरिंद नें तिण अवसरें, सुभ घणा परिणांम।
अधवसाय रूडा प्रस्थ भला, लेस्या विसुध सुक्लादिक तांम।।

३. इहापोहा मारग विचारणा, निरणों करतों अतंत।
जब च्यार कर्म घनघातीया, त्यांरो कीयों तिण ठांमें अंत।।

४. आरीसा भवन मझे, भरत नरिंद राजांन।
च्यारूं कर्म तिण ठांमें खय करे, पांम्यां केवल ग्यांन।।

५. सयमेव भरतजी उतारीया, आभरण नें अलंकार।
पांच मुष्टी लोच स्वमेव कीयों, छोड्यों गृहस्थ नों आकार।।

६. आरीसा भवन थी नीकल्या, नीकलें अंतेउर मझार।
त्यांरो सरूप देख अंतेउरी, धसको पड्यों तिण वार।।

ढाळ : ६८

(लय : जी हो धनो सालभद्र दोय)

जी हो भरतेसर भावना भाय, हूआ मेंहलां माहे केवली जी।।

१. अंतेवर तिण वार, साधु नो रूप देख रूदन करे रे।
कोलाहल हूवों मेंहलां मझार, ते उछल उछल धरती पडें रे।।

२. देखें साधु रो सांग, शब्द मोटें मोटें रोवती रे।
बोलें पाडती-पाडती बांग, भरत नरिंद स्हामों जोवती रे।।

दोहा

१. आभूषण पहने-पहने ही सर्व सावद्य का त्याग कर दिया। मन के परिणामों से प्रत्याख्यान कर दिया। अत्यंत वैराग्य उमड़ पड़ा।

२. भरत नरेंद्र के उस समय परिणाम अत्यंत शुभ थे, अध्यवसाय प्रशस्त भले तथा लेश्या विशुद्ध एवं शुक्ल थी।

३. ईहा, अपोह, मार्ग, विचारणा, निर्णय करते-करते उसी स्थान पर चार घनघाती कर्मों का अंत हो गया।

४. भरत नरेंद्र ने आदर्श भवन में ही चारों कर्मों को क्षीण कर केवलज्ञान प्राप्त कर लिया।

५. भरतजी ने स्वयं अपने आभरण एवं अलंकारों को उतारकर पंचमुट्ठी लोचकर गृहस्थ वेष छोड़ दिया।

६. आदर्श भवन एवं अंतःपुर से निकलते हुए उनका रूप देख अंतःपुरवासियों के मन को धक्का लगा।

ढाळ : ६८

भरतेश्वर भावना भाते हुए महलों में ही केवलज्ञानी हो गए।

१. उस समय उन्हें साधु के रूप में देखकर अंतःपुर रोने लगा। महलों में कोलाहल हो गया। वे उछल-उछल कर धरती पर गिरने लगे।

२. साधु का वेष देखकर रानियां उच्च स्वर से रोने लगी। भरतजी के सामने देखकर चिल्ला-चिल्लाकर बोलने लगी।

३. श्रीरांणी हुंती सुकमाल, ते सुणनें हुइ घणी गलगली रे।
जिम चंपक नी डाल, ते पिण घसको पडे धरणी ढली रे।।

४. ओर अंतेवर इम हीज जांण, अचेत होय धरती पडी रे।
रोम-रोम लागा जांणें बांण, सावचेत हूआं सहू आरडी रे।।

५. वळे बोलें माहोमाहि वेंण, हिवे आपांनें दिन नहीं सोहिला रे।
ते रोवें छें भर भर नेंण, कंत विना दिन दोहिला रे।।

६. ते कहे भरत जी नें एम, रोवती थकी हाथ जोडनें रे।
थां विण काढां जमरों म्हें केम, थे तडकें जाओं छों म्हांसूं तोडनेंजी।।

७. थे तडकें म तोडों नेह, जावों पीत पराणी तोडनें रे।
म्हांनें इम किम दीजें छेंह, आसा अलूधी म्हांनें छोडनें रे।।

८. म्हांनें छोडों मती माहाराज, नारी नीं अबला जात नें रे।
म्हें विलखी हुइ सर्व आज, म्हांरी जाबक विगडी देख वात ने रे।।

९. रवि आथमीए जिम सूर, वदन कमल जिम कांमणी रे।
जिम विगड गयों मुख नूर, भरतार दीठां विण भांमणी रे।।

१०. पडें वालां तणो रे विजोग, ते साल तणी परें सालसी जी।
ते दिन दिन करती सोग, ते वीसारें किण विध घालसी रे।।

११. म्हें विल-विल करां छां माहाराज, त्यांनें उभी म छोडों रोवती रे।
आप रहों म्हेंलां में विराज, ज्यूं म्हे हरख पांमां थांनें जोवती रे।।

१२. म्हांरी दया आंणो मन मांहि, म्हें गाढी दुखी छां सारी जणी रे।
ओ दुख सह्यों रे न जाय, किरपा करों म्हां अबला तणी रे।।

१३. अें बयालीस भोमीया मेंहल, ते लागसी म्हांनें डरावणा रे।
ते पिण दुख मत जांणजों मेंहल, थां विन किण विध लागें म्हांनें सुहावणा रे।।

३. सुकुमार श्रीरानी भी यह सुनकर द्रवित हो उठी। वह चंपक लता की डाल की तरह आहत होकर धरती पर गिर पड़ी।

४. अन्य अंतःपुर भी इसी तरह बेसुध होकर धरती पर गिर पड़ा। रोम-रोम में जैसे बाण लग गया। संज्ञा पाने पर सभी रोने लगीं।

५. परस्पर वचन कहने लगीं– पति के बिना अब हमारे दिन सुखकर नहीं हैं, दुःखकर हैं। वे आंखें भर-भर कर रोने लगीं।

६. वे रोती हुईं हाथ जोड़कर भरतजी से कहती हैं– आपके बिना हम अपना जीवन कैसे व्यतीत करेंगी? आप तटाक से हमसे स्नेह तोड़कर निकल रहे हैं।

७. आप स्नेह को इतना जल्दी मत तोड़ो। पुरानी प्रीति को तोड़कर मत जाओ। हमें इस प्रकार निराश कर क्यों छोड़ रहे हैं।

८. महाराज! हम अबला नारी-जात हैं। हमें छोड़ो मत। आज हम सब बिलख रही हैं। हमारी बात बिल्कुल बिगड़ गई है।

९. सूर्य के अस्त होने पर जैसे सूर्य विकासी कमल के मुख का नूर बिगड़ जाता है उसी तरह पति को देखे बिना पत्नियों का नूर बिगड़ गया है।

१०. प्रेमीजनों का वियोग कांटे की तरह चुभता रहता है। प्रतिदिन शोक करते हुए हम उसे विस्मृत कैसे कर सकेंगी।

११. महाराज! हम विलापात कर रही हैं। हमें यों खड़े-खड़े रोती देखकर आप महलों में विराजो जिससे हम आपको देख-देखकर हर्षित हो सकें।

१२. आप मन में हमारे प्रति दया करें। हम सारी गाढ़े दुःख में हैं। यह दुःख असह्य है। आप हम अबलाओं के प्रति कृपा करें।

१३. ये बयांलीस भौमिक महल हमें डरावने लगेंगे। आपके बिना हमें ये सुहावने कैसे लग सकते हैं? इस दुःख को आप सरल न समझें।

१४. ए तुमना आइठांण, साल तणी परें म्हांनें सालसी रे।
जीव जाऔं ज्यां लग प्रांण, हीया माहे हिलोला हालसी रे।।

१५. थें प्रीत्म प्रांण आधार, पपीया नें आधार जिम मेहनो रे।
तिणसूं मत करों म्हांनें निरधार, ओर आधार नही म्हांनें केहनों रे।।

१६. भरत जी रा मेंहलां मजार, केइ रोवें-पीटें केइ आरडे रे।
जब हूवों घणों भयंकार, त्यांरा शब्दां री समझ न का पडें रे।।

१७. भरत जी लीयों संजम भार, जब दुख घणा जीवां पांमीयो रे।
त्यांरो कह्यों न जाऔं विसतार, मोह कर्म उदें त्यांरें आवीयों रे।।

१८. काचों हुवें तो चल जाऔं तिण ठांम, ए मोह तणा शब्द सांभली रे।
किण विध चलें भरत जी तांम, च्यारूं कर्म खपाए हूआ केवली रे।।

◆

१४. आपके स्मृतिचिह्न हमें कांटे की तरह चुभते रहेंगे। जीवनपर्यंत प्राणों तथा हृदय में दुःख हिलोरें मारता रहेगा।

१५. पपैये का जैसे मेघ आधार होता है वैसे ही आप हमारे प्रियतम प्राणाधार हैं। हमें और किसी का आधार नहीं है। अतः आप हमें निराधार न करें।

१६. इस प्रकार भरतजी के महलों में कोई रोता-पीटता है, कोई चिल्लाता है। जब भयंकर कोलाहल हुआ तो शब्दों के अर्थ भी समझ से बाहर हो गए।

१७. भरतजी ने संयम ग्रहण किया तो अनेकानेक लोग दुःखी हुए। उसका विस्तार अकथ्य है। उनके मोह कर्म उदय में आ गए।

१८. ऐसे मोह शब्दों को सुनकर कच्चे हृदय का आदमी हो तो वहां चलित हो जाए, पर भरतजी कैसे चलित हो सकते हैं? वे तो चार कर्मों का क्षय कर केवलज्ञानी हो गए।

◆

दुहा

१. भरत नरिंद मेंहलां मझे, पांम्यां केवल ग्यांन।
ओर तपसा तो कीधी नही, एक ध्याया निरमल ध्यांन।।

२. अनंत भावना भावतां, ध्यांया ध्यांन नें पाया ग्यांन।
कुण कुण परिग्रहों त्यागीयों, ते सुणों सुरत दे कांन।।

ढाळ : ६९

(लय : गिरनारी सोरठ कुमर)

भूप भया छों वेंरागी, मगन भया छों वेंरागी।।

१. अनंत भावना भाइ भरतेसर, च्यार कर्म गए भागी।
केवल ग्यांन पायों मेंहला में, थे हूआ अतंत वेंरागी रा। भरत जी।।

२. आभरण अलंकार उतर्या, मसतक सेती पागी।
आपो आप थइनें बेठा, तब दीसे देही नागी रा।।

३. सांग देखी भरतेसर केरों, केइ रांण्या हसवा लागी।
हिवें हासा नी खबर पडेंसी, थें रहिंजो मुझसूं अधीरा।।

४. डाही रमणी सांग देखे दुमणी, भोली दोली लागी।
ओपमा अपछर चंद वीजल री, पिण भरत रो गयो मन भागी।।

५. चोरासी लाख हयवर गयवर, छीनूं कोड छें पागी।
लख चोरासी रथ संग्रांमी, पिण ततखिण होय गया त्यागी रा।।

६. च्यार कोड मण नितको सीझें, दस लाख मण लूण लागी।
चोसठ सहंस राजा मुख आगल, पिण सुरत मुगत सूं लागी रा।।

दोहा

१. भरत नरेंद्र को महलों में केवलज्ञान हो गया। उन्होंने और कोई तपस्या नहीं की, केवल निर्मल ध्यान की आराधना की।

२. अनित्य भावना भाते-भाते ध्यानाराधना से उन्होंने ज्ञान प्राप्त कर लिया। उन्होंने क्या-क्या परिग्रह त्यागा यह सावधानी से कान देकर सुनें।

ढाळ : ६९

भूपति विरक्त हो गए। वैराग्य में मगन हो गए।

१. अनित्य भावना आते हुए भरतेश्वर के चार कर्म नष्ट हो गए। अत्यंत वैराग्य भाव से उन्हें महलों में ही केवलज्ञान प्राप्त हो गया।

२. आभरण, अलंकार तथा मस्तक पर से पगड़ी उतार कर आत्मभूत होकर बैठे हैं। देह नग्न दिखाई दे रही है।

३. भरतेश्वर का यह रूप देखकर कुछ रानियां हंसने लगी। भरतजी ने कहा- अब इस हास-परिहास की खबर पड़ेगी। अब तुम मुझसे दूर रहना।

४. कुछ चतुर रमणियों ने यह रूप देखकर अनमनी होकर भरतजी को घेर लिया। यद्यपि इन्हें अप्सरा, चांद तथा विद्युत् की उपमा दी गई है। पर भरतजी का मन इनसे उचट गया है।

५. इनके चौरासी लाख हाथी घोड़े, एक लाख चौरासी हजार युद्धरथी, छिन्नवें करोड़ पैदल सैनिक है, पर ये एकदम त्यागी बन गए हैं।

६. इनके प्रतिदिन चार करोड़ मण अन्न पकता है। दस लाख मण नमक लगता है। चौसठ हजार राजे मुंह के सामने रहते हैं। पर इनकी अनुरक्ति मोक्ष से हो गई है।

७. तीन कोड गोकल घर दूजें, एक कोड हल त्यागी।
चोसठ सहंस अंतेवर जांकें, त्यांसूं विरकत थया वेंरागी रा।।

८. अडतालीस कोस में पडेज लसकर, दुसमण जाअें भागी।
चवदें रत्न आगना मांनें, पिण न धर्यों त्यांसूं रागी रा।।

९. गज मतवाला हयवर हीसत, कनडा पायक घणा रागी।
पुत्र अंतेवर रह्या झूरंता, वळे नगरी वनीता त्यागी रा।।

१०. सगलाइ रहीया मोह झूरंता, संसार दीयों छें त्यागी।
कुटंब कबीलों नें सेंण सेंगा त्यांसूं, तुरत गयों मन भागी रा।।

११. नव निधांन सार भूत अमोलक, त्यांरा गुण छें अतंत अथागी।
वळे छ खंड केरो राज अखंडत, ते समकाले दीधों त्यागी रा।।

१२. वीस सहंस सोना रूपा रा आगर, त्यांरों पिण नही आवें थागी।
मण माणक मोती रत्नादिक थी, मूल न धरीयों रागी रा।।

१३. मेंहल बयालीस भोमीया तिणमें, जोत झिगामग लागी।
तिण उपर पिण चित्त नही दीधो, थे ऊठ खडा रह्या जागी रा।।

१४. रिध विसतार ते इंद्र तणी पर, काइ पाछ रही नही लागी।
ते धुर समांन धन जांणी नें, तुरत दीधो तिणनें त्यागी रा।।

१५. जोगी जटा उपर पाछणों फेर्यां, सिर सूं पडें मुख आगी।
जोगी जटा जिम रिध सगली नें, मन सूं कर दीधा त्यागी रा।।

◆

७. इनके घर में तीन करोड़ दुधारू गोकुल हैं। एक करोड़ हल चलते हैं। चौसठ हजार अंत:पुर है। इन सबसे विरक्त होकर ये वैरागी बन गए हैं।

८. अड़तालीस कोस में इनकी सेना का पड़ाव होता है। दुश्मन उनसे दूर भागते हैं। चौदह रत्न उनकी आज्ञा मानते हैं। पर इन्होंने इनके प्रति अनुराग का त्याग कर दिया।

९. मतवाले हाथी, हिनहिनाते घोड़े, कनडे पायक, पुत्र तथा अंत:पुर विलाप करते रहे पर इन्होंने विनीता नगरी का त्याग कर दिया।

१०. कुटुम्ब, कबीले, स्वजन, सगे संबंधियों से इनका मन विरक्त हो गया। वे सारे मोह-विलाप करते रहे। इन्होंने संसार का त्याग कर दिया।

११. इन्होंने सारभूत, अमूल्य, अथाह और अत्यंत गुणकारी नौनिधान तथा छह खंड का अखंड राज्य एक साथ त्याग दिया।

१२. बीस हजार सोने-चांदी की खानें, अथाह मणि, माणिक, मोती रत्नों का भी किंचित् मोह नहीं किया।

१३. ज्योति से जगमगाते बयांलीस भौमिक महलों से भी उनका चित्त विरक्त हो गया और वे जागकर उठ खड़े हुए।

१४. इंद्र के ऋद्धि विस्तार की तरह उनके भी कोई कमी नहीं थी। उस धन को धूल समझकर तत्काल त्याग दिया।

१५. योगी की जटा पर उस्तरा चलाने से वह सारी सिर से मुंह के सामने आकर गिर पड़ती है। भरतजी ने योगी की जटा की तरह सारी ऋद्धि का मन से त्याग कर दिया।

◆

दुहा

१. कोलाहल करता तेहनें, उभा मेहल तिण ठांम।
हेठा उतरीया मेंहल थी, केइ कहवा लागा आंम।।

२. केइ कहें भरतजी गेंहला हूआ, केइ कहें छें धन छक ताम।
केइ कहें विद्या वावला हूआ, केइ राज छक कहें छें आंम।।

३. इण विध मुख मुख जू जूआ, बोलें आवें ज्यूं मन री दाय।
केइ चुतर विचखण इम कहें, चारित लीयों दीसें छें ताहि।।

४. हिवें आया दरीखांने भरत जी, सभा जूड़ी छें ताहि।
आग्या लेइ तिहां भरत जी, बेंठा सिघासण आय।।

५. घणा राजा नें समझता जांणनें, उपदेश दीयों तिण वार।
जीवादिक ना सरूप नों, कह्यों घणों विसतार।।

ढाळ : ७०

(लय : तूं तो समझ पदमनाभराय कहे तोनें)

थें तों समझों रे समझों राजांन, श्री जिण धर्म में जी।।

१. हिवें सुणजों थे सहू राजांन, थें चित्त लगायनें जी।
म्हें तों लीधों छे चारित निधांन, सुमता रस ल्यायनें जी।

२. म्हें तों छोंड्यों छ खंड रो राज, ममता सर्व परहरी जी।
सर्व छोडी सघली रिध आज, सुमता रस मन धरी जी।।

दोहा

१. भरतजी जिस महल में खड़े हैं वहां कोलाहल हो गया। जब वे महल से नीचे उतरे तो लोग इस प्रकार कहने लगे।

२. कुछ लोग कहने लगे भरतजी पागल हो गए हैं, कुछ लोग कहने लगे इन्हें धन का उन्माद हो गया है, कुछ लोग कहने लगे इन्हें राज का उन्माद हो गया, कुछ लोग कहने लगे विद्या से इनका चित्त विकृत हो गया है।

३. इस प्रकार मुंह–मुंह पर मनमाने ढंग से अलग–अलग बातें होने लगीं। कुछ चतुर–विचक्षण यह कहने लगे भरतजी ने चारित्र ग्रहण कर लिया लगता है।

४,५. अब भरतजी दरबार में आए। वहां सभा जुड़ी। भरतजी आज्ञा लेकर सिंहासन पर बैठे। अनेक राजाओं को समझते जानकर भरतजी ने विस्तारपूर्वक जीव आदि के स्वरूप पर उपदेश दिया।

ढाळ : ७०

राजाओ! तुम भी जिनधर्म को समझो।

१. मेरी बात चित्त लगाकर सुनें। मैंने तो समता रस का पान कर चारित्र रूप निधान को स्वीकार कर लिया है।

२. मैंने समता रस को मन में धारकर आज छह खंड के राज्य की ममता एवं सारी ऋद्धि का परित्याग कर दिया है।

३. म्हें तों ध्याए निरमल ध्यांन, चारित लीयों चूंप सूं जी।
वळे उपजाए केवलग्यांन, आयों इण सरूप सूं जी।।

४. थांनें समझावण काज, इण ठांमें आवीयों जी।
म्हारी वांणी सुणे थें आज, अवसर आछों पावीयो जी।।

५. जब बोल्या छें राजांन, हाथ जोडी तिहां जी।
सुणावों म्हांनें अपूर्व ग्यांन, उपदेस देवों इहां जी।।

६. हिवें भरत जी दें उपदेस, त्यांनें समझायवा जी।
कहें दया धर्म नी रेस, मुगत पोंहचायवा जी।।

७. म्हें तों दीयों छें थांनें राज, कण नहीं तेहमें जी।
तिणसूं नही सीझें आत्म काज, छांडे जांणों एहनें जी।।

८. ओं संसार छें असार, रीझों मती तेहमें जी।
तिणमें सार नही छें लिगार, सुख नही एहमे जी।।

९. जेहवों सिझ्या नों वांन, पाकों पीपल पांनडो जी।
जेहवों आउखों जांण, वळे कुंजर कांनडो जी।।

१०. जेहवों डाभ अणी जल जांण, वीज झबूकडो जी।
तेहवों अथिर आउखों पिछांण, मरण नेरों ढूंकडों जी।।

११. अथिर काचों माटी भंड, माया सुपना तणी जी।
ज्यूं जेहवी थांरी सर्व मंड, थोथी रिध ना धणी जी।।

१२. देव गुर धर्म नो सरूप, इण जीव न जांणीयों जी।
तिणसूं जाय पड्यों अंध कूप, कर्मां नों तांणीयो जी।।

१३. तिणसूं परखों देव गुर धर्म, नव तत निरणों करो जी।
संजम ले तोडों आठ कर्म, ज्यूं सिव रमणी वरो जी।।

३. मैं निर्मल ध्यान धर कर उत्साह से चारित्र लेकर केवलज्ञान प्राप्त कर इस रूप में आया हूं।

४. तुम लोगों को समझाने के लिए ही मैं यहां आया हूं। आज अच्छा अवसर आ गया है। मेरी वाणी सुनें।

५. सभी राजे हाथ जोड़कर बोले– आप हमें अपूर्व ज्ञान सुनाएं, उपदेश दें।

६. अब भरतजी उन्हें समझाने के लिए उपदेश देते हैं। मुक्ति पहुंचाने के लिए दया धर्म का रहस्य समझा रहे हैं।

७. मैंने तुम्हें जो राज्य दिया है उसमें सार नहीं है। उससे आत्मा के कार्य सिद्ध नहीं होंगे। इसे छोड़कर जाना होगा।

८. यह संसार असार है। इसमें अनुरक्त मत होओ। इसमें कोई सुख सार नहीं है।

९. जैसा संध्या का वर्ण, पींपल का पका हुआ पत्ता तथा हाथी का कान अस्थिर होता है वैसे ही मनुष्य का आयुष्य जानना चाहिए।

१०. कुशाग्र पर जल-कण तथा विद्युत् के कौंधने के समान आयुष्य भी अस्थिर है। मृत्यु नजदीक है।

११. मिट्टी के कच्चे पात्र तथा स्वप्न की माया अस्थिर होती है उसी तरह तुम्हारी सारी ऋद्धि तथा आडंबर थोथे हैं।

१२. इस जीव ने देव, गुरु तथा धर्म का स्वरूप नहीं समझा है इसीलिए कर्मों से खिंचा हुआ यह अंधकूप में पड़ जाता है।

१३. इसलिए देव, गुरु तथा धर्म की परीक्षा करो, नवतत्त्व का निर्णय करो और संयम लेकर आठों कर्मों का नाश कर मुक्ति रूपी रमणी का वरण करो।

१४. ओतो इण संसार मझार, ओ जीव अनाद रो जी।
सेवे सेवे पाप अठार, नरक गयो पाधरो जी।।

१५. तिहां खाधी अनंती मार, परमाध्यांम्यां रे धकें जी।
पांमी छेदन-भेदन तार, परवस पडीयें थकें जी।।

१६. वळे खेतर वेदन अनंत, सही इण जीवडें जी।
तिणरों कहितां न आवें अंत, ते कहितां नही नीवडें जी।।

१७. कांम भोग दुखां री खांन, किंपाक फल सारिखा जी।
त्यांसूं हुवों जीव हेरांन, त्यांरी नाइ पारिखा जी।।

१८. कांम भोग जोरावर जोध, ते तों घणा मारका जी।
त्यांसूं मूर्ख मांनें प्रमोद, लीयां फिरें लारका जी।।

१९. कांम भोग सूं करसी पीत, बांधे कर्म रासनें जी।
ते होसी चिहूंगति माहे फजीत, पत्था मोह पास में जी।।

२०. राज रिध संपत में राजांन, थें राचे रह्या सही जी।
वळे तिणसूं रली रह्या मांन, पिण साथे आवें नही जी।।

२१. कांम भोग मोहकर्म रोग, ते पिण नही सासता जी।
तिणसूं छोड दो कांम नें भोग, राखों धर्म आसता जी।।

२२. साध नें श्रावक रों धर्म, दोनूं कह्या जू जूआ जी।
त्यांसूं तुटें आठोइ कर्म, अनंत सुखी हूआ जी।।

२३. साधपणों पाल्यां जाअें मोख, वासो देवलोक में जी।
आठ कर्म तणों हुवें सोख, पूजणीक हुवें लोक में जी।।

◆

१४. यह जीव अनादि काल से संसार में अठारह पापों का सेवन कर-कर सीधे नरक में गया है।

१५. वहां परमाधार्मिक देवों के हाथों अनंत बार मार खाई है। परवश पड़े हुए छेदन-भेदन को प्राप्त हुआ है।

१६. इस जीव ने अनंत क्षेत्रीय वेदना भी सहन की है। कहते-कहते उसका अंत नहीं आता। उसका कथन पूरा नहीं होता।

१७. काम-भोग किंपाक फल के समान दुःखों की खान है। उनसे जीव बहुत हैरान हुआ। अब तक उनकी परख प्राप्त नहीं हुई है।

१८. काम-भोग पराक्रमी योद्धा है। वे बहुत संहारक हैं। मूर्ख उनमें सुख मानता है, उनके पीछे-पीछे दौड़ता है।

१९. जो काम-भोगों से प्रीति करता है वह कर्मों की राशि का बंधन करता है। मोहपाश में पड़ने से उनकी चार गतियों में दुर्दशा होती है।

२०. राजाओ! आप राज्य, ऋद्धि-संपत्ति में अनुरक्त हैं। उससे आनंद मान रहे हैं। पर यह आपके साथ नहीं आएगी।

२१. काम-भोग मोह कर्म के रोग हैं। फिर ये शाश्वत भी नहीं हैं। अतः काम-भोगों को छोड़कर धर्म में आस्था रखो।

२२. साधु और श्रावक के दो प्रकार के अलग-अलग धर्म कहे गए हैं। उनसे आठों ही कर्मों का नाश होता है और व्यक्ति अनंत सुख को प्राप्त होता है।

२३. साधुपन पालन से जीव मोक्ष या देवलोक में जाता है। उसके आठों ही कर्मों का नाश हो जाता है। लोक में पूजनीय बन जाता है।

◆

दुहा

१. वांणी सुणे भरत जी तणी, घणा हरखत हूआ तिण वार।
दस सहंस राजा तिण अवसरें, हूआ संजम नें तयार।।

२. हाथ जोडी नें इम कहें, सरध्या तुमना वेंण।
थे तारक भव-जीव ना, मोनें मिलीया साचा सेंण।।

३. म्हें संसार जांण्यों कारमों, मोख तणा जांण्यां सुख सार।
म्हे बीहना जांमण मरण थी, म्हें लेसां संझम भार।।

४. जब वलता भरत इसडी कहें, थारें लेंणों संजम भार।
घडी जाअें ते पाछी आवें नही, मत करो ढील लिगार।।

५. दस सहंस राजा तिण अवसरें, इसांण कुण में जाय।
गेंहणा आभूषण दूरा करे, पंच मुष्टी लोच कीयो ताहि।।

६. साधु रो रूप बणायनें, आय उभा भरत जी रे पास।
विनें सहीत बेहूं हाथ जोडनें, बोले वचन विमास।।

७. इण संसार में दुख अति घणों, लागी जनम मरण री लाय।
तिण बारें काढों आप मों भणी, सर्व सावद्य त्याग कराय।।

ढाळ : ७१

(लय : तूंगीया गिरी सिखर सोहे राम)

एहवा मुनीराय वांदूं।।

१. दस सहंस राजांन त्यांरो, जांण लीयों छें वेंराग रे।
तेहनें करायों भरत मुनीवर, सर्व सावद्य रा त्याग रे।।

२. एक वेला सुणत वांणी, काम भोग दीया छिटकाय रे।
राज रमण रिध सर्व त्यागी, त्यां पाछ न राखी काय रे।।

दोहा

१. भरतजी की वाणी सुनकर अनेक राजे अत्यंत हर्षित हुए। उस अवसर पर दस हजार राजे संयम लेने के लिए तैयार हो गए।

२. हाथ जोड़कर यों कहने लगे– हम आपके वचनों पर श्रद्धा करते हैं। आप भवजीवों को तारने वाले हैं। हमें सच्चे स्वजन के रूप में प्राप्त हुए हैं।

३. हमने संसार को अनित्य जान लिया है। मोक्ष सुखों को सारभूत समझ लिया है। हम जन्म-मृत्यु से डर गए हैं। संयम ग्रहण करेंगे।

४. भरतजी ने पलटते ही कहा– यदि तुमको संयमभार लेना है तो देर मत करो। जो घड़ी बीत जाती है वह लौटती नहीं है।

५. दस हजार राजाओं ने उसी समय ईशान कोण में जाकर अलंकार-आभूषणों को उतार कर पंचमुष्टि लोच कर लिया।

६. साधु का वेष पहनकर भरतजी के सामने आकर खड़े हुए। विनयपूर्वक दोनों हाथ जोड़कर विचारपूर्वक बोले।

७. इस संसार में बहुत दुःख है। जन्म-मरण की ज्वाला जल रही है। आप हमें सर्व सावद्य का त्याग कराकर उससे हमें बाहर निकालो।

ढाळ : ७१

ऐसे मुनिराज को मैं नमस्कार करता हूं।

१. दस हजार राजाओं के वैराग्य को जानकर भरत मुनिवर ने उनको सर्व सावद्य योग का त्याग करा दिया।

२. एक बार वाणी सुनकर ही काम-भोगों का त्याग कर दिया। राज्य, ऋद्धि, रमणियों का त्याग कर दिया। बाकी कुछ नहीं रखा।

३. दस सहंस राजांन मोटा, थया मोटा साध रे।
तेहना पद कमल नमतां, थाअें धर्म अगाध रे।।

४. संवेग आंण्यों परम घट में, खारो लागों संसार रे।
दस सहंस राजा भरत पासें, थया मोटा अणगार रे।।

५. त्यां सीह नी परे लीयो संजम, सूर वीर साख्यात रे।
ग्यांन आगर बुध सागर, ते प्रसिध लोक विख्यात रे।।

६. जात कुल बल रूप पूरा, विनेवंत साहसीक रे।
परिसह उपना अडिग सेंठा, त्यां कीधी मुगत नजीक रे।।

७. सुमत गुपत आठे सुध पालें, पालें पांच आचार रे।
मेरू नीं परें धीर धरता, न चलें मूल लिगार रे।।

८. आहार निरदोषण सुध लेवें, दोष बयालीस टाल रे।
गोचरी करें गउचर्या, छ काय तणा छें दयाल रे।।

९. सीयल व्रत नवबाड पालें, दस विध जती धर्म धीर रे।
तप तपें मुनी बारे भेदें, ते साध भला वडवीर रे।।

१०. गांम नगर निवेस पाटण, तिहां कठें नही प्रतिबंध रे।
किरियावंत महा मुनीवर, वळे किणसु नही संबंध रे।।

११. सत्रू मित्र गिणें सरीखा, सकल साध सिणगार रे।
पांच इंद्री विषय विरजत, साधु गुण भंडार रे।।

१२. नही माया नही ममता, नही च्यार कषाय रे।
च्यार विकथा मूल नांणे, सुमता रस घट ल्याय रे।।

◆

३. दस हजार राजे बड़े संत बन गए। उनके पदकमलों में नमन करने से अगाध धर्म होता है।

४. अंतर्मन में परम संवेग आया। संसार कटु लगने लगा। दस हजार राजे भरतजी के पास बड़े अणगार बन गए।

५. उन्होंने सिंहवृत्ति से संयम लिया। वे प्रत्यक्ष सूरवीर हैं। वे ज्ञान के आगर, बुद्धि के सागर तथा लोक-विख्यात हैं।

६. वे पूर्ण जातिवान्, कुलवान्, बलवान्, रूपवान्, विनयवान् तथा साहसिक हैं। परीषह उत्पन्न होने पर अडिग मजबूत रहने वाले हैं। उन्होंने मुक्ति को नजदीक कर लिया है।

७. पांच सुमति, तीन गुप्ति, पंच आचार को मेरु पर्वत की तरह धीरता से धारण करने लगे। किंचित् भी विचलित नहीं हुए।

८. बयालीस दोषों को टालकर निर्दोष आहार ग्रहण करते हैं। गाय की तरह गोचरी-भिक्षा करते हैं। छह ही काय के जीवों के प्रति दयालु हैं।

९. नौ बाड़ सहित शीलव्रत, दसविध यतिधर्म तथा बारहविध तप को तपते हुए वे बड़े अच्छे वीर साधु हुए।

१०. ग्राम, नगर, निवेश, पाटण में अप्रतिबद्ध विहार करते हुए साधूचित क्रिया का अनुपालन करते हुए किसी से रागानुबंध नहीं रखते हैं।

११. शत्रु और मित्र में समभाव रखने वाले, पंचेंद्रिय विषयों का वर्जन करने वाले गुणरत्नों के भंडार सभी संतों में शिरोमणि हैं।

१२. माया, ममता, चार कषाय तथा चार विकथा का वर्जन करते हुए समता रस का पान करते हैं।

◆

दुहा

१. भरत निरंद घर छोडनें, लीधो संजम भार।
त्यां पेंहिली वाणी वागरी, त्यां प्रतिबोध्या दस हजार।।

२. दस हजार राजां भणी, दीधो संजम भार।
सर्व सावद्य पचखाय नें, कीया मोटा अणगार।।

३. आचार सीखाए पडपक कीया, पछें कीयों तिहां थी विहार।
ते किण विध विचर गया मोख में, ते सुणजो विसतार।।

ढाळ : ७२

(लय : धिन धिन जंबू सांम नें)

धिन धिन भरत जिणिंद नें।।

१. दस सहंस अणगार सहीत सूं, राज सभा थकी ऊठ हो मुणिंद।
तिण ठाम थकी आघा नीकल्या, देइ सगलां नें पूठ हो मुणिंद।

२. दस सहंस साधा सूं परवऱ्या थका, आया वनीता नगर मझार हो।
वनीता राजध्यांनी तेहनें, मध्यो मध्य थई तिण वार हो।।

३. वनीता राजध्यांनी थी नीकल्या, चाल्या जिणपद देस मझार हो।
वनीता सहीत राज रिध सर्व नी, ममता नही राखी लिगार हो।।

४. एक भरत जी नें समझ्यां थकां, हुवों घणों उपगार हो।
पेंहली वाणी में समझावीया, राजांन दस हजार हो।।

५. जिहां जिहां भरत जी विचरीयां, तिहां तिहां हूवों घणों उपगार हो।
हुइ वधोतर जिण धर्म री, जनपद देस मझार हो।।

दोहा

१. भरत नरेंद्र ने गृह का त्याग कर संयम ग्रहण कर लिया। उन्होंने अपने पहले प्रतिबोधन में ही दस हजार व्यक्तियों को प्रतिबोध दे दिया।

२. दस हजार राजाओं को सर्व सावद्य योग का त्याग करवा कर उन्हें संयम-भार देकर बड़े अणगार बना दिए।

३. आचार की शिक्षा देकर उनको परिपक्व बनाकर वहां से विहार किया। वे किस प्रकार विहरते हुए मोक्ष पहुंचे, इसका विस्तार सुनें।

ढाळ : ७२

भरत जिनेन्द्र धन्य-धन्य है।

१. सव परिजनों को छोड़कर दस हजार अणगारों सहित राज्यसभा से उठकर आगे चले।

२. दस हजार मुनियों से परिवृत्त होकर विनीता नगरी राजधानी के बीचों-बीच से निकले।

३. विनीता राजधानी से निकलकर जनपद-देशों की ओर चले। विनीता सहित राज्य-ऋद्धि के प्रति उनके मन में किंचित् भी ममता नहीं है।

४. एक भरतजी के प्रतिबुद्ध होने से बहुत बड़ा उपकार हुआ। पहली देशना में उन्होंने दस हजार राजाओं को प्रतिबोध दे दिया।

५. भरतजी ने जहां-जहां विचरण किया वहां सघन उपकार हुआ। जनपद-देशों में जिनधर्म का विस्तार हुआ।

६. सासन श्री रिषभदेव रो, भरत जी दीपायों ठांम ठांम हो।
घणा जीवां नें तारीया, हलूकर्मी जीवां नें गांम गांम हो।।

७. उगे उगे नें उगीया, त्यां कीयों अतंत उद्योत हो।
रिषभदेवजी रा कुल मझे, कीधो दिन दिन इधिकी जोत हो।।

८. लोकीक लेखें रिषभ जिणंद रे, भरतजी हूआ सपूत हो।
धर्म लेखें पिण सपूत छें, त्यां सासण दीपायो अद्भूत हो।।

९. सुखे समाधे विहार करता थका, करता थका उपगार हो।
आउखों नेडों आयो जांणनें, करें संथारा री त्यार हो।।

१०. अष्टापद पर्वत तिहां आवीया, तिण उपर चढीया तिण वार हो।
मेघ घन सिला रलीयांमणी, पुढवी सिला श्रीकार हो।।

११. ते पुढवी सिला पडिलेहनें, तिण उपर बेसें तिण वार हो।
च्यारूं आहार भरत जी पचखनें, कीधो पादुगमन संथार हो।।

१२. आउखा रो काल अणवांछता, भरत जी केवलग्यांनी ताहि हो।
हिवें गणती कहूं त्यांरा वरस री, ते सांभलजों चित्त ल्याय हो।।

१३. सितंतर लाख पूर्व लगें, रह्या कुमारपणें ग्रहवास हो।
एक सहंस वरस लगें रह्या, मंडलीक राजापणें तास हो।।

१४. एक सहंस वरस उणा पणें, छ लाख पूर्व लग जांण हो।
चक्रवत पदवी भोगवी, छ खंड में वरती आंण हो।।

१५. एक लाख पूर्व लगें, पाली समण परजाय हो।
कांयक उणा लाख पूर्व लगें, केवल पर्याय पाली ताहि हो।।

१६. सर्व आउखों भरत जी तणो, चोरासी लाख पूर्व जांण हो।
एक मास तणों संथारो करे, त्यां त्याग दीयों भात पांण हो।।

६. ऋषभदेव के धर्मशासन को भरतजी ने स्थान-स्थान पर उद्दीप्त किया। गांव-गांव में अनेक हलुकर्मी जीवों को तार कर उनका उद्धार किया।

७. उन्होंने उदितोदित रूप से सघन उद्योत किया। ऋषभदेवजी के कुल में दिन-प्रतिदिन अधिकाधिक ज्योति जगाई।

८. लौकिक दृष्टि से तो भरतजी ऋषभ जिनेंद्र के सपूत थे ही, पर धर्म की दृष्टि से भी सपूत है। उन्होंने शासन की अद्‌भुत प्रभावना की।

९. सुख-समाधिपूर्वक विहार करते हुए लोकोपकार करते हुए आयुष्य निकट आया जानकर संथारे की तैयारी करने लगे।

१०,११. अष्टापद पर्वत पर चढ़कर मेघघन नामक श्रीकार, मनोरम पृथ्वी शिला का प्रतिलेखन कर उस पर बैठकर चारों आहार का प्रत्याख्यान कर पादोपगमन संथारा कर दिया।

१२. केवलज्ञानी भरतजी मरने की वांछा से रहित थे। अब मैं उनके वर्षों की गणना कर रहा हूं। सब चित्त लगाकर ध्यानपूर्वक सुनें।

१३. सित्तर लाख पूर्व तक गृहस्थ जीवन में कुमारपद के रूप में रहे। एक हजार वर्ष तक मंडलीक राजा के रूप में रहे।

१४. छह लाख पूर्व में एक हजार वर्ष कम छह खंड में आज्ञा प्रवर्ता कर चक्रवर्ती पद का उपभोग किया।

१५. एक लाख पूर्व श्रमण-पर्याय का पालन किया उससे किंचित् कम केवल पर्याय का पालन किया।

१६. भरतजी का परिपूर्ण आयुष्य चौरासी लाख पूर्व का हुआ। अंतिम ए महीने में संथारा ग्रहण कर उन्होंने अन्न-पानी का त्याग कर दिया।

१७. श्रवण नखत्र आयां थकां, चंद्रमा साथे पांम्यां थकें जोग हो।
वेदनी आउखों नाम गोत नें, त्यांरो खय कर मेट्यों संजोग हो।।

१८. जब आउखो पूरों कीयों, काल कीयों तिण ठांम हो।
जनम मरण सर्व छेंदनें, सास्या आत्म कांम हो।।

१९. भरत जी हूआ सिध सासता, सर्व दुखां रो करे अंत हो।
तिहां सुख अनोपम पांमीया, त्यां पूरी मन री खांत हो।।

२०. तिहां अजरामर सुख सासता, सदा अविचल रहणों तिण ठांम हो।
तीन काल रा सुख देवतां तणा, त्यांसूं अनंत गुणा छें तांम हो।।

◆

१७. श्रवण नक्षत्र के साथ चंद्र योग प्राप्त होने पर वेदनीय, आयुष्य, नाम तथा गौत्र, इन चारों कर्मों का भी क्षय कर सारे संयोगों का विनाश कर दिया।

१८. आयुष्य पूर्ण होने पर वहां कालधर्म को प्राप्त कर जन्म और मृत्यु को सर्वथा छिन्न कर अपने आत्मकार्य को सिद्ध किया।

१९. सर्व दुःखों का अंत कर भरतजी शाश्वत सिद्ध हो गए। वहां अनुपम सुखों को प्राप्त कर अपनी मनोकामना पूरी कर ली।

२०. वहां अजरामर शाश्वत सुख हैं। देवताओं के तीन काल के सुखों से भी अनंत गुण अधिक हैं। वहां सदा अविचल रहना है।

◆

दुहा

१. भरत जी मोख पधारीया, आवागमण मिटाय।
यांरो पिरवार मोख कुण कुण गया, ते सांभलजो चित्त ल्याय।।

२. रिषभदेवजी मुगते गया, वळे त्यांरो पिरवार।
अंगजात बेटा बेटी पोतरा, ते सुणजों विसतार।।

ढाळ : ७३

(लय : थें तो जीव दया व्रत पालो)

१. धुरसू तों मोरादेवी माता रे, करें आठ कर्मां री घाता।
सारां पेंहली मुगत सिधाया रे, सासता सुख निश्चल पाया।।

२. श्री ऋृषभ तणा सो पूतो रे, ज्यां दीया मुगत ना सूतो।
करणी कीधी काकडाभूतो रे, सुख पांम्यां छें अद्‌भूतों।।

३. जिण माता रें कूखें आया रे, तिके सोइ मुगत सिधाया।
करणी कर कर्म निठाया रे, ते फिर पाछा नही आया।।

४. व्राह्मी नें सुंदरी हुइ बेंनों रे, त्यां पांम्यों संजम में चेनों।
वरत्यों तप तेज सवायो रे, तिण बाहूबल समझायों।।

५. साल रूंख रें साल पिरवारो रे, ज्यांरो जस फेंल्यो संसारों।
छोड दीयों कजीयों कारो रे, त्यांरो खेवों हुवें पारों।।

६. आंबा रूंख रे आंबा चाखें रे, तिणनें कोई दोष न दाखे।
जो लागें आंबा रे केरों रे, तो वात घणी दीसें गेरों।।

दोहा

१. आवागमन का निवारण कर भरतजी मोक्ष में पधार गए। इनके परिवार में भी कौन-कौन मोक्ष गया यह चित्त लगाकर सुनें।

२. ऋषभदेवजी उनके अंगजात बेटा-बेटी आदि परिवार का विस्तार इस प्रकार है।

ढाळ : ७३

१. सबसे पहले तो मोरादेवी माता आठ कर्मों को क्षीण कर मोक्ष में पधारे। शाश्वत निश्चल सुखों को प्राप्त किया।

२. ऋषभदेवजी के सौ पुत्रों ने मुक्ति से तार जोड़कर कठोर साधना कर अनुपम सुखों को प्राप्त किया।

३. जो भी मोरादेवी माता की कुक्षि में आया वह साधना कर आठों कर्मों को शेष कर मुक्ति में गया। फिर संसार में नहीं आया।

४. ब्राह्मी और सुंदरी दोनों बहनों ने संयम लेकर ही चैन लिया। उन्होंने सवाये तप-तेज का प्रयोग कर, बाहुबल को समझाया।

५. सालवृक्ष का परिवार भी शाल ही होता है। उनका सुयश संसार में फैलता है। लड़ाई-झगड़ों को छोड़ दिया उनका खेवा पार हो गया।

६. आमवृक्ष के आम ही चखने को मिलते हैं। इसमें कोई दोष नहीं कह सकता। यदि आम के कैर लगता है तो बात बहुत अन्यथा हो जाती है।

७. ज्यांरी सोभा जग में फेली रे, ते हूआ तीर्थंकर पेंहली।
ते हूआ धर्म नां धोरी रे, ते मुगत गया कर्म तोडी।।

८. वळे आठ भरतजी रा पाटो रे, ते पिण मुगत गया कर्म काटों।
ते पिण इण विध ध्यांए ध्यांनों रे, उपजायों केवलग्यांनों।।

९. त्यां तो सारीया आत्म कांमों रे, त्यांरा जूआ जूआ छें नामों।
आदितजस महाजस तांमो रे, अतिबल नें महाबल नांमों।।

१०. ततवीर्य नें कणवीर्य रे, त्यां पिण कीधी घणी धीर्ज।
दंडवीर्य नें जलवीर्य नांमों रे, त्यां पिण सार्या आतम कांमों।।

११. ए आठ पाट भरतजी रा जांणो रे, आठूंइ गया निरवांणो।
भरतजी जिम ध्याया ध्यांनों रे, उपजाए केवलग्यांनों।।

१२. नवमें पाट हूवों भारी कर्मों रे, तिण जांण्यो नही जिण धर्मों।
तिण माठी मन में विचारो रे, आंगुण काढ्या महिलां मझारो।।

१३. भरतजी सूधा नव पाटो रे, सगलां रो हूवों एहीज घाटों।
सगलां दीयों राज छिटकाइ रे, एहवी अकल इण मेंहलां में आंइ।।

१४. पूरों राज न कीधो धापो रे, ते मेंहलां तणो परतापो।
सगला भेख ले हूआ साधो रे, इण मेंहलां तणो परसादो।।

१५. रखे मोनेंइ करें खुराबो रे, तो यांनें पराय देणा सताबो।
ए उंधी अकल हीया में आइ रे, तिण दीधा मेंहल पडाइ।।

१६. अें तों पुनवंता रा छें मेंहलो रे, जिण तिणनें नही छें सेंहलों।
भरत जी पूरा पुन कीधा रे, त्यांनें तों देवतां कर दीधा।।

◆

७. ऋषभदेवजी पहले तीर्थंकर हुए। उनकी शोभा जग भर में फैली। वे धर्म के धोरी-बैल हुए। कर्मों का विनाश कर मुक्त हुए।

८. भरतजी के आठ पटधर भी कर्म काटकर मुक्ति में गए। उन्होंने भरतजी की तरह आदर्श महल में ध्यानस्थ होकर केवलज्ञान प्राप्त किया।

९,१०. उन्होंने अत्यंत धैर्य के साथ अपनी आत्मा के कार्य सिद्ध किए। उनके अलग-अलग नाम इस प्रकार हैं- १ आदित्ययश, २ महायश, ३ अतिबल, ४ महाबल, ५ तत्त्ववीर्य, ६ कर्णवीर्य, ७ दंडवीर्य तथा ८ जलवीर्य।

११. भरतजी के ये आठों ही पटधर निर्वाण में गए। भरतजी की तरह ही उन्होंने ध्यानस्थ होकर केवलज्ञान प्राप्त किया।

१२. नौवां पटधर भारीकर्मा हुआ। उसने जैनधर्म को नहीं जाना। उसके मन में बुरा विचार आया। उसने महलों में अवगुण निकाले।

१३. भरतजी से लेकर सभी नौ पाटों को यही नुकसान हुआ। सबने राज्य छोड़ दिया। इन महलों में ही ऐसी उलटी अक्ल आई।

१४. उन्होंने संतृप्त होकर राज्य नहीं किया। यह इन महलों का ही प्रताप है। सबने साधु का वेष धारण कर लिया यह भी इन महलों का प्रसाद है।

१५. कहीं ये मुझे भी खराब न कर दें? इसलिए इन्हें शीघ्र गिरा देना चाहिए। यह उलटी अक्ल हृदय में आई। इसलिए उसने महलों को गिरा दिया।

१६. ये महल तो पुण्यवानों को ही प्राप्य हैं। जिस किसी को ये सहज नहीं मिल सकते। भरतजी ने पर्याप्त पुण्य किया था। इसलिए देवताओं ने उन्हें ये महल बनाकर दिए।

◆

दुहा

१. जात वंस त्यांरो निरमलो, ते प्रसिध लोक वदीत।
चारित लीधों चूंप सूं, आराध्यो रूडी रीत।।

ढाळ : ७४

(लय : धिन प्रभु राम जी)

धिन प्रभू आदि जी, धिन त्यांरा साध जी।।

१. श्री आदेसर सासन वरतें, ऋृषभशेण गणधार बे।
त्यांरा सासन माहे हूआ मुनीवर, भरत मोटा अणगार बे।

२. ऋृषभशेण आदि दे सगला, चोरासी गणधार बे।
सहंस चोरासी साध मुनीसर, हूआ मोटा अणगार बे।।

३. त्यांमें वीस सहंस मुनी केवल उपाया, करे करमां रो सोख बे।
ते छुटा संसार दावानल थी, जाय विराज्या मोख बे।।

४. ब्राह्मी आदि दे वडी वडी सतीयां, अजीया हुइ तीन लाख बे।
ते गुणसागर गुणां री आगर, त्यांरी दीधी तीर्थंकर साख बे।।

५. त्यांरी चालीस सहंस अर्जीया उतकष्टी, त्यां उपजायो केवलग्यांन बे।
ते कर्म खपाए मुगते पोहती, ध्याए निरमल ध्यांन बे।।

६. शेष साध साधवीयां सगली, श्रावक श्रावका जांण बे।
ते करणी कर गया देवलोके, ते वेगा जासी निरवांण बे।।

७. एक लाख पूर्व लग मारग दीपायो, ते आदेसर आप बे।
तिरण तारण श्री प्रथम जिनेसर, मेट्यों घणां रो संताप बे।।

दोहा

१. उनका जाति-वश निर्मल था। लोक प्रसिद्ध था। उन्होंने उत्साह से चारित्र लिया और सम्यक् रूप से उसकी आराधना की।

ढाळ : ७४

आदि प्रभु धन्य हैं। उनके साधु धन्य हैं।

१. श्री आदीश्वरजी के शासन में ऋषभसेन गणधर हुए। उनके शासन में भरत बड़े अणगार हुए।

२. उनके ऋषभसेन आदि चौरासी गणधर हुए। चौरासी हजार बड़े-बड़े अणगार हुए।

३. उनमें से बीस हजार मुनियों ने कर्मों को सोख कर केवलज्ञान प्राप्त किया। वे संसार रूपी दावानल से छूटकर मोक्ष में विराजमान हो गए।

४. ब्राह्मी-सुंदरी आदि तीन लाख बड़ी-बड़ी आर्याएं हुईं। वे गुण की सागर, गुण की आगर थीं। तीर्थंकरों ने उनकी साक्षी दी।

५. उनमें से चालीस हजार से अधिक आर्यिकाओं ने केवलज्ञान प्राप्त किया। वे निर्मल ध्यान ध्याकर कर्मों को क्षय कर मुक्ति में पहुंचीं।

६. शेष सारे साधु-साध्वियां, श्रावक-श्राविकाएं साधना कर देवलोक गए। वे शीघ्र ही मुक्ति में जाएंगे।

७. आदीश्वरजी ने स्वयं एक लाख पूर्व तक मार्ग का उद्योत किया। वे स्वयं तिरने वाले तथा दूसरों को तैराने वाले प्रथम तीर्थंकर थे। उन्होंने अनेक लोगों का संताप मिटाया।

८. श्री आदेसरजी मुगत गयांनें, पांच लाख पूर्व हुआ जांण बे।
जब भरत नरिंद आरीसा भवण में, पांम्यों केवल नांण बे।।

९. एक लाख पूर्व वर्सां लग, भरत दीपायों जिण धर्म बे।
अें पिण अनेक जीवां नें तारे, मुगत गया तोडे कर्म बे।।

१०. श्री आदेसर तेंहनें लारें, मोख गया असंख्याता पाट बे।
सासता सुखा में जाय विराज्या, कर्म तणी जड काट बे।।

११. चिरत कीयो भरतेसर केरों, जंबूदीप पंनती सूं जांण बे।
वळे कथा अनुसारें कह्यों छें, जे ग्यांनी वदे ते प्रमांण बे।।

१२. भव जीव समझावण काजें, जोड कीधी माधोपुर मझार बे।
संवत अठारे वरस अडतालें, आसोज सुदि बीज गुरवार बे।।

१३. रिणत भमर किला री तलहटी, ते देस ढुंढाड में जांण बे।
तिहां नवो सहर माधोपुर वाजें, जोड कीधी छें तेह ठिकांण बे।।

◆◆

८. श्री आदीश्वर के मुक्ति जाने के पांच लाख पूर्व बाद भरत नरेंद्र ने आदर्श भवन में केवलज्ञान प्राप्त किया।

९. भरत ने एक लाख पूर्व वर्षों तक जैनधर्म का उद्योत किया। ये भी अनेक जीवों को तैरा कर कर्मों का नाश कर मुक्ति में गए।

१०. श्री आदीश्वर की परंपरा में उनके असंख्य उत्तराधिकारी मोक्ष में गए। कर्मों की जड़ को काटकर शाश्वत सुखों में विराजमान हुए।

११. मैंने भरत चरित्र की रचना जंबूद्वीप प्रज्ञप्ति के आधार पर तथा कथा के अनुसार की है। प्रमाण वही है जिसे केवलज्ञानी जानते हैं।

१२. भव्य-जीवों को समझाने के लिए मैंने यह रचना माधोपुर में संवत् १८४८ की आसोज बदी २, गुरुवार को की है।

१३. जहां मैंने यह रचना की वह माधोपुर ढूंढाड़ देश (क्षेत्र) में रणतभंवर किले की तलहटी में बसा हुआ है। वह नया शहर कहलाता है।

◆◆

आचार्य भीखण : एक परिचय

*** जन्म**

संवत् १७८३ आषाढ़ शुक्ला १३

मंगलवार, कंटालिया (राजस्थान)

सन् १७२६, जुलाई १, सोमवार

*** द्रव्य दीक्षा**

संवत् १८०८, मार्गशीर्ष कृष्णा १२

बगड़ी (राजस्थान)

सन् १७५१, नवम्बर ३, रविवार

*** बोधि प्राप्ति**

संवत् १८१५, राजनगर (राजस्थान)

सन् १७५८

*** अभिनिष्क्रमण**

संवत् १८१७, चैत्र शुक्ला ६

बगड़ी (राजस्थान)

सन् १७६०, मार्च २३, रविवार

*** भाव दीक्षा**

संवत् १८१७, आषाढ़ पूर्णिमा

केलवा (राजस्थान)

सन् १७६०, जून २८, शनिवार

*** प्रथम मर्यादा पत्र**

संवत् १८३२, मिगसर कृष्णा ७

बिठोड़ा (राजस्थान)

सन् १७७५, नवम्बर १४, मंगलवार

*** अन्तिम मर्यादा पत्र**

संवत् १८५९, माघ शुक्ला ७

सन् १८०३, जनवरी २९, शनिवार

*** महाप्रयाण**

संवत् १८६०, भाद्रपद शुक्ला १३

सिरियारी (राजस्थान)

सन् १८०३, अगस्त ३०, मंगलवार

*** ग्रन्थ रचना**

३८ हजार पद्य प्रमाण

आचार्य भिक्षु की रचनाएं

- श्रद्धा री चौपई
- अनुकंपा री चौपई
- नवपदार्थ
- आचार री चौपई
- शील री नवबाड़
- विरत अविरत री चौपई
- निन्व री चौपई
- मिथ्याती री करणी री चौपई
- निषेषां री चौपई
- जिनाग्या री चौपई
- पोतियाबंध री चौपई
- कालवादी री चौपई
- इन्द्रियवादी री चौपई
- परजायवादी री चौपई
- टीकम डोसी री चौपई
- एकल री चौपई
- मोहणी करमबंध री ढाल
- दशवें प्राछित री ढाल
- जिण लखणा चारित आवे न आवे तिण री ढाल
- सूंस भंगावण रा फल री ढाल
- गणधर सिखावणी
- संघकाजे चक्रवर्ती री ढाल
- सांमधर्मी सांमद्रोही री ढाल
- श्रावक ना बारे व्रत
- समकित री ढालां
- उरण री ढाल
- दान री ढालां
- वैराग री ढालां
- जुआ री ढाल
- तात्त्विक ढालां
- ब्याहुलो
- विनीत अविनीत री चौपई
- विनीत अविनीत री ढाल
- अविनीत रास
- निन्व रास
- भरत री चौपई
- जम्बू चरित
- धन्ना अणगार री चौपई
- गोशाला री चौपई
- चेड़ा कोणक री सिध
- चेलणा चोढ़ालियो
- सुदर्शन चरित
- नंद मणिहारो रो बखांण
- सास बहू रो चोढालियो
- तामली तापस रो बखांण
- उदाई राजा रो बखांण
- सुबाहु कुमार रो बखांण
- जिणरिख जिनपाल रो बखांण
- मृगा लोढ़ा रो बखांण
- सकडाल पुतर रो बखांण
- तेतली प्रधान रो बखांण
- पुंडरिक कुंडरिक रो बखांण
- उंबरदत्त रो बखांण
- द्रोपदी रो बखांण
- मल्लीनाथ रो बखांण
- थावच्चापुतर रो बखांण
- लिखतां रो संग्रह
- भिक्षु पृच्छा
- तीन सौ छह बोलां री हुण्डी
- १८१ बोलां री हुण्डी
- जीवादि पदार्थ ऊपर पांच–भावां रो थोकड़ो
- उदय–निष्पन्नादिक रा बोलां ऊपर पांच भावां रो थोकड़ो
- तेरा द्वार
- खुली चर्चा प्रश्नोत्तर
- पांच भावां री चरचा
- जोगां री चरचा
- आश्रव संवर री चरचा
- जिनाज्ञा री चरचा
- कालवादी री चरचा
- इन्द्रियवादी री चरचा
- द्रव्यजीव भावजीव री चरचा
- निषेपां री चरचा
- टीकम डोसी री चरचा

विजा चरणं पमोक्खो
जैन विश्व भारती लाडनूं

ISBN - 81-7195-177-2
9788171951772
₹ 300/-